

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180169

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/A69D Accession No. H245c

Author 'आरिंगपूडि' (ए. रमेश चौधरी)

Title दूर के दाल 1957

This book should be returned on or before the date last marked below.

दूर के ढोल

दूर के ढोल

‘आरिगपूडि’

सर्वोदय साहित्य मंदिर,
कोठी, (बसस्टेण्ड,) हेरराबाद ४.



राजकमल प्रकाशन
दिल्ली इलाहाबाद अम्बई

प्रकाशक :

राजकमल पब्लिकेशन्स लिमिटेड

दिल्ली, बम्बई, इलाहाबाद, पटना, मद्रास

प्रथम संस्करण, १९५७

मूल्य ^{चार रुपये} ~~तीन रुपये बास्ड आने~~

मुद्रक :

श्री गोपीनाथ सेठ,
नवीन प्रेस, दिल्ली

उन युवतियों के लिए, जो श्रीमती रमा
नहीं बनना चाहतीं

तद्य !

: १ :

आज क्लब में रौनक थी। शोर-शराबा था। नाच-गाना जोर-शोर से हो रहा था। पाउडर, पोमेड, इत्र, तम्बाकू, शराब, पकवान की गन्ध से हॉल महक-सा रहा था। खुशबू और बदबू ने मिलकर एक नई बू पैदा कर दी थी।

सर्दी के दिनों में भी वातावरण में गर्मी थी, उत्सुकता और उत्साह था। यह असाधारण अवसर था।

असाधारण अवसर के लायक वहाँ भीड़ भी थी। जिन कुर्सियों में अवसर सिवाय खटमल के और कोई न बैठते थे, वे आज खोजने पर भी नहीं मिलती थीं। कुर्सियों के अभाव में कुछ लोग खड़े थे और कुछ बरामदे में धुआँ उड़ाते-उड़ाते, गप्पें मारते-मारते मटरगस्ती कर रहे थे। स्त्रियाँ अलबत्ता, सब कुर्सियों पर बैठी हुई थीं। सारा-का-सारा हॉल खचाखच भरा हुआ था।

बड़े लोगों की क्लब थी। उनके समाज में स्त्री की चाहे कुछ भी कीमत हो, कद्र ज्यादा होती है। नई सभ्यता का कुछ ऐसा ही तकाजा है। वे मर्दों से एक कदम आगे ही रहती हैं। उनके लिए 'पुरुषों से समानता' एक घिसा हुआ नारा है—पुराने ज़माने की पिटी-पिटाई पुरानी बात।

सभी सज-धजकर आई हुई थीं, बन-ठनकर। चेहरों पर पाउडर की मोटी परत लगी हुई थी। कन्धे लगभग नंगे ही थे। रंगे होंठों के

बीच से कई धुआँ भी उगल रही थीं। आदमियों से हिल-मिलकर, सट-सटे इधर-से-उधर तितलियों की तरह घूम-फिर रही थीं।

लगातार शराब का दौर चल रहा था और नाचने के शौकीन स्त्री और मर्द हाथ-से-हाथ मिलाए, पैर-से-पैर, छाती-से-छाती, तेज़ संगीत के साथ-साथ हॉल में नाच के चक्कर लगा रहे थे। रह-रहकर तालियाँ बजतीं। कभी-कभी किसी मज़ाक पर अट्टहास होता।

लोग तीन-तीन चार-चार के भुण्डों में बैठे हुए थे और हर भुण्ड दूसरे भुण्ड को ताक रहा था, मुस्कराते-मुस्कराते पैनी नज़र से, धुएँ के परदे में से। गुलछरें उड़ाने में होड़-सी हो रही थी।

वातावरण में मस्ती थी।

३१ दिसम्बर की गुज़रती रात। ग्यारह का वक़्त। लोग नये वर्ष के अवतरण की प्रतीक्षा कर रहे थे। नाच और संगीत का आयोजन स्वागत के लिए किया गया था। शाम के पाँच बजे से लगातार नाच चल रहा था। सैकड़ों शराब की बोतलें खाली हो चुकी थीं। समय के साथ-साथ उनकी खुशी भी बढ़ती जाती थी। आखिरी घंटा था, लोग नाचते-नाचते घड़ी पर भी नज़र दीड़ते। घड़ी की सुइयाँ उन्हें स्थिर-सी लगतीं। वे किसी अपेक्षित क्षण की इन्तज़ारी में थे, नव वर्ष की प्रथम घड़ी को देखने के लिए उत्सुक थे—शायद और किसी चीज़ की भी।

बाहर पेड़ों के नीचे पचासों कारें खड़ी थीं—बड़ी-छोटी, नई पुरानी। पेड़ों से कुछ दूर एक छोटी-सी नदी डरती-डरती लड़खड़ाती, समुद्र की ओर जा रही थी। कुछ दूर पूरब में, सुन्दर पुल के पार समुद्र अपनी ही लय में गरज रहा था, उन्मत्त चाँद से टक्कर ले रहा था। उसे बढ़ते, बदलते समय की परवाह नहीं थी। खिली, ठण्डी चाँदनी। कँपाने वाली हवा झटके के साथ चल रही थी।

और कुछ ड्राइवर, सूती कपड़े पहने अपनी-अपनी कारों के नज़दीक, बीड़ी के धुएँ से अपने को सेक-से रहे थे। खाली पेट—फटे हाल। कई

वर्दी में थे। कपड़ों के रंग और काट-छाँट कुछ भी हो, सब एक ही वर्ग के थे। सबका अपने मालिकों से ड्राइवर का ही रिश्ता था।

नया वर्ष आ रहा है तो अपनी बला से आये। उनका बस चलता तो सोते-सोते उसका स्वागत करते। वर्ष नया हो या पुराना, उनके लिए एक-सा ही है। उनके जीवन में एक ही मौसम है और वह है भादों का मौसम। मालिक मज़ा मार रहे हैं तो मारें। उनको इसकी परवाह न होती, अगर उनके बीबी-बच्चे घर में उनकी इन्तज़ारी नहीं कर रहे होते, अगर उनका पेट भी भरा होता।

उनके ठंडे वातावरण में बेबसी थी।

पर हॉल के अन्दर एक स्त्री भी थीं जिनके लिए नाच-गाना, तड़क-भड़क, ठाठ-बाट सब फीके लग रहे थे। उनका दिल मचला हुआ-सा था। अनमनी-सी लगती थीं। हो सकता है, हर साल के ये मज़े-मज़ाक एक जैसे ही लगते थे। नया बरस आता हो तो आये, पर उन्हें लोगों की खुशी में शायद कोई नई चीज़ नज़र नहीं आ रही थी। वे शायद ऊब-सी गई थीं। मुमकिन है वे आदतन आ गई थीं।

वे एक कोने में बँठी हुई थीं। पास में कोई अघेड़ विधवा बैठी थीं, जो उस समाज में मिल-जुल नहीं पा रही थीं। पढ़ी-लिखी लगती थीं। धनी घराने की तो थीं ही। सम्भवतः तमाशा देखने के लिए आ गई थीं।

रमा चौधरी—यही उनका वर्तमान नाम है—कभी-कभी विधवा से बात कर लेती थीं।

“आप क्या यहीं की रहने वाली हैं? कहीं, लगता है, देखा है?”
रमा ने विधवा से परिचय कर लेने के उद्देश्य से पूछा।

“नहीं, मैं ऊटी की रहने वाली हूँ।”

“आप इन क्रिस्मस के दिनों में ऊटी छोड़कर कैसे चली आईं—
वहाँ तो ठीक इस वक़्त क्रिस्मस का मौसम होगा—ठण्डी-ठण्डी हवा,
लम्बी-लम्बी रातें।”

“मद्रास में मेरे लड़के को कुछ काम था....।”

अभी विधवा कुछ कह ही रही थीं कि रमा ने रंगे होंठ चपटे कर, बनावटी मुस्कराहट से कहा, “काम तो क्या काम का बहाना।” पर विधवा हँसी नहीं। वे स्थिर हो नाचने वालों की तरफ़ देख रही थीं, जैसे रमा की बात सुनी ही न हो, अगर सुन भी ली हो तो पसन्द न हो।

“नहीं, नहीं, मेरा मतलब...माफ़ कीजिए,” रमा ने सँभलते हुए कहा।

विधवा चुप रहीं।

“आपके लड़के कौन हैं?” रमा ने पूछा।

“वह जो हॉल के बीचों-बीच नाच रहा है...राजन। हम लोगों की काफी एस्टेट है ऊटी में।”

“उनके साथ नाच कौन रही है? पत्नी हैं क्या?”

“नहीं तो, उसकी कोई जान-पहचान की है।” विधवा के चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ गईं। एक क्षण उठने को तैयार हुईं, फिर अपनी सफेद जार्जेट की साड़ी समेटकर बैठ गईं।

“वे शायद मद्रास में ही रहती हैं?”

“हाँ।”

रमा मुस्कराई। मुस्कराहट स्वाभाविक थी, जैसे उन्हें मालूम हो गया हो कि राजन ऊटी छोड़कर मद्रास क्यों आया हुआ है।

“क्यों, उनकी पत्नी नहीं है?”

“है क्यों नहीं...मगर, है क्यों? है क्यों नहीं...मायके गई हुई है।” यह कह विधवा भट चुप हो गई, मानों कोई बात अनजाने ही मुख से निकल गई हो।

“मायका मद्रास में है क्या?”

“नहीं तो, वह बेल्लोर के आस-पास की है, गाँव में रहती है। ज़मींदारी है।”

रमा फिर मुस्कराई, जैसे इस बार मालूम कर लिया हो कि राजन

और उसकी पत्नी की आपस में नहीं बनती थी राजन नये खयालातों का नौजवान लगता था। सभ्य, सुशिक्षित और शायद वह पुराने जमाने की गहनों से लदी कोई गाँव की लड़की होगी। दोनों में, मुमकिन है, तीन और छः का रिश्ता हो।

“आपको यह नाच कैसा लग रहा है ?”

“होटल में कुछ काम नहीं था। लड़का बुला लाया, चली आई। यह सब वाहियात है। आपको नाच कैसा लग रहा है ?”

“नाच तो क्या, बर्बरता का प्रदर्शन है—हममें और ईव में क्या फर्क है? कहा जाय तो शायद ईव ही अच्छी थी।” रमा ने आँखें तिरछी कर थोड़ी मुस्कान के साथ गम्भीरता का अभिनय करते हुए कहा।

विधवा भी मुस्कराई, जैसे किसीने उन्हींके मन की बात कह दी हो। “भला यह भी क्या सभ्यता है कि जिसके साथ जी में आया नाचना शुरू कर दो। लड़का कहता है, यह नई सभ्यता है। दुनिया के साथ रहने में ही खैरियत है। जहाँ भीड़ चल पड़ी वही रास्ता है। हमारे जमाने में भी नाच-गाने होते थे, पर तब हिन्दुस्तानियों को ऐसी बीमारी नहीं होती थी। अगर इसके पिता आज……”

“आप उनसे फिर कह क्यों नहीं देती ?”

“क्या कहूँ ? गोदी का बच्चा है क्या ? शूदीशूदा है। कहती भी हूँ तो सुनता थोड़े ही है। कहता है—नई सभ्यता है, फ़लाना है, ढिमका है। मैं भी चली आई, देखूँ तो इस नई सभ्यता को। भगवान् बचाए इस सभ्यता से।”

“आप ठीक ही कहती हैं,” रमा ने कहा और सामने पड़े हुए गिलास से शराब का एक घूँट पी लिया। सिगरेट सुलगाकर आराम से घड़ी की तरफ़ देखने लगीं।

रमा की उम्र पैंतीस-चालीस वर्ष की होगी, पर बीस-बाईस की ही लगती हैं। पतली, लचकीली, एकदम नाजुक। बहुत ही खूबसूरत। रंग न काला, न गोरा। कली-सा चेहरा, नुकीली ठुड़ी। पतले होंठ,

लम्बी नाक, बड़ी-बड़ी आँखें, धनुष-सी भौंहें, उभरा माथा, पीछे की ओर मुड़े हुए, कटे घुँघराले बाल और काले बालों में लटकते सफेद-सफेद चमेली के फूल । क्रद करीब पाँच फुट का ।

बड़ी महीन साड़ी पहन रखी थी । तंग चोली । हाथ नंगे, पेट का आधा हिस्सा नंगा । बगल में बड़ी-सी सफेद थैली । पास में सिगरेट का डिब्बा । पैरों पर पैर धरे, अकेली नाच देखती-देखती शायद कुछ सोच रही थीं ।

धूप हो पानी, सर्दी हो गर्मी, वह हर शाम, जब मद्रास में रहती हूँ, क्लब चली आती हूँ और घण्टों बैठी रहती हूँ...रात के बारह बजते-बजते उनकी और उनकी सहेलियों की चौकड़ी उठती है ।

उन्होंने इसी क्लब में कितने ही नये सालों को धूमधाम के साथ आते-जाते देखा है । उन्होंने भी बारह बजने के इन्तज़ार में दसियों के साथ नाच किया है, दर्जनों गिलास शराब पी है ।

पर वह जमाना अब गुज़र गया था । वे अकेली बैठी हुई थीं । जान-पहचान वाले आते, मुस्कराते, नमस्ते करते और चले जाते । पास कोई न बैठता, बैठता भी तो शिष्टाचार के नाते दो-चार मिनट इधर-उधर की बातें करता और चला जाता । वे अब क्लब की हँसती-खेलती केन्द्र-बिन्दु नहीं थीं । आखिर मुरझाते फूल पर भूखे भौरे भी तो नहीं मेंडराते ।

शराब का गिलास खाली हो गया था । पास की बोतल से उन्होंने थोड़ी-सी शराब फिर उँडेल ली । सिगरेट सुलगाकर...आह के साथ कहा, "मई ग्रुड हेवन्स ।" मुख के सामने हाथ रख अँगड़ाई लेने लगीं ।

उनके मन में सालों पुरानी एक घटना खोल रही थी । तब वह रमा चौधरी नहीं थीं, शरीन थीं । कॉलेज की शौकीन सुन्दर लड़की । बीस के करीब उम्र थी । इण्टरमीडियेट में पढ़ती थीं । शहर के मन-चले नौजवान अक्सर इनके बारे में कानाफूसी करते थे । यह कॉलेज के नाटक, खेल, तमाशे, सभी में दिलचस्पी लेती थीं । इण्टर में ही तीन

साल लगा दिए थे ।

जवानी के ज्वार में थीं ।

जंग के दिन थे । जिन्दगी में कुछ ऐसी तेजी-सी आ गई थी, मानों वह किसी भरने के नजदीक हो और नीचे गिरने के लिए उद्यत हो । ब्रिटिश राज्य था । मद्रास शहर में गोरे सिपाही ऐसे जमा हुए थे जैसे कूम नदी (मद्रास शहर की एक नदी) के परली तरफ़ ही लड़ाई चल रही हो ।

उनके विनोद के लिए हर रोज़ कोई-न-कोई नाटक, नाच, गाने वगैरह का इन्तज़ाम किया जाता । उनके आतिथ्य के लिए दसियों समितियाँ बनाई गई थीं । लाखों रुपया खरचा गया । सैकड़ों राजभक्त स्त्रियों ने उनको खुश रखने के लिए वह काम किया जो उन्होंने खुद अपने घरों में नौकरों को सौंप रखा था । गोरों की सेवा को ही उन्होंने सामाजिक सेवा समझा हुआ था ।

शरीन भी उनमें से एक थी ।

उस दिन नये साल का स्वागत हो रहा था । पर तब इतनी रोशनी और रौनक न थी । भीड़ जरूर ज़्यादा थी । सब खिड़कियों को बन्द कर दिया गया था । हॉल के अन्दर सिगरेट और शराब की बू के कारण घुटन-सी पैदा हो गई थी । तब इत्र वगैरह भी न मिलते थे । फौजी, जिनको कल का भरोसा नहीं था, उसी रात अपनी जिन्दगी से सब-कुछ वसूल कर लेना चाहते थे ।

शरीन भी किसी फौजी दोस्त के साथ आई थी । कइयों के साथ नाचकर उसने अपनी राजभक्ति दिखाई थी । और न मालूम उसको लेकर कितनों ही में तू-तू मैं-मैं हो गई होगी । बैरकों में तो शायद हाथा-पाई भी होगी ।

जब नया साल आया तो रात का एक बज चुका था । मद्रास शहर, जो आज बिजली की रंग-बिरंगी रोशनी में चमक रहा है, तब अंधेरे में गुम-सा लगता था । फौजी दोस्तों ने उसको फौजी कार में से कॉलेज के

फाटक के सामने उतार दिया था। शरीन को फौजियों ने दीवार पर चढ़ाया और वह दीवार फाँद गई।

शराब के नशे में थी। होस्टल में जाते ही किवाड़ धड़ाधड़ खट-खटाने लगी। जोर-जोर से कुछ बक रही थी। लड़कियाँ डर के मारे चिल्लाने लगीं—“भूत-भूत”। मेट्रन भागी-भागी आई। शरीन से पूछ-ताछ की, पर उसने झट पाँचों उँगलियाँ मेट्रन के गाल पर जमा दीं।

नये वर्ष के पहले दिन शरीन को कॉलेज से बाहर कर दिया गया। नये वर्ष के साथ उसका नया जीवन शुरू हुआ।

रमा चौधरी जरा चौकीं, अपनी सिगरेट से राख छिटकी, शराब का एक घूँट और पी लिया। पैरों को इधर-उधर हिलाने लगीं। संगीत का लय ऊपर उठता चढ़ता जाता था। वे बैठी-बैठी ही शायद यह अनुभव करना चाहती थीं कि वे भी नाच रही थीं।

फिर वे कुछ उद्विग्न-सी हो उठीं। उनके मन में कुछ उथल-पुथल हो रही थी और वे शायद उसे सह न पाती थीं।

कुर्सी से उठीं और पास वाली मेज के पास चली गई। वहाँ अब्राहम किसी नवयुवती के साथ बैठे हुए थे। रमा चौधरी की उनसे पुरानी जान-पहचान थी। शहर के अच्छे मशहूर व्यापारी थे। कितनी ही कम्पनियों के डायरेक्टर थे। सिर अण्डे के समान चिकना—बाल सब उड़ गए थे। पचास वर्ष की उम्र होगी। शराब के नशे में थे।

रमा चौधरी को उठते देख अब्राहम ने पूछा, “क्या हाल-चाल है? नाच कैसा रहा?”

“बहुत बढ़िया है। सालों से ऐसा नाच नहीं देखा। लोग तो ऐसे नाच रहे हैं जैसे साल में एक ही बार नाचने का मौका मिलता हो और भला क्यों नहीं नाचें?”

रमा चौधरी उस समाज की प्रतिष्ठित सदस्या हैं जो अपनी सम्मति व्यक्ति-व्यक्ति के साथ बदलती रहती है।

“आजकल तो तुम दिखाई ही नहीं देते?” पास बैठी स्त्री को

घूरते देख अब्राहम एकदम चुप हो गए, तनकर बैठ गए ।

“मैं तो रोज़ ही चली आती हूँ । आप ही नहीं दिखाई देते ।”

“इन मजदूरों के कारण नाक में दम आया हुआ है । कम्बख्त अपनी ज़िद के पक्के हो गए हैं । नज़र हटाई तो कामचोरी करते हैं और हम अगर आँख दिखाते हैं तो स्ट्राइक की धमकी देते हैं । रात-दिन उन्हीं के पीछे कट जाता है……हाँ भूल गया, आप इनको जानती हैं ?” अब्राहम ने परिचय कराते हुए कहा, “मिसेज़ सुशीला, आपकी तरह इनको भी घुड़दौड़ का शौक है ।”

“आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई ।”

“खुशी तो मुझे होनी चाहिए ।” रमा ने कहा ।

“आपको भी क्या घुड़दौड़ का शौक है ?”

“है तो, मगर आजकल……”

“आपकी ट्राइम्फेण्ट (घोड़े का नाम) के बारे में क्या राय है ?”

“पिछली बार तो इसने धोखा दे दिया था, पूरे तीन हजार से हाथ धोना पड़ा ।”

“मगर घोड़ा अच्छा है—कभी-कभी मूड़ी ज़रूर हो जाता है……”

वह महिला कह ही रही थी कि रमा चौधरी ने सिगरेट सुलगा ली, जैसे उनकी बातों में दिलचस्पी ही न ले रही हों । धुआँ उगलने के बहाने अपना मुँह दूसरी तरफ़ फेर लिया ।

सामने दीवार पर घड़ी थी । घड़ी में बारह बजने में तीन मिनट बाकी थे……जिस क्षण की प्रतीक्षा की जा रही थी वह अब तीन मिनट की दूरी पर ही रह गया था । नाचने वाले पहले से अधिक सटकर नाच रहे थे ।

रमा चौधरी वक़्त देखकर बेचैन-सी हो गई । अपना थैला उठाया, जैसे कुछ यकायक याद आ गया हो और झट गुसलखाने के अन्दर जा दरवाज़ा बन्द कर लिया ।

ऐसी बात नहीं कि वे मुँह-हाथ धोना चाहती हों । यह भी नहीं

कि पाउडर लगाना चाहती हों, वे भीड़ से छिपना चाहती थीं ।

नये वर्ष का स्वागत उस 'समाज' में चुम्बन द्वारा किया जाता है । स्त्री और पुरुष प्रायः इस क्षण की ग्यारह महीने याट जोहते हैं ।

रमा चौधरी को डर था कि उनका चुम्बन शायद कोई न करे और दूसरों को वे चुम्बन करते स्वयं देख नहीं पाती थीं ।

इसीलिए अपने को गुसलखाने में बन्द कर लिया था । हॉल से आते हुए होहल्ले ने नये वर्ष के आगमन की सूचना उन्हें वहीं दे दी थी ।

: २ :

रमा चौधरी आईने के सामने खड़ी अँगड़ाई ले रही थीं । हाथ में शराब का एक छोटा गिलास था । खुमार तोड़ रही थीं । आँखें सूजी हुई, लाल-लाल हो रही थीं । चुँधिया-सी गई थीं । रात के नववर्ष के उल्लास ने उन्हें सेवरे उदास पाया ।

पास गद्देदार रेशमी बिस्तर था । मसहरी तनी हुई थी । अध-खुली खिड़की के परदे में से होती हुई सूरज की किरणें छन-छनकर आ रहा थीं ।

गिलास हाथ में लिये कुछ देर बाद वे कुर्सी पर बैठ गई । सिगरेट भी सुलगा ली थी । कभी आँखें बन्द करतीं, कभी खोलतीं और कभी सिगरेट के उड़ते धुएँ को ही देखतीं । नीचे मुँह कर बालों को अपनी लम्बी-लम्बी अँगुलियों से सँवार रही थीं ।

वे चिन्तित नज़र आती थीं । दीवार पर लगी घड़ी को देखा । दस बज रहे थे । रमा चौधरी ने उवासी लेते हुए कहा, "मई गुड हेवन्स ।" यह कहने की उनकी आदत थी, वे अक्सर साढ़े आठ बजे तक उठ जाती थीं । पर आज काफी देर हो गई थी ।

उन्होंने घंटी बजाई, फिर तुरन्त चिल्लाई, "चार्ल्स, चार्ल्स !" उनका पुराना नौकर है । जब से श्रीमती रमा चौधरी की शादी हुई है, तब से ही उनके घर में वह नौकर, बाबर्ची खानसामा, चपरासी, सभी का

काम कर लेता है। चालीस-पैंतालीस की उम्र। भैंस-सा स्याह। मोटा, भद्दा, मैला। आँखें चौबीसों घंटे लाल। कहने वाले तो इतना भी कहते हैं कि वह रमा चौधरी का दूर का रिश्तेदार है।

“चाल्स, क्या हो गया तुम्हें?” रमा चौधरी झुंझलाने लगीं। चाल्स के भागे-भागे आते ही उनकी चेहरे की शिकनें कुछ सीधी-सी पड़ गईं।

“वक्त हो गया है, चाय-पानी लाओ।”

“बहुत अच्छा, सब तैयार है।” चाल्स भागा-भागा चाय वगैरह लाकर रमा चौधरी के सामने खड़ा मुस्कराने लगा। उसके पीछे पुस्तकों की अलमारी पर किसी हव्शी औरत की मुस्कराती काली छोटी-सी मूर्ति थी। कमरे की सभी दीवारों पर रमा चौधरी की फोटो और चित्र टंगे हुए थे। कमरा सजा हुआ था। पलंग के पास ही एक तिपाई पर फोन रखा हुआ था। कमरा ऐसा साफ-सुथरा कि किसी फर्नीचर की दुकान में, लगता था, किसी ने अपना घर-बार बसा लिया हो। सब चीजें कायदे-करीने से रखी हुई थीं।

“कपड़ों पर इस्त्री वगैरह लगवा देना—आसमानी रंग की साड़ी और वह नई चोली, जो परसों सिलकर आई थी। आज घुड़दौड़ है, मालूम है? जल्दी करो वक्त हो रहा है। डेढ़ बजे ही शुरू हो जाती है।”

“मालूम है मालकिन, मुदलियार साहब ने सवेरे-सवेरे फोन भी किया था। वे आपको लेने एक बजे के करीब आ जायेंगे।”

“अच्छा,” रोटी का टुकड़ा खाती-खाती वे फोन करने लगीं।

“मि० मुदलियार!”

“.....”

“मैं यहाँ रमा बोल रही हूँ—विश यू बेरी हेप्पी न्यू ईयर।”

“.....”

“मैं एक बजे तक तैयार हो जाऊँगी। इन्तज़ार करूँगी, जरूर आइए—हाँ शाम के पिकनिक का क्या इन्तज़ाम हुआ?”

“.....”

“अच्छा-अच्छा,” मुस्कराते-मुस्कराते उन्होंने फोन रख दिया । अपनी ही एक फोटो की तरफ देखने लगीं । खीज गायब-सी हो गई । सिगरेट सुलगाकर आईने के सामने खड़ी हो गई ।

फिर यकायक जैसे कुछ याद आ गया हो, कुर्सी पर जा बैठीं । पूछा, “कुत्तों को खाना दिया कि नहीं....”

“आप सो रही थीं....इस वजह से.....”

“अगर मैं सो रही थी तो इसका मतलब यह तो नहीं कि कुत्ते भूखे रखे जायें । जाओ, उनके खाने-पीने का इन्तजाम करो, मैं अभी आती हूँ ।” अपनी ठंडी ऐनक लगाकर खड़ी हो गई । चार्ल्स ने उनके सामने उनकी चप्पल पहनने के लिए रख दी ।

“देखो चार्ल्स, कोई डाक वगैरह आई कि नहीं ?”

“बहुत सारी चिट्ठियाँ आई हुई हैं, नीचे के कमरे में पड़ी हैं ।”

“अपना क्लर्क अय्यर आ गया है ?”

“अभी-अभी ही आया है—आजकल तो वे देरी से ही आते हैं ।”

“ऐसी बात है ? उससे भी कह देना कि चिट्ठी-पत्री लेकर बगीचे में चला आए ।”

श्रीमती रमा चौधरी का घर मद्रास शहर में अच्छा आलीशान मकान समझा जाता है । दुमंजिला है । बीसियों कमरे हैं, यहाँ तक कि नाचने-गाने के लिए भी एक हॉल है । फर्नीचर भी बड़ा कीमती है । हर कमरे की सजावट भिन्न-भिन्न ढंग से की गई है, किसी कमरे में तरह-तरह के खिलौने हैं तो किसीमें पुस्तकें रखी हुई हैं । किसीमें गाने-बजाने का साज-सामान है । मकान के बनाने में ही करीब चार लाख रुपया खर्च हुआ था । आने-जाने वाले अँगुला दिखाकर इसकी प्रशंसा करते हैं । कई फिल्मों में भी इसकी तस्वीर ली गई है ।

मकान शहर से बाहर है। चार-पाँच एकड़ का अहाता है। चारों तरफ ऊँची दीवार है। उसकी बगल में नारियल के पेड़ हैं। सुन्दर बगीचा है। एक तरफ अलग नौकरी और कुत्तों के लिए कमरे बने हुए हैं। उसके बाद मछियारों के छोटे-छोटे भोंपड़े हैं, जो दिन-भर सुनसान लगते हैं और रात को यकायक कुछ देर के लिए जाग उठते हैं। बाद में, विशाल गरजता समुद्र है।

दुमंजिले से सूर्यास्त और सूर्योदय का दृश्य दिखाने के लिए रमा चौधरी अक्सर अपने दोस्तों को न्योता देती हैं। उन्हीं के घर में कितने ही फोटोग्राफ हैं, जिनमें सूर्योदय की पृष्ठभूमि में दुबले-पतले, बूढ़े, जवान, बच्चे लंगोटी बाँधे, दो-तीन लक्कड़ों को एक साथ कर अपनी आजीविका की खोज में समुद्र से लोहा लेने के लिए, लहरों की थपेड़ें खाते-खाते आगे बढ़ रहे हैं।

बगीचे में एक छायादार पेड़ के नीचे रमा चौधरी एक कुर्सी पर बैठ गईं। उनके सामने एक तिपाई थी। तिपाई पर सिगरेट का डिब्बा रखा हुआ था। सामने कुत्तों को डबल रोटी और दूध पिलाया जा रहा था। छः-सात कुत्ते हैं—बड़े-बड़े भयानक। रोज़ दस-ग्यारह सेर मांस तो निगल ही जाते हैं। उनमें से एक को हाल ही में जर्मनी से मँगाया गया है।

कुर्सी से थोड़ी दूर पर रमा चौधरी का क्लर्क अय्यर खड़ा हुआ था। हाथ में कई सारी चिट्ठियाँ थीं। बड़ी उम्र है। माथे पर विभूति है। कद ठिगना। बहुत ही नम्र लग रहा है।

“चौधरी साहब के यहाँ से कोई चिट्ठी आई कि नहीं?”

“नहीं मालकिन!”

“आज तो उनको गये हुए लगभग हफ्ता होता है।”

“जी हाँ मालकिन!”

“पैसे भेजा कि नहीं?”

“जी नहीं मालकिन, अभी तक तो नहीं आया है।”

“उनको तार दे दो।”

“बहुत अच्छा मालकिन—दस-पन्द्रह चिट्ठियाँ आई हुई हैं।”

“क्या हैं?”

“जी मालकिन, वेस्टर्न स्टोर्स वालों ने फिर रुपये का तकाजा किया है—आपने पाँच महीने पहले दो हजार रुपये के कपड़े खरीदे थे, वह बिल अभी नहीं दिया गया है।”

“हूँ—मैं जानती हूँ।”

“आपके जौहरी ने भी बिल भेजा है। लगभग दस हजार रुपये देने हैं। साल-भर से रुपया नहीं दिया गया है।”

“मालूम है।”

“वे लोग कहते हैं कि साल खतम हो गया है। हिसाब भी खतम करना है, जल्दी भिजवा दें तो मेहरबानी होगी।”

“अच्छा।”

“आपने बम्बई से जो इत्र वगैरह सामान मँगाया था, उसकी बी० पी० डाकखाने में आई हुई है—करीब-करीब तीन सौ रुपये की।”

“छुड़वा लो।”

“मगर मेरे पास……”

“यह क्या गड़बड़ है? जितना रुपया दो उतना ही गायब हो जाता है।”

“मालकिन, सब हिसाब है—एक पाई भी बगैर आपके हुक्म के नहीं खरची जाती।”

“और हर वक्त पैसे की ज़रूरत बनी ही रहती है। तुम्हारे पास कितने रुपये हैं?”

“पचास।”

“बस?”

“जी हाँ, मालकिन!”

“ऊपर कोने वाले कमरे में एक पर्शियन लाल कालीन है—समझे। उसको अपने चेष्टियार के यहाँ ले जाना, लगभग दो हजार में बिकेगा।

शाम तक यह काम हो जाय ।”

“आपने जो मकान पिछले महीने बेचा था उसके कागजात में कुछ गड़बड़ी है, वकील लोग आपसे कल बातचीत करना चाहते हैं ।”

“अच्छा...हाँ तो मुदलियार के यहाँ से पैसा आया कि नहीं ?”

“मैं आज सवेरे उन्हीं के यहाँ गया था, इसी वजह से देरी हो गई । वे कहते हैं कि उनके पास उतनी रकम नहीं है । उन्होंने कहा कि वे खुद ही आपसे बातें कर लेंगे । एक बजे के करीब आ रहे हैं, फोन भी किया था ।”

“मालूम है—हूँ...तो उनके पास उतनी रकम नहीं है । बस यही वाहियात चिट्ठियाँ हैं कि और भी कहीं से कोई चिट्ठी आई है ?”

“ये दो चिट्ठियाँ बंगलौर से आई हुई हैं, मैंने खोली नहीं हैं । पाँच-दस निमन्त्रण-पत्र हैं । गवर्नर साहब की पत्नी ने लिखा है कि वे अगले महीने ही मछियारों के इस गाँव को देख पायेंगी, उनके साथ कमिशनर साहब भी होंगे ।”

“अच्छा-अच्छा, वे चिट्ठियाँ मेरी मेज़ पर रख देना । सुनो, आज घुड़दौड़ है, हो सके तो चिट्ठियार के पास अभी चले जाओ और रुपये का कुछ इन्तज़ाम करो । चौधरी साहब को भी तार दे देना ।”

जैसे कोई समस्या हल हो गई हो, निश्चिन्त हो सामने खाते हुए कुत्तों को देखने लगीं । कुत्तों का नाम ले-लेकर खिलवाड़ कर रही थीं ।

रमा चौधरी के जीवन में पैसे की बहुत कीमत है—वही कीमत जो किसी अन्धे को खोई हुई दृष्टि मिलने पर अपनी आँखों की होती है । उन्होंने सालों ऐसी जिन्दगी देखी है जो पैसे के बग़ैर सम्भव न थी । दुनिया का शायद कोई ऐसा ऐश नहीं था जो उनके अनुभव के परे हो । पैसा ऐसे खरचा है जैसे वह इनकी छत पर बरस रहा हो और उनका काम उसको बटोरने के लिए सिर्फ़ वाल्टी धर देना हो ।

अपने दस-पन्द्रह वर्ष के वैवाहिक जीवन में, सिवाय पिछले वर्ष के उन्होंने कभी भी पैसे की कमी महसूस न की थी। ऐसा भी कभी न हुआ था कि उनके मन में कोई स्वाहिश पैदा हुई हो और वह पैसे के न होने की वजह से पूरी न होने पाई हो। पाँच अँगुलियाँ तो क्या उनकी दसों अँगुलियाँ ही घी में थीं।

वे उस समाज की प्रमुख सदस्या हैं, जहाँ व्यक्तियों की वही कीमत है जो शेयर्स और स्टॉक्स की होती है, जिन पर मन्दी और तेजी का असर होता है। वहाँ हैसियत को मापने के लिए एक ही पैमाना है और वह पैमाना है धन का। जब तक किसीके पास धन होता है, उसकी कीमत वैसी ही बढ़ी-चढ़ी रहती है जैसे किसी कीमती शेयर की होती है। भाव गिरने पर लाख मिन्नतें करने पर भी उसे कोई खरीदने वाला नहीं मिलता।

जिस समाज में रमा चौधरी कभी ऊँचे स्तर पर थीं, आज कहीं लुढ़कती नजर आ रही थीं। पैसा जिस तरह आया था उसी तरह गायब हो रहा था।

रमा चौधरी का ध्यान कुत्तों की तरफ से हटा और वे खड़ी हो गईं। पेड़ों की छाँह में वे इधर-उधर चहलकदमी करने लगीं। पीछे उनकी अँगुलियाँ कुछ गिनती-सी नजर आती थीं और होंठों से, जहाँ सिगरेट दबी-चिपकी पड़ी थी, लगातार धुआँ निकल रहा था।

वे चिन्तित लगती थीं।

उनकी आँखों के सामने शायद वह नजारा चक्कर खा रहा था, जिसकी याद-मात्र से उनका सारा शरीर सिहर उठता था।

तब रमा चौधरी कालेज में पढ़ती थीं। छुट्टी के दिन थे। घर—बंगलौर गई हुई थीं। दो कमरों वाला छोटा घर—गरीबी का डेरा-सा, मुर्गियाँ-मुर्गे इधर-उधर फिरते रहते थे। पुराने ज़माने का टूटा-फूटा फर्नीचर—फर्नीचर क्या दो-चार कुर्सियाँ और दो-चार मेज़। गन्दे, मैले परदे।

दो छोटे भाई, एक बहन, मौसी, माँ, पिता...बड़ा कुटुम्ब । कम आमदनी । अनगिनत दिक्कतें । थोड़ी ताकत और बड़ी मुरादें ।

एक दिन शराब की बोतल लिये उनके पिता, मि० पाल लड़खड़ाते घर के अन्दर आये । चिल्ला रहे थे । नशे में होश बिगड़े हुए थे । शरीन को—तब ये रमा चौधरी नहीं बनी थीं—बुलाया और बड़बड़ाने लगे, “यह सब तेरी वजह से है—हमने मार दी लात नौकरी को । हमें क्या फिक्र है ? हम पर धौंस चलाता था वह । जाय भाड़ में नौकरी—हूँ हैं—यह सब तुम्हारी वजह से है...हटो मेरे सामने से । मद्रास जाओगी ? नहीं बेटी, तुम नहीं जाओगी ।”

वे थोड़ी देर बाद गिड़गिड़ाने लगे । फिर फूट-फूटकर रोने लगे, “शरीन, यह सब तुम्हारी वजह से है । सुनो, अगर तुम कॉलेज में नहीं होतीं तो यह बोतल भी मेरे हाथ में नहीं आती । तुम्हें पैसे चाहिए न ? नई-नई साड़ियाँ चाहिए कि नहीं ? हूँ हूँ—अब नहीं मिलेगी । नौकरी को मार दी गोली—आखिर कब तक चलती चोरी—पकड़े गए रंगे हाथ । गई नौकरी । गई, जाने दो ।”

रमा चौधरी के पिता मिलिट्री के स्टोर्स डिपार्टमेण्ट में काम करते थे । परिवार का खर्च ही उनकी तनख्वाह पर मुश्किल से चलता था, फिर शरीन को हर महीने पचास-साठ रुपये भेजने पड़ते थे । जब तक कर्ज मिला, लिया, फिर दफ्तर में चोरी करनी शुरू की । पकड़े गए और बर्खास्त कर दिये गए ।

उसके बाद, शरीन के घर में एक दिन खाना बनता तो दूसरे दिन फ़ाकामस्ती । मुसीबत से दिन कट रहे थे । वे ही हिम्मत करके मद्रास चली आई थीं । जैसे-तैसे गुज़ारा कर लेती थीं । जब मदद माँगनी पड़ती है तो औरतों को मिल ही जाती है । कभी-कभी तो बिन माँगे ही मोती भोली में पड़ते हैं ।

रमा चौधरी ने वे दिन भी देखे हैं जबकि एक-एक पैसा रुपये के भाव चलता था ।

वे चलती-चलती एकदम रुकीं । होंठ में रखी सिगरेट दूर फेंक दी । ऐनक सीधी की । वे यह नज़ारा नहीं देखना चाहती थीं । भुँभला रही थीं । नज़र फिर कुत्तों पर गई ।

“इनको मांस दिया गया है कि नहीं ?” रमा चौधरी ने पूछा । कुत्तों के सामने मांस न देख फिर पास खड़े नौकर से बोलीं, “मँगाओ ।” यह कह फिर उन्होंने चहलकदमी पहले की तरह शुरू कर दी ।

थोड़ी देर बाद एक लड़की—नौकरानी—बड़े थाल में कुत्तों के लिए मांस के टुकड़े ले आई । कुत्ते दुम हिलाते-हिलाते उसकी तरफ लपके । रमा चौधरी की नज़र भी उसी तरफ गई ।

“तुम अभी यहीं हो ?” लड़की से पूछा, “अब कितने दिन और मांस की चोरी करनी है ? तुम्हें तो कल नौकरी से हटा दिया गया था, गई क्यों नहीं ?”

“मालकिन, घर में चार दिन से खाना नहीं बना था । माफ कीजिए । मैं थोड़ा-सा कुत्तों का ही मांस ले गई थी—छटाँक-भर । मालकिन, इस बार माफ कर दो, फिर कभी नहीं करूँगी ।”

“माफी-वाफी क्या—चोरी करो, तिस पर भूठ बोलो, फिर नौकरी भी चाहिए । जाओ, फिर न आना इस तरफ । रख दो थाल और जाओ ।” वह लड़की सिसकती-सिसकती खाली हाथ चली गई ।

रमा चौधरी के चेहरे की पतली भुर्रियाँ पहले से कुछ मुटिया गईं । फिर धीमे-धीमे इधर-उधर घूमने लगीं । शायद सोच रही थीं कि लड़की को इस छोटी-सी बात पर निकालना चाहिए था कि नहीं । सम्भव है कि उनके पिता का चित्र अब भी उनके सामने हो । मगर तब तक वह लड़की मकान के अहाते से बाहर जा चुकी थी ।

रमा चौधरी ने अपना सिगरेट का डिब्बा उठाया और फुर्ती से नहाने-धोने के लिए अन्दर चली गईं । ग्यारह बज रहे थे । वे सोच रही थीं कि दो-एक घण्टे शृङ्गार में लगेंगे ही, और तब तक मुदलियार भी आ जायेंगे ।

मद्रास के शहरी जीवन में घुड़दौड़ का विशेष स्थान है। लगभग सभी पढ़े-लिखे इसमें दिलचस्पी लेते हैं। जुआ का कुछ ऐसा ही आकर्षण है। जिस किसीमें पैसा कमाने की इच्छा होती है वह अपने भाग्य को आज़माता है। इनमें गरीबों की संख्या ही ज्यादा रहती है.....क्लर्क, मजदूर, पुरोहित वगैरह। रईसों के बगैर तो घुड़दौड़ ही नहीं। पर घुड़दौड़ में वे हारें या जीतें, उनका भाग्य पहले की तरह ही मुस्कराता रहता है। गरीब बरबाद हो जाते हैं। दो रुपये कमाने जाते हैं और अक्सर बीस रुपये गँवा बैठते हैं।

रमा चौधरी घुड़दौड़ आदतन जाती थीं। पैसे का चस्का न हो ऐसी बात नहीं। कई बार उन्होंने सोचा कि घुड़दौड़ न जायें, परन्तु ऐन वक्त पर सज-धजकर वे जाने के लिए तैयार हो ही जाती थीं। जैसे-तैसे रुपये का भी इन्तजाम कर लिया जाता था।

वे पहले अहाते में बैठी थीं। शहर के रईसों के बैठने वगैरह का यहीं प्रबन्ध रहता है। आँखों पर काला चश्मा था। चेहरे पर लाली भी थी। महीन गुलाबी साड़ी। एक हाथ में थैला, दूसरे में नोट बुक और पेन्सिल। यू डी कलोन की खुशबू। उत्सुकता से बैठी थीं। देखते ही बनती थीं। उनकी बगल में मुदलियार बैठे हुए थे। अहाता बुरी तरह लोगों से भरा हुआ था। रमा चौधरी जैसी वहाँ कितना ही स्त्रियाँ थीं। आपस में घोड़ों के बारे में बातचीत हो रही था। शोरगुल था। घुड़दौड़ शुरू होने में कुछ समय बाकी था।

“तुम किस पर बाजी लगाने जा रहे हो?” रमा चौधरी ने मुदलियार से कोहनी-से-कोहनी टकराते हुए पूछा।

“अभी तो सोच नहीं पा रहा हूँ। अब्राहम ने कहा था, वह बता देगा कि किस पर पैसा लगाया जाय। मालूम है, उनका भी घोड़ा दौड़ रहा है? घोड़े के मालिकों को अक्सर पता लग जाता है कि कौनसा घोड़ा जीतेगा।” मुदलियार ने इधर-उधर देखते हुए कहा।

“फिर भी तुम्हारा अपना खयाल क्या है ?

“कह रहा हूँ न, अभी तक सोच नहीं पाया हूँ ।”

“घबराओ मत, मैं तुम्हें मेरे लिए भी पैसे खरचने के लिए न कहूँगी ।”

“अरे, तुम बुरा मान गईं । सवेरे तुम्हारा क्लर्क अट्थर आया था । सचमुच पैसा न था । होने को तो अमीर समझे जाते हैं, पर घर में कभी-कभी ढूँढ़ने पर भी एक-डेढ़ हजार नकद नहीं मिलता ।”

“मैंने कब कहा कि मैं बुरा मान गई थी । यह भी बताए देती हूँ, मुझे मालूम है कि घर में तिजोरी की चाबी किसके पास रहती है……खैर, तुम बताओ भी ।”

“क्यों ताने मारती हो……घरवाली कहती है……” अभी मुदलियार कह ही रहे थे कि रमा बोल उठीं, “उसे मालूम है कि तुम अपना ज्यादा वक्त किसकी सोहबत में जाया करते हो ।”

“अच्छे शिकंजे में हैं ।”

“खैर, बताओ किस पर बाज़ी लगाई जाय ?” श्रीमती रमा चौधरी ने सिगरेट का छोटा टुकड़ा होंठों से निकालकर फेंका और रेस की किताब बड़े गौर से पढ़ने लगीं ।

“न जाने अब्राहम की क्या राय है ?……अगर वह न मिला तो मैं ‘स्पार्क’ (घोड़े का नाम) पर टिकट ख़रीद लूँगा ।” मुदलियार ने उतावलेपन में कहा ।

“‘स्पार्क’ तो धोखा दे जायगा । मैं बहुत-कुछ उस पर लगाकर खो बैठी हूँ । यह पहले-पहले फर्लांग में बिजली की तरह दौड़ता है, बाद में ठण्डा पड़ जाता है । मैं तो ‘विनसम’ (घोड़े का नाम) पर लगा दूँगी । सवार होशियार है और घोड़ा भी तेज़ नज़र आता है ।”

“हमें तो पसन्द नहीं आता ।”

“अच्छा चलें, अब्राहम से पूछ आएँ ।”

वे दोनों उठे । मुदलियार आगे-आगे, रमा चौधरी पीछे-पीछे ।

भीड़ को चीरते-चीरते बाहर चले आए। बाहर पेड़ों के नीचे लोगों का जमघट था। कई कुर्सियों पर बैठे हुए थे, कई खड़े-खड़े ही बातें कर रहे थे। बातें करने वाले चाहे कितने ही हों, बातों का विषय एक ही था—घुड़दौड़। एक तरफ़ क्लब की इमारत थी। बगल में हरा लॉन था जहाँ लोग एकत्रित थे। फिर ऊँचे पौधों की आड़, बाद में घुड़दौड़ का मार्ग।

रमा चौधरी और मुदलियार दूर-दूर तक नज़र दौड़ा रहे थे। जल्दी में थे। घुड़दौड़ का वक्त होने वाला था। कभी इधर देखते, कभी उधर। दो-चार कदम इस तरफ़, दो-चार कदम उस तरफ़। पर अब्राहम का पता न लगा।

“ऐसे वक्त पर तो घोड़ों के मालिकों के दर्शन भी दुर्लभ हो जाते हैं,” मुदलियार ने कहा।

“क्यों न हों ? सभी जो उनके पीछे पड़े रहते हैं।” रमा चौधरी उचककर देख रही थीं। उनकी नज़र उस नवयुवती पर पड़ी जिसके साथ अब्राहम कल रात क्लब आये हुए थे। उनका अनुमान था कि अब्राहम भी उन्हींके आस-पास कहीं होंगे। वे तीर की तरह लपकीं। “मेरे साथ चले आओ,” उन्होंने मुदलियार से कहा।

रमा चौधरी का अनुमान ठीक था। उनको नवयुवती से बातचीत करने की भी आवश्यकता न पड़ी। उनसे थोड़ी दूर पर पेड़ की आड़ में अब्राहम किसी घुड़सवार से बात कर रहे थे। रमा चौधरी को देखते ही वे मुस्कराने लगे।

“हम तो तुम्हारा इन्तज़ार करते-करते थक गए” मुदलियार ने कहा।

“इनको हिदायत करते-करते देर हो गई। मालूम है न, हमारा घोड़ा दौड़ रहा है ?”

“हाँ, हाँ,” मुदलियार और रमा चौधरी ने कहा। अब्राहम रमा चौधरी के कंधे पर हाथ रखे क्लब की ओर चलने लगे। सबके-सब मुस्करा रहे थे।

“हम तो कहेंगे मुदलियार, तुम ‘गोल्डन रे’ पर अपना रुपया लगाओ। मैंने भी उसी पर बाजी लगाई है, आगे भगवान् जाने।” अब्राहम कह ही रहे थे कि मुदलियार टिकट खरीदने के लिए तैयार होने लगे। अब्राहम की परिचिता नवयुवती भी पास आ गई। वे दोनों हाथ मिलाए घुड़दौड़ के मार्ग की ओर चल दिए।

“पर हमारे लिए तो ‘विनसम’ ठीक है, दस टिकट खरीद देना।” रमा चौधरी पैसे निकालकर मुदलियार को देने लगीं।

“नहीं, नहीं, इसकी फिक्र मत करो,” मुदलियार ने हाथ बढ़ाकर रमा चौधरी से रुपये ले लिये।

“नहीं, नहीं, मैं तुम्हें तकलीफ़ न दूँगी। तुम ‘गोल्डन रे’ पर बाजी लगाने जा रहे हो। शायद अब्राहम का कहना ठीक ही निकले, मुझे तो भरोसा नहीं, खैर उसके लिए भी एक टिकट खरीद देना।”

“मुझे तो यकीन है। मैं पूरे पाँच सौ रुपये लगा रहा हूँ। देखें क्या होता है ?”

मुदलियार भागे-भागे टिकट खरीदने चले गए। रमा चौधरी भी आकर अपनी कुर्सी पर बैठ गई। दूरबीन से दूरी पर खड़े घोड़ों को देख रही थी। मुदलियार आकर बैठे ही थे कि घुड़दौड़ शुरू हो गई। ‘स्पार्क’ अव्वल आ रहा था, उसके पीछे ‘गोल्डन रे’ था। मुदलियार खड़े होकर ‘कम ऑन, कम ऑन’ चिल्ला रहे थे। रमा चौधरी शान्त बैठी हुई थी। मोड़ तक आते-आते ‘स्पार्क’ चौथा हो गया था और ‘गोल्डन रे’ पहला। यह देख मुदलियार धक्का-मुक्की करते, घुड़दौड़ के मार्ग की ओर बढ़े।

‘गोल्डन रे’ ने भीड़ को पार किया ही था कि उसकी चाल ढीली पड़ गई। तब ‘विनसम’ तीसरा था और निरन्तर तेज़ी से बढ़ता जाता था। रमा चौधरी के चेहरे पर सन्तोष की हल्की-सी मुस्कान दौड़ गई।

घुड़दौड़ के खतम होते-होते ‘विनसम’ पहले आ गया था और ‘गोल्डन रे’ चौथा। रमा चौधरी उठकर मुदलियार की ओर चलीं।

मुदलियार वहीं हाथ मलते-मलते खड़े रह गए । उनका जोश यकायक खतम हो गया था ।

“टेक इट ईजी मुदलियार ! इट इज़ ए स्पोर्ट, टेक इट ईजी,” रमा चौधरी मुदलियार को सांत्वना देने की कोशिश कर रही थीं ।

“लोग कह रहे हैं कि ‘विनसम’ को कुछ दे दिया गया था ।” मुदलियार ने कहा ।

“मई गुड हेवन्स ! लोग जब पैसा खो बैठते हैं तो कुछ-न-कुछ कहते ही रहते हैं । यह जरूर मानती हूँ कि ‘विनसम’ फ्लयूक है । आओ चलें, कुछ खा-पी आयें ।”

“अब्राहम न जाने कितना खो बैठा होगा ।”

“उनकी फ़िक्र मत करो... उन्होंने घुड़दौड़ में ही बाल पकाये हैं... हाँ भूल गई, सिर चन्दला किया है । उनकी खोपड़ी पर तो एक भी बाल नहीं है ।” रमा चौधरी अट्टहास करने लगीं, “उन्होंने एक ही घुड़दौड़ में तीन-चार पर बाजी लगा रखी होगी । अगर एक पर हजार रुपये गये भी तो दूसरे पर दो हजार वे बना भी लेते हैं । उनके क्या कहने !”

“तुमने भी तो ऐसा किया—पूरे हजार बना लिए देखते-देखते ।”

“नज़र मत लगाओ, देखते-देखते वे उड़ भी जायेंगे ।”

वे बातें करते-करते क्लब की इमारत के पास आ गए थे । वहाँ बहुत भीड़ जमा थी । अन्दर बैठने के लिए जगह खाली न थी । दोनों बाहर ही खड़े रह गए ।

“क्यों, कहीं शराब नहीं मिलेगी ?” रमा चौधरी ने पूछा ।

“क्यों, क्या ख़्वाब ले रहे हो ? जुर्माना हो गया है जब से यहाँ शराब बेचना बन्द कर दिया गया है ।”

“पर मेरे पास तो परमिट है ।”

“परमिट पर तो होटलों और क्लब में ही शराब मिल सकती है, सब जगह नहीं ।”

“आज़ादी क्या आई कि बुरी आफ़त आ गई । लंगाटी वालों का

राज्य है। भला नारे लंकाकर जेलों में सड़ने वालों को क्या मालूम कि ज़िन्दगी कैसी होती है। ब्रिटिश जानते थे ज़िन्दगी की असली कीमत। आज शराब बन्द की है, कल घुड़दौड़ बन्द कर देंगे। है कहीं हद इन लोगों के पागलपन की ?”

“बेवकूफ हैं.....शराब बन्द न होती तो लाखों रुपये की आमदनी होती,” मुदलियार ने रमा चौधरी से सहमत होते हुए कहा।

“जो कुछ भी करते हैं बेहूदे ढंग से करते हैं—जमींदारी रद्द कर दी, पर सूद खाने वाले महाजनों को रहने दिया। यह क्या इन्साफ है ?”

मुदलियार चुप रहे। वे खुद सूद का व्यापार करते थे। “यहाँ खड़े रहने से तो चाय भी नहीं मिलेगी। मैं अन्दर जाकर ले आता हूँ।” और वे चले गए।

चाय पीते-पीते फिर दोनों को अगली घुड़दौड़ की फिक्र सताने लगी। “क्यों, इस बार भी अब्राहम से सलाह लेनी है ? रेस में अगर किसीकी सलाह लेते रहोगे तो अन्त तक कुछ निश्चय नहीं कर पाओगे। यों तो यह भाग्य का खेल है। इस बार तुम्हारी क्या राय है ?” रमा चौधरी ने कहा।

“हमारा तो ‘मून शार्इन’ पर लगाने का इरादा है,” मुदलियार ने कहा।

“घोड़ा तो अच्छा है, पर हम ‘स्माइलिंग ब्रिक’ पर लगायेंगे।”

“तो मैं दोनों पर क्यों न लगाऊँ ?”

“तुम्हारी मर्जी। मेरे लिए ‘स्प्रिंग टाइड’ पर भी दो सौ रुपये लगाना।”

मुदलियार ने जल्दी-जल्दी चाय पी। रमा चौधरी से पैसे ले टिकट खरीदने चले। देरी हो गई थी। दूसरी घुड़दौड़ शुरू होने को ही थी। वे सीधे घुड़दौड़ के मार्ग की ओर चले। लोग पहले से वहाँ एकत्रित थे।

घुड़दौड़ शुरू हुई। ‘स्माइलिंग ब्रिक’ शुरू-शुरू में ही अड़ गया।

“इस बार भी हमारी किस्मत बुरी लगती है,” मुदलियार ने घबराते हुए कहा ।

“घबराते क्यों हो ? देखते चलो, ‘मून शाईन’ तो आ ही रहा है ।”

घोड़े मोड़ को पार कर चुके थे । दूसरे अहाते में लोग चिल्ला रहे थे, “कम ऑन स्प्रिंग टाइड ।” अगले दो-चार क्षणों में ‘स्प्रिंग टाइड’ विजयी घोषित कर दिया गया था ।

इस बार मुदलियार फिर दो सौ रुपये खो बैठे थे और श्रीमती रमा चौधरी ने तीन सौ रुपये बना लिये थे ।

“आज के लिए तो यह घुड़दौड़ काफी है । भाग्य अच्छे नज़र नहीं आते हैं ।”

“एक घोड़े पर खो बैठे हो तो दूसरे पर बना भी लोगे ।”

“घर से जितने पैसे लाया था खतम हो गए हैं, सिर-दर्द भी हो रहा है ।”

“मेरे पास पैसा है, ले लो ।”

“नहीं, नहीं । मैं घर हो आऊँ । पाँच-दस मिनट में वापस आ जाऊँगा ।”

“अच्छा, जैसी तुम्हारी मर्जी ।” रमा चौधरी सोच रही थीं कि वे शायद रुपये लेने के लिए घर जा रहे हैं ।

रमा चौधरी क्लब में आकर कुर्सी पर बैठ गई । सिगरेट सुलगा ली । शायद वे मुदलियार के बारे में सोच रही थीं ।

मुदलियार शहर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों में सम्भजे जाते हैं । बहुत ज़मीन-ज़ायदाद है । बाप-दादाओं के ज़माने से व्यापार भी चलता आ रहा है । तीस-इक्तीस की उम्र है । विवाहित है । रमा चौधरी का परिचय पिछले साल कोडैकेनॉल में हुआ था । कह नहीं सकते, मुदलियार रमा चौधरी को चाहते थे कि नहीं । वे कुटुम्बी आदमी थे । रमा चौधरी के समाज में भी वे नवागन्तुक थे । उनके द्वारा मुदलियार का परिचित वर्ग भी काफी विस्तीर्ण हो गया था । पर रमा चौधरी का

मुदलियार से आजकल बहुत लगाव है ।

इन दोनों को लेकर कई अफ़वाहें उड़ रही हैं । रमा चौधरी को भी यह मालूम है, पर उनको कुछ परवाह नहीं है । वे जब जो कुछ करना चाहती हैं, चाहे समाज कुछ भी कहे, वे करती जाती हैं ।

उनका पुराना परिचित जॉर्ज पास वाली कुर्सी पर यकायक पीछे से आकर बैठ गया । आते ही मुस्कराते हुए उसने कहा, ‘‘हलो शरीन !’’

‘‘ओह यू, मई गुड हेवन्स !’’ रमा चौधरी ने अचरज में कहा । मुस्कराई । फिर एकदम गम्भीर हो गई जैसे किसी अपने नौकर की शवल देख ली हो ।

‘‘मैं तुम्हारे घर गया था, पता लगा कि तुम यहाँ आई हो ।’’

‘‘मुझसे काम ?’’

‘‘यों ही मद्रास आया था । तुम्हें बिना देखे दिल नहीं लगता था ।’’

‘‘मैंने तुमसे कितनी बार कहा कि मेरा इस तरह पीछा मत किया करो ।’’

‘‘मैं अब इन्स्पेरेन्स इन्स्पेक्टर हो गया हूँ.....शायद तुम्हें जानकर खुशी होगी.....।’’

‘‘शायद खुशी होती, अगर तुम कहीं और रहते.....अभी मैं बहुत व्यस्त हूँ ।’’ रमा चौधरी फिर रेस बूक के पन्ने इधर-उधर पलटने लगीं । जॉर्ज अपना-सा मुँह लेकर चला गया ।

जॉर्ज ने कभी सपने देखे थे कि उसकी शादी शरीन से होगी । शरीन के माँ-बाप ने भी यही आश्वासन दिलाया था । दोनों एक ही स्कूल में पढ़ते थे । तब आपस में प्रेम भी था । शरीन मद्रास चली आई और जॉर्ज को बंगलौर में ही नौकरी ढूँढ़नी पड़ी । दोनों में फासला बढ़ता गया । जब शरीन मद्रास में पढ़ती थी तब भी वह इन्स्पेरेन्स एजेन्सी से कमा, कुछ-न-कुछ बचा, उसको भेजता रहता था । शरीन के माँ-बाप की भी, जब कभी वन पड़ता, मदद करता था ।

दस-पन्द्रह साल से वह शादी के सपने देख रहा है। उसके सपने दूर होते जा रहे हैं। शरीन और उसका फासला भी बढ़ता जा रहा है। पर विचित्र बात यह है कि वह अब भी रमा चौधरी को पागल की तरह प्यार करता है। जब कभी उसके जीवन में नई बात घटती है, शरीन को ही सर्वप्रथम बताता है। वह अपनी इन्स्पेक्टर की नियुक्ति के बारे में कहने के लिए ही बंगलौर से मद्रास चला आया था। वह अब भी अविवाहित है। उम्र कोई चालीस के करीब होगी।

तीसरी घुड़दौड़ भी खतम हुई। इस बार रमा चौधरी को लेने के देने पड़ गए। वे डेढ़ सौ रुपये खो बैठीं। उनकी दिलचस्पी भी मुद-लियार के चले जाने के बाद शायद घट-सी गई थी। सिगरेट-पर-सिगरेट पीती जाती थीं।

चौथी घुड़दौड़ में भा नौ सौ रुपये हार गईं। उनकी भी बाजी लगाने की मर्जी जाती रही। वे अकेली कुर्सी पर बैठ गईं। नजदीक से एक व्यक्ति कैमरा लिये हुए गुजरा। रमा चौधरी को देखकर जरा वह रुका और उनकी तस्वीर ले ली।

रमा चौधरी को सालों पुरानी बात याद आ गई। वे इसी क्लब के अहाते में खड़ी हुई थीं। उनका कोई दोस्त घुड़दौड़ दिखाने के लिए बुला लाया था। एक फोटोग्राफर ने उनकी फोटो ले ली। घुड़दौड़ खतम होते-होते उनको एक कापी भी दे गया।

जब वे अगले हफ्ते घुड़दौड़ गईं तो उनसे वही सज्जन मिलने आये जो फोटो में उनके पीछे खड़े हुए थे। आते ही उन्होंने मुस्कराकर फोटो देते हुए कहा, “क्या आपको यह फोटो मिली है? आप तो बहुत खूब-सूरत लगती हैं। आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई।”

शरीन की यह ए० एल० एन० चौधरी से पहली मुलाकात थी। उसी दिन उन्होंने चौधरी जी के साथ दो बार चाय भी पी। चौधरी जी ही शाम को उन्हें अपनी कार में घर छोड़ आये थे।

श्री ए० एल० एन० चौधरी आन्ध्र के प्रसिद्ध जमींदार घराने के

हैं। लाखों रुपये की जायदाद थी। पिता जमींदारी वगैरह सँभाले हुए थे और वे मद्रास में गुलछर्रे उड़ा रहे थे। यों तो पढ़ने को बी० ए० में पढ़ रहे थे। विद्या की सीढ़ी पर रेंग-से रहे थे। हर श्रेणी में दो-दो साल लगा देते थे। छब्बीस-सत्ताईस के हो गए थे और बी० ए० भी पास न किया था।

शरीन से परिचित हो जाने के बाद तो पढ़ाई भी छोड़ दी थी। दिन-रात दोनों इकट्ठे मटरगश्ती करते। कभी महाबलिपुरम् देखने जाते, कभी एनोर के समुद्र में तैरने जाते। प्रायः हर रोज ही साथ सिनेमा देखते। छः महीने बाद उन दोनों का रजिस्ट्री विवाह भी हो गया। चौधरी के माँ-बाप को यह विवाह पसन्द न था। वे विवाह में उपस्थित न थे। परन्तु शरीन के माँ-बाप इस शुभ अवसर पर पुत्र-मित्रों सहित मौजूद थे।

रमा चौधरी ने अपनी सिगरेट फेंक दी। कुछ अन्यमनस्क-सी इधर-उधर घूमती रहीं। पाँचवीं घुड़दौड़ भी समाप्त हो चुकी थी। छठी आरम्भ होने वाली थी। उन्होंने अपने पैर को झटका दिया और उठकर टिकट खरीदने के लिए चल दीं। कोई पुरानी बात याद आ गई थी।

उनके पति चौधरी कहा करते थे, “घुड़दौड़ खेल है, व्यापार नहीं। हारो या जीतो, अन्त तक खेलते जाओ, तभी खेल का मज़ा है।”

छठी घुड़दौड़ शुरू हुई। उनके घोड़े ‘लक्स माउण्ट’ की जीत हुई। रमा चौधरी के पूरे तीन सौ रुपये बन गए। घुड़दौड़ का कार्यक्रम खत्म हो चुका था।

शाम के सवा पाँच बज रहे थे। सब जल्दी-जल्दी बाहर जा रहे थे। क्लब के सदस्य वहीं आराम से घूम-फिर रहे थे। रमा चौधरी के पति क्लब के सदस्य थे, इसलिए उनको भी क्लब का उपयोग करने का अधिकार था। वे आराम से एक परिचित के साथ बातचीत कर रही थीं। अब्राहम उस नवयुवती को साथ लेकर उधर से गुजरे।

“सॉरी, घोड़ा धोखा दे गया, कैसा रहा तुम्हारा भाग्य ? मुदलियार कहाँ गये ?”

“अच्छा ही रहा,” रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए जवाब दिया ।

“कार है क्या ? या चलोगी हमारे साथ ?”

“आप फिक्र मत कीजिए ।”

रमा चौधरी मुदलियार की वापसी का इन्तज़ार कर रही थीं । आध घण्टे के करीब सिगरेट पीती वहीं बैठी रहीं । रमा चौधरी ने आज वाज़ी जीती थी, पक्कर वगैरह जाना चाहती थीं । अपनी गाड़ी नहीं थी । दो महीने पहले वह बेच दी गई थी और मुदलियार के आने के कोई लक्षण नज़र नहीं आते थे । एक-दो बार उन्हें फोन करने के लिए उठीं भी, पर कुछ सोचकर रुक गईं ।

वे फिर विवश क्लब से बाहर आ रही थी । जॉर्ज बाहर फाटक पर उनका शायद इन्तज़ार कर रहा था । उसे देखते ही रमा चौधरी ने कहा, “जॉर्ज, ज़रा मेहरबानी करके टैक्सी का इन्तज़ाम कर दोगे ?”

दोनों एक ही टैक्सी में घर पहुँचे । यह जॉर्ज के लिए सौभाग्य और रमा चौधरी के लिए सम्भवतः दुर्भाग्य ।

: ४ :

“ओह आप भी आ गई ?” मुदलियार ने कुछ अचरज में पूछा, जैसे कोई अनहोनी गुज़र गई हो । फिर यकायक मुस्कराने लगे, मानों आश्चर्य का प्रदर्शन असम्भव हो, “मैं तो आपकी चिट्ठी का जवाब ही देने वाला था । चौधरी साहब अभी वापस आये कि नहीं ?” वे इस तरह बातें करते जाते थे, जैसे मन कहीं और हो और बातें खुद-ब-खुद निकलती जाती हों । सभ्यता का अगर तकाजा न होता तो शायद मुदलियार कहते कि यह बला कहाँ से आ पड़ी ?

श्रीमती रमा चौधरी बिना कुछ कहे-सुने मुदलियार से हाथ मिलाने लगीं । वे खिलखिलाकर हँस रही थीं । हँसी में सान्निध्य का अभिनय

था। उन्होंने नौकरों से सामान अन्दर रखवाने के लिए कहा। नौकर मुदलियार की तरफ इजाजत के लिए देख रहे थे। मुदलियार एक क्षण चौंके, फिर संभलकर उन्होंने यन्त्रवत् कह दिया, “हाँ, अतिथि वाले कमरे में रखवा दो।” अगर मुदलियार का बस चलता तो वे सम्भवतः दरवाजा बन्द कर देते और कहते, “रहने का इन्तजाम कहीं और कर लो,” पर श्रीमती रमा चौधरी के सामने, इससे पहले कि वे सोच पाते क्या किया जाय, मुदलियार अवसर वही कर बैठते थे जो रमा चौधरी चाहती थीं। उनकी अजीब हालत थी।

“आप मद्रास छोड़कर यकायक चले आए—पिछले इतवार को रेस क्लब में आपका इन्तज़ार करती रह गई। अन्नाहम भी बहुत पूछते थे। क्लब भी आपके बगैर सूना लगता है। घर में पूछा तो उन लोगों ने बताया कि आप कालीकट गये हुए हैं……” श्रीमती रमा चौधरी कह रही थीं कि मुदलियार हड़बडाते हुए बोले, मानों रुंगे हाथ पकड़े गए हों, “हाँ कालीकट ही पहले गया था, वहाँ से बंगलौर चला आया था।” वे इधर-उधर देख रहे थे, ऐसा न हो कोई नौकर-चाकर सुन ले।

“कमला ने तब बताया कि आप बंगलौर गये हुए हैं—कुछ ज़मीन-जायदाद का मामला है।” रमा ने कहा।

“किसने?”

“कमला ने।”

“कमला कौन……कई सारी कमलाएँ हैं।”

“वही जो नुंगम्बाकम में रहती हैं—शायद मकान भी आपका है……।”

“हाँ, हाँ, एक किरायेदारिन हैं जरूर।”

“मुदलियार के हाथ-पर-हाथ रखकर श्रीमती रमा चौधरी ज़ोर से हँसने लगीं। मुदलियार कुछ झेंपे। श्रीमती रमा चौधरी और ज़ोर से हँसीं। उनकी हँसी यह चेतावनी देती-सी लगती थी कि मुझे सब मालूम

है। छिपाने से फ़ायदा ?”

“कल सवेरे कमला तिरुनावकसुं चेट्टियार के यहाँ मिली,” रमा कह रही थीं।

“उसको वहाँ क्या काम ?”

“अब मालूम हो गया, ये कमला कौन हैं ?” श्रीमती रमा चौधरी ठहाका मारकर हँसने लगीं, “होगी कोई कमला किरायेदारिन,” [तिरछी नज़र कर हँसी-हँसी में वे ताना कसने लगीं। मुदलियार अपना-सा मुँह लिये खड़े रहे।

“सुना है, आपने उसके लिए यहाँ कुछ ज़मीन-ज़ायदाद खरीदी है?” श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा, “आजकल तो आपको नकद की बड़ी तंगी रहती है—क़र्ज देने के लिए भी आगा-पीछा करते हैं।” श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराते-मुस्कराते अपने प्रश्न के पीछे ताने का यह डंक भी जोड़ दिया।

“तुम शायद बुरा मान गईं कि तुम्हें उस दिन पैसे न भिजवा सका। सचमुच कभी-कभी घर में ढूँढ़ने पर दो सौ रुपये नहीं मिलते,” मुदलियार कह ही रहे थे कि श्रीमती रमा चौधरी ने भीहँ सिकोड़ते हुए, आँखें फाड़कर बड़े मीठे स्वर में लहजे के साथ कहा, “मिलते कैसे? तिजोरी पर नागिनें जो फुंकार रही थीं।”

तोलिया और साबुन वगैरह लिये हुए, उसी वक्त एक नौकर बरामदे में से गुज़रा। उसकी नज़रें इन दोनों पर थीं, जैसे कुछ ग़ौर से सुन रहा हो। मुदलियार ने एक क्षण उसकी तरफ़ घूरा और फिर रमा चौधरी की बाँह पर हाथ रख बातों का रुख बदलते हुए कहने लगे, “आप तो बाहर ही खड़ी रह गईं, आइए, अन्दर आइए।”

[“औरत दाई से पेट नहीं छिपा सकती, न रईस नौकरों से अपने भेद।”] रमा चौधरी ने कमरे के अन्दर घुसते हुए कहा।

“आओ भी, बैठो भी……” मुदलियार ने कहा।

“ज़रा मैं नहा-धो आऊँ।”

“नहाना-धोना तो होता ही रहेगा, ज़रा बैठो भी । बहुत दिनों बाद मिलना हुआ है ।”

“कपड़े बुरी तरह मैले हुए हैं, चेहरा भी बिगड़ा हुआ है ।”

“तुम मेरे लिए नई थोड़ी ही हो ?”

“जब नई चीज़ों का ही शौक लगा है तो नई चीज़ों को पुराने होते किननी देर लगती है ?” मुदलियार को आगे बढ़ता देख, रमा चौधरी पीछे हटती जाती थीं । प्रेम की पैतरेबाज़ी शायद कुछ ऐसी ही है । सम्भवतः श्रीमती रमा चौधरी, मुदलियार की उत्कण्ठा बढ़ाकर खुद चुप रहना चाहती थीं, पर मुदलियार भी दुध-मुँहे बच्चे न थे । भले ही, उनकी रमा चौधरी के सामने कुछ न चलती हो ।

“तुमने तो ताने कसने में कमाल हासिल कर लिया है,” मुदलियार ने मुस्कराते हुए, हाथ मलते-मलते कहा ।

“इसमें ताने की क्या बात है ? सच है, एकदम सच ।”

“शायद तुम्हारे तजुबों की बात है,” होंठ चपटे कर, आँख नीचे किये, भौहें चढ़ाकर मुदलियार ने कहा ।

“यह है ताना । ताने मारने कब सीख गए हैं आप ?”

“तुम्हारी ही तो शागिर्दी की है,” मुदलियार हँसने लगे, जैसे कोई मैदान मार लिया हो ।

“अब चूँकि सीखना ही शुरू कर दिया है, तो न जाने कितनों की शागिर्दी करनी पड़ेगी ? नई चीज़ों का शौक जो है ।” रमा चौधरी अपना बेग उठाकर चलने को तैयार होने लगीं । शायद मुदलियार भी उनका इशारा समझ नहीं पाए थे ।

“बैठो भी, हाँ तो, तुम कमला से मिलीं कब ?”

“कहा न, कल ।”

“वह चेष्टियार के यहाँ क्यों गई ?”

“यह तो उससे पूछिए ।”

“तुम कब से जानती हो कमला को ?”

“नहा-धोने तो दो ।”

“इतनी जल्दी ही क्या है ?”

“फिर तुम्हें इतनी जल्दी क्यों है ?”

“अगर गुसलखाने में तुम घुस गईं तो हमें घण्टों बाहर इन्तज़ार करना होगा,” मुदलियार हँसने लगे, [“औरतें शरीर को पानी से धोती नहीं हैं, सींचती हैं ।”]

“है तो भोंडी, कहो तो हँस दूँ,” रमा चौधरी हँसने का उपक्रम करने लगीं । परन्तु मुदलियार एकदम गम्भीर हो गए, पूछा, “क्यों, बात सही नहीं है ?”

“वाह, है क्यों नहीं ? कुछ देर के बाद आप कह उठेंगे कि औरतें पानी की ही बनी हुई हैं, उनमें खून नहीं है । किसीने कुछ और कहा तो आप कहेंगे कि यह सही बात है ।” श्रीमती रमा चौधरी भी गम्भीरता का अभिनय करने लगीं ।

“तुम कमला को कब से जानती हो ? औरतें पानी की बनी हुई हों न हों, खून उनमें कुछ कम ही रहता है, या उनके लिए वफ़ादारी का मतलब कुछ और है ।”

“क्या सही बात कही ! औरतें बेवफ़ा होती हैं तो क्यों होती हैं ? मर्दों की वजह से ही तो । घाली एक हाथ से नहीं बजती है) फिर तुम्हें यह ऊटपटाँग शक काहे को हो रहा है ?”

“तुम बिगड़ गई लगती हो, मैं तो मज़ाक कर रहा था । नहीं, मेरा मतलब कमला से नहीं था । हाँ तुमने यह नहीं बताया कि तुम कमला को कब से जानती हो ?”

“ज़रा सब्र करो, मुझे भी कुछ आराम लेने दो । रात-भर का सफ़र । जब से इन लोगों ने फ़र्स्ट क्लास खतम कर दिया है तब से सफ़र करना भी मुसीबत हो गया है ।”

“हाँ, यह बात तो ठीक है । नहीं, मुझे कुछ जल्दी है । ज़रा बाहर जाना है ।”

“जमीन-जायदाद खरीदने ?”

“नहीं, नहीं....”

“हाँ, हाँ, क्यों नहीं, हिचकते काहे को हो ? कमला तुम्हारे ही भरोसे तो बैठी है ।”

“हैं ?”

“हाँ-हाँ—तुम्हारे ही हाथ उसने अपनी पतवार पकड़ाई है, खेते जाओ, उसे भी पार लगा देना । तुम्हारे सिवाय उसका भला और कौन सहारा है ?”

“पर मेरा तो उससे ऐसा खास रिश्ता नहीं है, सिर्फ जान-पहचान है ।”

“हाँ तभी उसके लिए जमीन-जायदाद खरीदने निकले हो ? मुझे सब मालूम है । कुछ न छिपा पाओगे ।”

“तो क्या तुम्हें कमला ने बताया है ?”

“किसीने भी बताया हो, मगर मुझे मालूम है ।”

“क्लब में भी क्या सबको मालूम है ?”

“यह भला मुझे क्या मालूम ? हाँ तुम तो बाहर जा रहे थे, मैं भी इसी बीच ज़रा नहा-धो आऊँ ।” श्रीमती रमा चौधरी फिर उठने को तैयार हुई ।

“चेट्टियार के यहाँ तुम और कमला इकट्ठी गई थीं या....”

“दोनों इकट्ठी गई थीं ।”

मुदलियार का तना हुआ चेहरा कुछ ढीला-सा पड़ गया, “पर उस चेट्टियार के पास तुम्हें जाना ही क्यों पड़ा, वह चमड़ी दे देगा, पर दमड़ी नहीं देगा ।”

“हाँ-हाँ, रईसों के पास नकद पैसे की कमी रहती है । क्यों, कहिए ?” रमा चौधरी ने फिर एक चुभता हुआ ताना कसा ।

“जाने भी दो । तुम तो बताओगी नहीं अभी । मैं ज़रा बाहर हो आऊँ ।”

“कुछ-न-कुछ खरीद-फरोख्त करनी होगी ?”

“नहीं, कोई ऐसी बात नहीं।”

“फिर यहाँ भी क्या कोई कमला है ?”

“तुम तो नाराज लगती हो।”

“नाराज होती तो तुम्हारे पीछे-पीछे यहाँ क्यों आती ? अकेली बैठी-बैठी मद्रास में तंग आ गई। सोचा तुम्हें बंगलौर में ही देख आऊँ।”

“तो यहाँ रहोगी न ?”

“तो क्या मेरे लिए भी ज़मीन-ज़ायदाद खरीदने का इरादा है ? नकद नहीं मागूँगी।” रमा चौधरी खिलखिलाकर हँस उठीं।

“तुम ताने मारने नहीं भूलोगी। अच्छा मैं ज़रा बाहर हो आऊँ, तुम भी इस बीच नहा-धो लो।”

मुदलियार कार में बाहर चले गए। श्रीमती रमा चौधरी भी अपने कमरे में चली गईं।

मुदलियार के मद्रास में तो कई मकान हैं ही, बंगलौर में भी दो-चार मकान हैं। हाल ही में ज़मीन-ज़ायदाद भी खरीदनी शुरू कर दी है। मद्रास में परिवार रहता है। जब कभी जी मचल उठता है तो बंगलौर ठण्डी हवा के लिए चले आते हैं। पाँच-दस दिन रहते हैं, फिर मद्रास चले जाते हैं। पर इन पाँच-दस दिन की याद उनके मन में ऐसी ताज़ी बनी रहती है कि फिर दो-तीन सप्ताह में बंगलौर वापस आ जाते हैं। गुलछरें उड़ाते हैं। शराब का दौर चलता है। नये-नये मजे उड़ते हैं।

पहले तो मुदलियार भी परिवारी आदमी थे। उनकी दुनिया का क्षितिज अपने बाल-बच्चों और पत्नी के साथ खतम हो जाता था। न समाज से अधिक वास्ता, न व्यापार से। वे दिलचस्पी लें या न लें, पैतृक व्यापार चलता जाता था। इनको अपने काम से काम। कभी-कभी राम-नाम भी जप लेते थे।

कह नहीं सकते कि वे रमा चौधरी की सोहबत में कुछ भटक-से गए थे। पर पिछले साल डेढ़ साल से उन्हें न परिवार की फिक्र सताती है, न व्यापार की। अपने ही नशे में चूर रहते हैं। पैसा बरबाद कर रहे हैं। इनके भरोसे कई लड़कियों के घर आबाद हो गए हैं—शायद बरबाद भी।

इतना होते हुए भी वे रमा चौधरी से न जाने क्यों दूर रहते हैं। श्रीमती रमा चौधरी उनके पास आना चाहती हैं, पर वे उनकी छाया से भी शायद घबराते हैं। न जाने क्यों ?

मकान नया है, दुमंजिला, बसवंगूड़ि के मुहल्ले में। सुन्दर बगीचा है, बड़ा अहाता है। दो-तीन नौकर-चाकर हैं। एक कार है। पर मकान हमेशा सूना-सा रहता है, जैसे भूतों का बसेरा हो। दिन-भर तो मुदलियार इधर-उधर घूमते फिरते हैं, रात को घर पर अच्छी चौकड़ी जमती है। नाचना, गाना, पीना, सब-कुछ। घर जगमगाने लगता है। सुनसान घर में जान-सी आ जाती है—चिराग-सा अंधेरे में जलता है, और सवेरा होते-होते फिर वही सूनापन।

तीन बजे होंगे। खा-पीकर, रमा चौधरी और मुदलियार, पान चबाते हुए, आरामकुर्सियों पर लेटे हुए थे। पास वाले रेडियो से संगीत आ रहा था। कमरा अच्छा सजा हुआ था। मेजों पर गुलदस्ते रखे हुए थे।

रमा चौधरी भी बनी-ठनी बैठी थीं। चेहरे पर लाल चमक-सी थी। एक आकर्षण—रीनक—उल्लास, जो उतना शारीरिक नहीं होता, जितना कि आन्तरिक। वे खुशी से खिलती-सी लगती थीं, जैसे कोई शिकार हाथ लग गया हो।

“काफी इन्तज़ार कर लिया, अब तो बताओ कमला को कब से जानती हो ?” मुदलियार ने सिगरेट की राख को एशट्रे में डालते

हुए पूछा ।

“तुम तो आजकल दिन-रात कमला के बारे में ही सोचते नज़र आते हो ?”

“तुम क्या इस कम्बख्त चेष्टियार को भी बहुत दिनों से जानती हो ?”

“हाँ-हाँ...”

“कमला भी ?”

“हाँ-हाँ ।”

“क्या वह तुम्हारी सहपाठिनी थी ?”

“नहीं तो...” रमा चौधरी ने एक सिगरेट सुलगा ली, “तो मुझे छोड़ेंगे नहीं ?”

“नहीं, तुम्हें बताना ही होगा ।”

“मैं कमला को बहुत दिन से जानती हूँ । वह भी बंगलौर की रहने वाली है ।”

“बंगलौर की ? उसने तो कभी नहीं बताया ?”

“तुम तो जानते ही नहीं हो उसे, किरायेदारिन जो है...” रमा चौधरी धुआँ उगलती-उगलती हँस पड़ी । मुदलियार को चिढ़ाने में उन्हें मज़ा आ रहा था ।

“कहो भी ।”

“घबराओ मत । खास बंगलौर की नहीं है । पास के किसी गाँव की है । गरीब घराना था । जैसे-तैसे स्कूल फाइनल तक यहाँ पढ़ लिया ।”

“स्कूल फाइनल तक ? वह तो ऐसी लगती है जैसे पढ़ी-लिखी नहीं है ।”

“लगती ही है । घर-बार में कुछ भगड़ा हो गया, मद्रास चली आई । वहीं हमारे साथ सोशल वर्क करती थी । मछियारों की मदद करती थी । फिर न जाने क्या हुआ कि यकायक गायब हो गई । एक

दिन माउण्ट रोड में कपड़ों की दूकान पर मिली, तब मालूम हुआ कि वह जनाब के चंगुल में है। अब तुम यह बताओ कि तुमने उसे कैसे फँसाया ?”

“इसमें फँसाने की क्या बात है ? वह ही मदद के लिए चली आई थी। मैंने एक दोस्त से कह रखा था कि मुझ बच्चों के लिए एक लेडी ट्यूटर की जरूरत है।”

“राव साहब से ही न ?”

“हाँ-हाँ, उन्होंने भेज दिया। मैंने कहा कि उनके रहने आदि का इन्तजाम मेरे घर में ही बच्चों के साथ कर दिया जायगा। वह न मानी, कहा कि वह गरीब है और गरीबों में काम करना चाहती है। मैंने कहा कि अच्छा। नुंगम्बाकम में हमारा एक छोटा-सा घर है, आस-पास गरीबों के भोंपड़े हैं। वह वहाँ रहने को मान गई। मैंने सोचा, अच्छा है गरीबों का भला होगा। हमारे बच्चे भी दिन में दो-चार घंटे वहाँ हो आते थे। खाली समय वह वहाँ के गरीबों की लड़कियों को पढ़ाती। बाद में हमारे बच्चे ऊटी एक कान्वेण्ट में भेज दिये गए, पर कमला वही रहती रही।”

“बस इतनी ही बात है ?” श्रीमती रमा चौधरी ने आँखें तिरछी करते हुए पूछा।

“अब उसने कहा कि वह बंगलौर में एक स्कूल चलाना चाहती है और उसके लिए ज़मीन की जरूरत है। मैंने कहा, अच्छा मैं दिलवा दूँगा।”

“आप तो बड़े दानी लगते हैं,” रमा चौधरी ने हँसते हुए कहा।

“बस इतनी ही बात है।”

“तब कमला के चेट्टियार के यहाँ जाने से आपको इतनी फिक्र क्यों हो रही थी ?”

“चेट्टियार बुरा आदमी है। हाँ तो आप गई क्यों थीं ?”

“मैं ही कमला को साथ ले गई थी। मछियारों को जाल बुनने के

लिए सूत की बहुत सख्त जरूरत हो रही थी, और चेट्टियार सूत का व्यापार करता है—तुम्हें मालूम होगा?”

“व्यापार करने को तो वह हड्डियों का भी व्यापार करता है।”

“खैर, सूत का व्यापार तुम्हारे सूद के व्यापार से तो अच्छा है।”

“खैर, कमला को तुम ले गई थीं न?”

“लगता है, तुम कमला के बारे में बहुत-कुछ कहना भूल गए हो...”

“हूँ-हूँ।”

“कहो भी?”

“हाँ...हाँ खैर....।”

“तो मैं ही कहे देती हूँ। वह गर्भिणी है। तुम ज़मीन-जायदाद देकर छुटकारा पा लेना चाहते हो, स्कूल का बहाना है। कमला कोई मामूली स्त्री नहीं है—तुम सोच रहे होगे कि वह गरीब है। गरीब भले ही हो, पर उसकी पहुँच बहुत दूर-दूर तक है। मामला इतना आसान नहीं है। कान कट-जम्येंगे। जहाँ पाँच-दस आदमियों को मालूम हुआ तो मद्रास में सिर ऊँचा उठाने के भी काबिल न रहोगे। मुझे सब मालूम है।”

“कमला ने बताया था क्या?”

“किसीने भी बताया हो।”

वे दोनों चुपचाप बैठे थे। सिगरेट का धुआँ उगलते-उगलते श्रीमती रमा चौधरी रेडियो की तरफ देख रही थीं। मुदलियार तो पसीना-पसीना हो गए थे। रमा चौधरी स्तब्ध बैठी थीं—बिल्ली की तरह, जो कूदने के लिए सन्नद्ध हो रही हो।

इस बीच एक एंग्लो-इण्डियन नवयुवती ने आकर मुदलियार से कहा कि उनके लिए फोन आया हुआ है। मुदलियार तुरन्त उठकर चले गए।

एंग्लो-इण्डियन युवती की उम्र कोई बीस-बाईस की होगी। सजी-धजी, इत्र से महक रही थी। रमा चौधरी की नज़र उस पर पड़ी,

उन्हें ऐसा लगा जैसे उस युवती को कहीं देखा हो, पर ठीक याद न आने पर वे चिन्तित मुद्रा में रेडियो की तरफ देखती रहीं।

“आप भी क्या मद्रास जा रही हैं ?” नवयुवती ने पूछा।

“नहीं तो। मुदलियार साहब जा रहे हैं क्या ?”

“हाँ-हाँ—खाना खाने से पहले वे रिजर्वेशन वगैरह करा आए थे।”

“हाँ-हाँ……” रमा चौधरी शायद सोच नहीं पा रही थीं कि क्या किया जाय। वे समझ गईं कि मुदलियार क्यों मद्रास जाना चाहते हैं। वे यह भी जानती थीं कि अगर वे बंगलौर न आतीं तो शायद दो-चार दिन और वे बंगलौर में ठहरते।

मुदलियार सिर नीचा किये धीमे-धीमे कदम रखते कमरे में आये। कुर्सी पर बैठे ही थे कि श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा, “यह लड़की कौन है ?”

“यह ही इस घर की देख-भाल करती है।”

“सेक्रेटरी है ?”

“वही समझ लो।”

“मुझे याद आ रहा है, उसे मैंने कभी बंगलौर के एक दर्जी की दुकान में देखा था।”

“हाँ, वह वहाँ ‘कटर’ थी।”

“और अब सेक्रेटरी हो गई। खूबसूरत जो ठहरी। मैं सब जानती हूँ। क्या तुम्हारे घर वाले भी यह सब जानते हैं ?”

“वह भी शायद तुम जानती होगी।”

“थोड़ी देर मुदलियार चिन्तित बैठे रहे। सिगरेट-पर-सिगरेट पीते जाते थे। ऐसा लगता था, सिवाय वहाँ से भाग जाने के उन्हें और कुछ सूझ नहीं रहा हो।

मुदलियार यह न चाहते थे कि उनके गुलछरों की शिकायत उनके घर तक पहुँचे। वे यह भी नहीं चाहते थे कि रमा चौधरी उनकी चांडाल चौकड़ी देखें। वे इधर-उधर भटक तो रहे थे, पर बदनामी से घबराते

थे । शायद यही कारण था कि रमा चौधरी जैसी स्त्रियों से, जिनकी शोहरत काफी दूर तक फैली हुई थी, वे दूर-दूर रहते थे । छोटी मोटी, गरीब लड़कियों के साथ ही वे अपना विनोद-विलास कर लेते थे ।

“तुम क्या मद्रास जा रहे हो ?”

“हाँ, बहुत ज़रूरी काम है, शाम को जाना ही होगा । फोन भी आया था ।”

“रिजर्वेशन वगैरह तो फोन के आने से पहले ही हो गया था,” रमा चौधरी ने कहा । मुदलियार का चेहरा फीका पड़ गया ।

“ज़रूरी काम है.....”

“इसीलिए न कि मैं आ गई हूँ ?”

“नहीं-नहीं, तुम यहीं रहना । मैंने सब इन्तज़ाम कर दिया है । कार भी यहीं रहेगी । अगर कोई तकलीफ़ हो तो मुझे फोन कर देना ।” मुदलियार मीठे-मीठे स्वर में, मनाते हुए-से, हँस-हँसकर, श्रीमती रमा चौधरी के पास आकर कह रहे थे ।

उनकी हँसी में विवशता थी ।

“अब मुझे जाना ही है । वक्त भी हो रहा है ।”

“जाना ही है तो जाओ.....मगर देखिए, कमला से कुछ न कहिए, नहीं तो खामखाह भंडाफोड़ हो जायगा ।” रमा चौधरी ने खड़े होकर, मुदलियार का कन्धा पकड़कर कहा । “कोई तकलीफ़ हो तो ज़रूर लिखना,” मुदलियार ने याद दिलाया ।

“क्यों, तब नकद पैसे होंगे ?

“परवाह न करो, मान भी जाओ ।” कहते-कहते मुदलियार कमरे से बाहर चले गये ।

रात को नौ बजे के करीब श्रीमती रमा चौधरी शराब का गिलास लिये, रेडियो संगीत सुन रही थीं । मुदलियार जा चुके थे । वे अकेली ही बैठी थीं ।

नौकर ने ट्रे में एक लिफाफा लाकर दिया और तुरन्त कमरे से

बाहर चला गया। रमा चौधरी ने लिफाफा खोला। मुदलियार ने पाँच हजार रुपये उसमें भिजवाये थे।

वे उठ खड़ी हुईं और होंठ पीसने लगीं। अँगुलियाँ मुट्ठी में बँध गईं। वे गुस्से से लाल हो रही थीं। वे इधर-उधर चहलकदमी करने लगीं।

फिर न जाने यकायक क्या सूझा कि गिलास से शराब का घूँट निगल लिया। सिगरेट सुलगाकर आराम से कुर्सी पर बैठ गईं और मँडराते धुएँ की तरफ देखने लगीं।

: ५ :

श्रीमती रमा चौधरी एकाकी, खिन्न-सी बाहर बगीचे में बैठी थीं। बंगलौर में जहाँ उन्होंने कभी हँसते-खेलते समय बिताया था, वहाँ वे अब अपने से ही खिन्नी हुई थीं। न कोई बात करने वाला, न पूछने-ताछने वाला। जायँ भी तो किसके पास जायँ और कैसे जायँ? मुदलियार भी मद्रास चले गए थे। और लोग रमा चौधरी से ऐसे बचते थे जैसे वे सर्दी की ठण्डी हवा हों—पाला खाई हुई मुरभाती पंखुड़ी हों।

रमा चौधरी अपने पिता के बंगलानुमा मकान में थीं—व्हाइट फील्ड के पास। अच्छा बड़ा अहाता—पेड़-पौधे, बिजली, फर्नीचर, सात, आठ कमरे, खुली जगह। चारों ओर छोटी-छोटी पहाड़ियाँ, उन पर हरी-हरी झाड़ियाँ, फिर हरे पेड़ों की चोटियों से मिलता नीला आकाश। सुहावना स्थान था। और रमा चौधरी के मन में बदली छाई हुई थी। गुजरे दिन काले-काले बादल की तरह भँवरें खाते उनकी आँखों के सामने मँडरा रहे थे।

एक समय था, धूप-पानी से बचने के लिए उनके पिता के पास ठीक जगह न थी—छोटा-सा घर, जिसमें एक रईस की कार भी न समा पाए—गन्दे टूटे-फूटे फर्नीचर के टुकड़े—सड़ी-गली, कै-कै करती मुर्गियाँ,

बदबू और अब हवादार, बड़ा मकान । यह सब रमा चौधरी का भाग्य ही था—भले ही इसको बनवाने में श्री एल० एन० चौधरी को अपना पैतृक आलीशान मकान बेचना पड़ा हो ।

बात यों हुई । जब श्रीमती रमा चौधरी और उनके पति श्री एल० एन० चौधरी यूरोप का भ्रमण करके आये तो उनको व्यापार करने की सूझी । यूरोप में ही अहमदाबाद के दो-चार मिल-मालिकों से जान-पहचान हो गई थी । श्री चौधरी की हालत भी ऐसी न थी कि बाप-दादाओं की तरह घर बैठे-बैठे रंगरेलियाँ करते । पत्नी की भी निरन्तर प्रेरणा थी । कपड़े की थोक एजेन्सी ले ली ।

मद्रास शहर में एक दूकान किराये पर ली । दो-चार नौकर रखे गए । परन्तु श्रीमान चौधरी और श्रीमती चौधरी को सोसाइटी का कार्य इतना लगा रहता कि वे स्वयं दूकान की देखभाल न कर पाते थे । दूकान चलाना शायद उनकी प्रतिष्ठा की परिभाषा के विरुद्ध भी था ।

श्रीमती रमा चौधरी के सुभाव पर ही उनके पिता को दूकान का काम सौंपा गया । उनके पिता, मि० पाल को दूकानदारी का खास तजुर्बा न था, कभी मिलटरी स्टोर्स में काम किया था और चोरी करने के कारण बर्खास्त भी कर दिये गए थे । वे बेकारी में पैसे की कीमत भी जान गए थे । उनका शायद यह भी अनुभव था कि ईमानदारी से पेट नहीं भरता है, और दुनिया का हर आदमी, चाहे वह किसी भी मजहब और प्रान्त का हो, पैसों के बट्टों से तुलता है । उन्होंने लड़की का सुभाव बिना किसी हिचकिचाहट के तुरन्त मान लिया । उन्होंने यह भी न सोचा कि ससुर के लिए दामाद के नीचे काम करना अच्छा नहीं है ।

दो-तीन महीने तो काम बड़ा अच्छा चला । चौधरी साहब को अपनी लगाई हुई पूँजी पर व्याज भी मिलने लगा । श्रीमती रमा चौधरी भी समय निकालकर जैसे-तैसे दूकान हो आती थीं । ग्राहक भी बढ़ रहे थे । इस्तहारबाजी ने तो दूकान को मशहूर कर दिया ।

उस साल गर्मियों में चौधरी परिवार ऊटी गया। उनका जीवन कुछ ऐसा था जैसे किसी भरने का होता है। पैसा आता-जाता और वे खरचते जाते थे। मितव्यय को वे अपनी शान के विरुद्ध समझते थे। आखिरी दिनों में उन्हें पैसे की तंगी सहसूस हुई। मि० पाल को दो हजार रुपये भेजने की सूचना दी गई। उन्होंने सिर्फ आठ सौ ही भेजे। साथ लिख भी दिया कि व्यापार मन्दा पड़ गया है और वसूली भी ढीली पड़ गई है। ग्राहकों के साथ खातेदारों की संख्या भी बढ़ गई है, गनीमत है कि नुकसान नहीं हो रहा है।

नीलगिरी में मकान-मालिक और दूकानदारों को पैसे नहीं दिये जा सके और बिना दिये वे मद्रास भी वापस नहीं आ सकते थे। रुपये की प्रतीक्षा में एक और महीना गुज़र गया और गुज़ारे के लिए पाँच हजार रुपया उधार भी हो गया। पर मि० पाल ने एक हजार रुपये से अधिक न भेजा। चौधरी साहब भी यह न चाहते थे कि रुपये को लेकर ससुर से झगड़ा मोल लिया जाय। इंतज़ार में पहाड़ पर दो महीने और काट दिए।

इस बीच मि० पाल ने व्हाइट-फील्ड में ज़मीन-जायदाद खरीद ली थी। कोई अंग्रेज़ हिन्दुस्तान छोड़कर इंग्लैण्ड जा रहा था। सस्ते में मिल गई थी। दुकान के पैसे से उनके नाम भी कुछ माल-मिल्कियत आ गई थी। भले ही कोई अपनी बला से बिगड़े, मि० पाल के भाग्य चमक गए थे। दगोबाजी और बेईमानी ने उनकी गरीबी को खतम कर दिया था।

चौधरी को विवश हो पैसे के लिए अपने घर आन्ध्र जाना पड़ा। वहाँ एक मकान बेचा और जो पैसा उससे मिला, नीलगिरी में अपने कर्ज चुकाकर, मद्रास चले आए। तब से ही उनका दुर्भाग्य शुरू हुआ। अगर वे सोना भा छूते तो काँसा हो जाता।

श्रीमती रमा चौधरी जानती थीं कि उनके पिता के लिए अपनी आदत से बाज़ आना मुश्किल है। वे शायद चाहती भी थीं कि उनका

घरबार भी अच्छा हो जाय । उन्होंने दूकान के बारे में झाँखें मूँदी रखीं ।

एक वक्त आया, जब अन्य कपड़े के व्यापारी खूब मुनाफ़ा उठा रहे थे, चौधरी को लगातार नुकसान उठाना पड़ रहा था । पूँजी न जाने क्या हुई, दूकान को चलाने के लिए उन्हें अक्सर कर्ज़ा भी लेना पड़ा । परन्तु वे यह न चाहते थे कि दूकान बन्द कर दी जाय और बदनामी हो । उनको यह कभी ग़वाराना न होता कि उनका कोई दोस्त क्लब में किसी और से यह कहता कि फलाने ने अपनी दूकान बन्द कर दी है, या पैसे की तंगी है ।

श्री चौधरी उन व्यक्तियों में से थे, जो रईसी में पले थे और रईसी की ढोंगबाज़ी को पसन्द करते थे । दिखावे के लिए ही सैकड़ों रुपया खरचते थे । प्रतिष्ठा के नाम पर, जिसका नाप-तोल वे खुद ही कर लेते थे, वे कुछ भी करने में समर्थ थे । उनका सामन्ती दृष्टिकोण था । अगर बरबाद ही होना था तो शान से बरबाद होना उन्हें पसन्द था ।

इस बीच मि० पाल के मकान में लक्ष्मी पलने लगी थी । उनके यहाँ अण्डों और दूध-मक्खन का व्यापार चल पड़ा था । जब पैसा आने लगता है तो चारों तरफ़ से आता है । उनको अच्छा फ़ायदा भी हो रहा था ।

एक-दो साल कपड़े की दूकान चली और पूरे पच्चीस हजार का मि० पाल ने नुकसान दिखाया । पच्चीस हजार की रकम मि० चौधरी के लिए भी बड़ी रकम थी । मि० पाल की सलाह पर उन्होंने दूकान बेच दी, जो मि० पाल के एक मित्र ने खरीद ली । चौधरी साहब को दूकान छोड़नी पड़ी, पर मि० पाल स्वयं दूकान में साझीदार हो गए । और लोगों का तो यह भी कहना है कि मि० पाल को अब भी दूकान से फ़ायदे का हिस्सा बराबर मिलता रहता है ।

दूकान के बारे में, श्रीमती रमा चौधरी की पति से कहा-सुनी भी हो गई । वे शायद अपने पिता की चाल को न समझ सकी थीं । उनका

यह खयाल था कि पिता को ही बेरोज़गार करने के लिए उनके पति ने दूकान बन्द की है। न जाने क्यों, जैसे-जैसे उनका विवाहित जीवन बीतता जाता था, वे अपने पति से दूर होती जाती थीं। वे इस मामले को बढ़ा-चढ़ाकर इतनी नाराज़ हो गईं कि वे कुछ दिनों के लिए अपने पिता के साथ बंगलौर चली गईं।

श्रीमती रमा चौधरी के सामने ये गुज़री हुई बातें, एक के बाद एक आती जाती थीं। वे आजकल एकान्त से घबराती थीं, पर अक्सर होता यह था कि उन्हें अकेला ही रहना पड़ता, यहाँ तक कि उनके भाई-बहन भी उनसे दूर-दूर रहते—वे उनके लिए एक बड़ी स्त्री थीं, जिनसे वे डरते थे।

श्रीमती रमा चौधरी उठीं और बरामदे के बाहर गईं। वहाँ उनकी बहन स्टेला मुगियों को दाना चुगा रही थी। बड़ी बहन को वहाँ देखते ही स्टेला कुछ भेंपी।

“स्टेला, ज़रा ठहरो……” रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए कहा। उनकी बहन इधर-उधर देखने लगी। उसकी उम्र कोई दस-ग्यारह वर्ष की थी—शक्ल ठीक वैसी ही जैसी कि रमा चौधरी की उस उम्र में रही होगी। “कितनी मुगियाँ हैं?” रमा चौधरी ने पूछा।

“होने को तो पचास-साठ हैं, पर तीस एक ही अण्डे दे रही हैं।” स्टेला ने कहा।

“क्यों, तुम्हें मुगियों का बहुत शौक है?”

“हाँ-हाँ।”

“क्या तुम इन्हें रोज़ दाना खिलाती हो?”

“पर माताजी दाना लेने ही कहाँ देती हैं?”

“क्यों?”

“माताजी को मेरा मुगियों के पास रहना पसन्द नहीं है। पिताजी

तो खूब खेलने देते हैं। माताजी कभी-कभी पीट भी देती हैं।” स्टेला नीचे मुँह किये हाथ मलने लगी और श्रीमती रमा चौधरी खिलखिलाकर हँस पड़ी। उनको हँसती देख स्टेला घर के अन्दर भाग गई। श्रीमती रमा चौधरी भी बगीचे में थोड़ी देर घूम-फिरने के बाद बरामदे में आकर अपनी कुर्सी पर बैठ गई। बचपन की याद अब भी उन्हें न छोड़ती थी।

तब वे छोटी थीं, शायद स्टेला की उम्र थीं। वह कुछ लड़कों के साथ तालाब में मछली पकड़ने चली गईं। वहाँ दलदल में फँस गईं, और सारे कपड़े मैले हो गए। जब घर पहुँचीं तो माँ ने उनकी अच्छी मरम्मत की।

माँ हमेशा सख्त रही थीं। पिता ही विनोद-पसन्द व्यक्ति थे। माताजी को अण्डे, मांस, मछली से परहेज था। नाक-भौं चढ़ाकर, जैसे-तैसे पति के लिए पका दिया करती थीं।

माताजी को यह भी पसन्द न था कि शरीर को खरचीले अंग्रेजी कॉन्वेन्ट में पढ़ने के लिए भेजा जाय। पिताजी की ही जिद थी। अगर माताजी का ही बस चला होता तो वह शायद किसी गरीब के घर अब चूल्हा फूँक रही होतीं।

उन्हें बहुत सालों बाद मालूम हुआ कि उनकी माँ बंगाल की कोई ब्राह्मण विधवा थी। तब उनके पिता कलकत्ता में काम करते थे। जवानी थी। वहीं उन दोनों की शादी हुई।

शुरू से ही श्रीमती रमा चौधरी का पिता से अधिक लगाव है। वे उनकी खुश-मिजाजी को पसन्द करती हैं। चाहे वे कुछ भी करें, वे उनकी बुराई नहीं कर पाती थीं।

वे अपनी कुर्सी से उठीं और पिताजी के कमरे में गईं। उनके पिता कुर्सी पर बैठे कोई केटलाग पढ़ रहे थे। मुख में बड़ा-सा सिगार था। विशालकाय थे। चर्बी से भरा चिकना चेहरा। बड़ी तोंद।

“गुड मॉर्निंग डॉडी,” रमा चौधरी ने कहा।

“गुड मॉर्निंग—अरे मैं तो सोच रहा था कि तुम बाहर गई हुई हो।”

“कहीं जाने का मन नहीं लगा।”

“मई गुड हेवन्स, अब यह बंगलौर भी पुराना बंगलौर नहीं रहा है। राम-नाम जपने वाले ऐरा-गैरा अधिक इकट्ठे हो गए हैं।”

“हूँ।”

“अपने दोस्तों से तो मिल आतीं—जॉर्ज ने अभी फोन किया था। शायद शाम को यहाँ आए। अब तो वह पैसे वाला हो गया है। घूम-फिर आओ, घर बैठे क्या करोगी?”

“जॉर्ज?”

“हाँ……”

“तुम्हारी माँ चाहती थी……”

“मुझे मालूम है माँ क्या चाहती थी……”

“बेचारा अब भी आस लगाए बैठा है……” पिता-पुत्री दोनों हँस पड़े।

“उसका घर कहाँ है?”

“वहीं केण्टोनमेण्ट में, हाँ भूल गया, वह कहता था कि तुम कल आई थीं?”

“हूँ, आई तो कल ही थी, पर मुदलियार साहब अपने घर जबर-दस्ती ले गए। मद्रास में वे हमारे पड़ोसी हैं। बहुत अच्छे जान-पहचान के हैं। बड़े रईम हैं। बंगलौर में भी हाल में उन्होंने काफी जमीन-जाय-दाद खरीदी है।”

“हूँ, नाम तो सुना है।”

“वे चौधरी साहब के भी अच्छे दोस्त हैं।”

“तुम अच्छी किस्मत वाली हो, शरीन बेटी!”

“किस्मत?”

“आजकल चौधरी कहाँ है? चिट्ठी-पत्री भी नहीं लिखता?”

“आन्ध्र गये हुए हैं । तीन महीने हो गए हैं और अभी तक वापस नहीं आये हैं । शायद काम अधिक है ।”

“उसकी हालत कैसी है ? भोला आदमी है । पहले तो कुछ पता भी लग जाता था, आजकल तो कुछ मालूम ही नहीं होता ।”

“पहले जैसी ही हालत है ।”

“जमीन-जायदाद वाला जो है । बेटी ! कई दिनों से सोच रहा था । पर हिम्मत न हुई । फिर सोचा, अपनी बेटी के सामने ही क्यों हिचका जाय ? मैं सोच रहा हूँ कि डेरी फार्म के लिए कुछ मशीनरी मँगाऊँ । अभी मैं उसके बारे में ही पढ़ रहा था । मशीनरी आ जाय तो दूध का व्यापार भी अण्डों के व्यापार-सा चमक जाय । पैसे की तंगी है । तुम तो पैसे वाली हो । चौधरी से माँगकर तो देखो । भाग्य अच्छा रहा तो जल्दी ही एक-एक पाई चुका दूँगा ।”

“कितना चाहिए ?”

“कम-से-कम तीन-चार हजार तो चाहिए ही । अगर तुम चाहो तो मैं सारा-का-सारा दूध का व्यापार तुम्हारे नाम ही लिख दूँगा ।”

“मैं तो सोच रही थी.....”

“हाँ-हाँ, भगवान् की मेहरबानी से खाने-पीने के लिए काफी है । बच्चों वाला परिवार है । लाखों खर्च रहते हैं—पढ़ाई-लिखाई, कपड़े-वगैरह । आमदनी है, मगर सब खर्च हो जाती है । क्या तुम्हें पैसे की दिक्कत हो रही है ? तुम तो कहती थीं कि चौधरी बहुत बड़ा जमींदार है...नहीं तो...अपना...”

“नहीं, नहीं, मेरा मतलब यह नहीं था । तीन हजार ही तो चाहिए । वह तो ऐसी खास बड़ी रकम नहीं है । मैं अभी भिजवा दूँगी ।”

श्रीमती रमा चौधरी अपने कमरे में गई । मुदलियार का दिया हुआ नोटों से भरा लिफाफा उठाया । मन-ही-मन मुस्कराई । लिफाफे से तीन हजार रुपये निकाले और पिता को दे दिये ।

जॉर्ज से पता लगा कि कालिन्दी बंगलौर में हैं। श्रीमती रमा चौधरी और कालिन्दी किसी ज़माने में सहपाठिनी थी। ज़िन्दगी ने ऐसी भँवर खाई कि दोनों एक-दूसरी से दूर बह गईं। बरसों से चिट्ठी-पत्री भी नहीं हुई थी। छुटपन में दोनों एक-दूसरी की छाया बनी फिरती थीं।

कालिन्दी का घर ब्रसवंगूडि में था, यह भी जॉर्ज से मालूम हुआ। या तो बीमा एजेंट के नाते या सहृदयता के नाते जॉर्ज अपने सहपाठियों का पता रखता था। उसका अपना घरबार अभी बसा नहीं था, इसलिए मित्रों के घरबार को ही अपना घरबार समझकर कभी-कभी चक्कर लगा आया करता था। श्रीमती कालिन्दी के यहाँ भी दो-चार बार चाय-पानी पी चुका था।

श्रीमती रमा चौधरी ने टैक्सी ली और श्रीमती कालिन्दी के घर को खोजने निकलीं। ग्यारह का वक्त था। सड़कें खाली थीं। काम-काजी लोग अपने काम-धन्धे पर चले गए थे। श्रीमती रमा चौधरी का यों तो पहले जाने का इरादा था, पर वक्त पर नींद न खुली। रात को सिनेमा चली गई थी। वहाँ एक जान-पहचान वाले मिल गए; बातचीत में ही आधी रात गुज़र गई। फिर साज-शृंगार में काफी समय लग गया। ग्यारह बजे जाकर कहीं फुरसत मिली।

सड़क की नुक्कड़ पर कालिन्दी का मकान था—मकान छोटा ही था, पर आसपास हरा-भरा बगीचा था। मकान के चारों तरफ चार-दीवारी थी। जगह साफ-सुथरी नजर आती थी। लगता था, हमेशा वहाँ बसन्त ही रहता हो। फाटक के पास कार आते ही कालिन्दी जो फाटक के खुलने का शब्द सुनकर बाहर बरामदे में आई थीं, भट अन्दर चली गईं। ज्योंही श्रीमती रमा चौधरी की कार बरामदे में पहुँची, कालिन्दी का पाँच-छः वर्ष का लड़का मीठी आवाज़ में कह रहा था, “बाबूजी नहीं हैं। बाबूजी दंपतर चले गए हैं, शाम को आएँगे।”

श्रीमती रमा चौधरी ने बच्चे के गाल पकड़ते हुए कहा, “माँ तो हैं न ? यही विश्वेश्वररावजी का घर है ?”

“हाँ, हाँ,” कहता-कहता लड़का कमरे में जाकर कहने लगा, “माँ, तुमसे मिलने के लिए कोई आई हुई हैं।”

श्रीमती रमा चौधरी भी कमरे के अन्दर चली गई। श्रीमती कालिन्दी अपनी लड़की को साथ लिये बाहर आ रही थीं। श्रीमती रमा चौधरी को देखते ही उन्हें गले लगा लिया। दोनों के मुख से एक साथ निकला, “अरे ! तुम कब आई ? क्या तुम यहीं रहती हो ? कभी बताया भी नहीं ?” दोनों बिना एक-दूसरी की सुने ये प्रश्न पूछ रही थीं और कालिन्दी की पुत्री मुँह बाये पास खड़ी थी।

“तुम अपनी ज्योत्स्ना को नहीं लाई ?” श्रीमती कालिन्दी ने बड़ी उत्सुकता से पूछा।

“ज्योत्स्ना तो चन्दा से चिपटी पड़ी है। फिर दिन में ज्योत्स्ना कैसी ?” श्रीमती रमा चौधरी खिलखिलाकर हँसने लगीं। उनके साथ श्रीमती कालिन्दी भी जोर से हँस रही थीं। वे हँसते-हँसते यकायक, जैसे कुछ याद आ गया हो, तुरन्त रुक गईं।

“अच्छा, तो यह है मेरी बड़ी लड़की ज्योत्स्ना। इसे मैं ज़रा स्कूल भिजवा दूँ। आज शुक्रवार है, नहाने-धोने में देर हो गई...” श्रीमती कालिन्दी कह ही रही थी कि रमा चौधरी बोल उठीं, “यह तो शक्ल ही बता रही है, कहने की क्या ज़रूरत है ? निपट लो।”

“तुम यहीं बैठो, मैं एक मिनट में आई।” श्रीमती कालिन्दी बाहर गई—अपने नौकर वरदन का बुलाया और उसके साथ ज्योत्स्ना को स्कूल भेज दिया। और बाल समेटती हुई माली को दिन का काम बताने के लिए क्यारियों की तरफ चली गई।

श्रीमती कालिन्दी इकहरे बदन की थीं। लम्बे-लम्बे केश। मुँह पर एक प्रकार का उल्लास और अभिमान। बड़ा लाल टीका, गोरा रंग, चुस्त, रेशमी साड़ी। आदर्श गृहिणी की चित्र-सी लगती थीं।

माली को काम बताकर वे धीमे-धीमे कमरे में घुसीं। रमा चौधरी एक कुर्सी पर बैठी हुई थीं। पास एक और कुर्सी पड़ी थी, कालिन्दी जाकर उस पर बैठ गईं। कमरे में दो-चार कुर्सियाँ और थीं। बड़ा कमरा खाली लगता था, पर बहुत साफ़। जो थोड़ी-बहुत चीजें थीं वे सब करीने से रखी हुई थीं। दीवारों पर पाँच-दस परिवार की फोटो टंगी हुई थीं।

“ज्योत्स्ना को तो स्कूल भेज दिया, बाकी और कितने सितारे हैं?” रमा चौधरी ने दीवार पर टंगे फोटो को देखते-देखते हँसते-हँसते पूछा।

“सितारा तो सिर्फ एक और है—दो सूर्य...हाँ, हाँ, सूर्य तो एक ही होता है, क्या कहूँ...दो नक्षत्र हैं...नक्षत्र तो पुल्लिग है न?”

रमा चौधरी हँसती जाती थीं, “यानी दो लड़के और दो लड़कियाँ, एकदम समान अनुपात।” और जोर से हँसने लगीं।

“और तुम्हारे?” कालिन्दी ने पूछा।

“वह काम तो हमने तुम्हें सौंप रखा है।”

“रईस हो, शायद यह काम भी नौकरों को सौंप रखा है?”

श्रीमती रमा चौधरी की भीहें एक क्षण सिमटीं, फिर मुस्कराते हुए कहा, “नहीं, नहीं। तुम जैसी सहेलियों को सौंप रखा है। खैर, हटाओ भी।”

“तुम शायद भूल गई हो, और भला भूलोगी भी क्यों न? जब नई-नई सहेलियाँ बनती हैं तो पुरानी सहेलियाँ भुला ही दी जाती हैं।”

“जो कुछ कहना है, बिना ताने-तश्मे के क्यों नहीं कहती हो?” श्रीमती रमा चौधरी ने श्रीमती कालिन्दी के घुटनों पर हाथ रखते हुए पूछा।

“याद है कॉलेज में सरला, वायुमुता, तुमने और मैंने यह निश्चय किया था कि पहली लड़की का नाम ज्योत्स्ना रखेगे।”

“तो क्या वायुमुता की शादी हो गई है?”

“कभी की। दो बच्चों की माँ भी है। दोनों लड़कियाँ हैं और बड़ी लड़की का नाम ज्योत्स्ना है।”

“सरला के कितने बच्चे हैं?”

“सरला के पाँच बच्चे हैं। सबसे बड़ी लड़की का नाम ज्योत्स्ना है। तीन साल पहले यहाँ आई थी। दो-तीन महीने रही भी। तुम तो हमें भूल ही गईं?”

“सरला का पति क्या करता है?”

“कॉलेज में लेक्चरार है।”

“तो यानी कोई डेढ़-दो सौ की तनखाह होगी। कैसे गुजारा चलता होगा?”

“वे तो मजे में हैं। अगर मन काबू में हो तो गुजारा इससे कम में भी चल जाता है।”

“और वायुसुता का पति क्या काम करता है?”

“एग्रिकल्चर डिपार्टमेंट में कुछ काम है। क्या काम है, भूलती हूँ। तुम वायुसुता को तो जानती ही हो। परम आलसी। कभी चिट्ठी भी नहीं लिखती। परन्तु सुना है, उसका पति बहुत अच्छा है। सब काम कर देता है।”

“यानी बाल-बच्चों को खिला-पिला भी देता है।”

“क्या गुनाह है? हाँ, थोड़ी देर ज़रा बैठो। मैं चाय बगैरह बना लाऊँ।”

“कोई ज़रूरत नहीं है।”

“अरे, सालों बाद मिली हो—चाय भी न पिओगी।”

“तकल्लुफ मत करो……”

“घबराओ मत, दूरे में ही रखकर लाऊँगी। कहो तो खानसामा की वर्दी भी पहन लूँ। बड़े-बड़े होटलों में तुम्हारी खाने-पीने की आदत जो है?”

“ताना मारने की तुम्हारी आदत न गई। अच्छा जाओ, तुम्हें जो

कुछ करना है करो, मैं कुछ न कहूँगी। हाँ सुनो तो, यहाँ सिगरेट पीने की मुमानियत तो नहीं है ?”

“हम लोग तो नहीं पीते हैं। अगर तुम्हें पीनी है तो कोई परवाह नहीं, पिओ।” कालिन्दी रसोई में चली गई। उनका लड़का उस तरफ से आ रहा था। उसको श्रीमती रमा चौधरी के सिर के ऊपर का भाग ही दीखता था। सिगरेट के धुएँ को देखकर वह चिल्ला उठा, “माँ, देखो, वह कुर्सी जल रही है।”

कालिन्दी ने पीछे मुड़कर देखा। नाक पर अँगुली रखकर लड़के को चुप रहने के लिए इशारा किया। लड़का धीमे-धीमे कुर्सी की तरफ आया। श्रीमती रमा चौधरी को सिगरेट पीती देख अचम्भे में दो क्षण खड़ा रहा, फिर मुख पर हाथ रख हँसी को रोकता हुआ पिछवाड़े भाग गया।

सिगरेट सुलगाए रमा चौधरी कुछ याद कर रही थीं। उनके सामने लन्दन के एक मकान का दृश्य था। सजा-धजा कमरा, परदे खिंचे हुए। बाहर मूसलाधार बारिश और तेज़ हवा। उनके पति ठण्ड से थर-थराते हुए, ओवरकोट का कॉलर ऊँचा किये, भीगे हुए कमरे के अन्दर घुसे। वे दर्जी के यहाँ से श्रीमती रमा चौधरी के कपड़े लेकर वापस आ रहे थे कि इतने में आसमान बरस पड़ा।

आते ही उन्होंने कहा, “कुछ चाय वगैरह दे सकोगी ?”

“कपड़े लाए हो कि नहीं ?” चौधरी साहब ने कपड़ों का गीला पेकट मेज पर रख दिया।

“यह तो गीला हो गया है। लन्दन-भर में बारिश से बचने के लिए कहीं जगह न मिली ? कपड़े सत्यानाश कर दिए।”

“अरे तुम इतने में ही आग हो गई। अंगीठी में आग जल रही है। चाय बना देना और कपड़े भी सेक लेना, ठीक हो जायेंगे।” उन्होंने कहा।

“अब तो इन कपड़ों को आग ही दिखानी पड़ेगी ?”

“मुझे मालूम हो गया कि तुम्हें यह मुहावरा मालूम है,” चौधरी साहब ने श्रीमती रमा को हँसाने के उद्देश्य से कहा।

“मेरे कपड़े खराब हो गए और तुम्हें मज़ाक सूझ रही है।”

“खैर जाने दो, चाय तो बना दो। यहाँ तो सर्दी के मारे हड्डियाँ जम रही हैं। कहीं बुखार-उखार न हो जाय।”

“चाय कैसे बनाऊँ ? बटलर चला गया है।”

“तुम्हें चाय बनानी भी नहीं आती ?”

“नहीं।”

चौधरी साहब ने जैसे-तैसे खुद चाय तैयार कर ली। मगर उस दिन शाम को ही उनको बुखार चढ़ आया—न जाने सर्दी के कारण या सदमे की वजह से। रमा चौधरी तब किसी दोस्त के साथ कोई नाटक देख रही थीं।

रमा चौधरी ने सिगरेट की राख मेज़ पर रखे एक कागज़ पर छिड़की, पैर-पर-पैर रखकर बैठ गई। सिगरेट का एक अच्छा दम लिया। शायद वे यह सोच रही थीं कि एक यह घर है जिसमें सब-कुछ स्त्री ही करती है। न जाने इन लोगों को इसमें क्या मज़ा आता है ? जिन्दगी तो इनकी चक्की होगी। जिन्दगी, क्या गुलामी है। पर कालिन्दी तो खुश नज़र आती है। क्यों ? कैसे ? बच्चों की वजह से ? बच्चे तो बुरी आफ़त हैं। एक मिनट की फुरसत नहीं मिलती। तब क्यों खुश है ? अपने-अपने स्वभाव की बात है। दुधारू गाय को शायद दूध देने में ही मज़ा आता है।

सिगरेट खतम हो चुकी थी। बची-खुची सिगरेट को उन्होंने खड़ी होकर बरामदे में ~~देख लिया~~ और रसोई की तरफ़ चल पड़ीं। दरवाज़े पर खड़ी होकर कहा, “कालिन्दी, चाय बना रही हो या दावत देने जा रही हो ?”

“अरे तुम यहाँ ? जाकर बैठो भी, अभी आई।”

“मई गुड हेवन्स, क्यों, रसोई अपवित्र हो गई क्या मेरे आने से ?”

“चुप भी रहो। क्या कह रही हो ?”

“घर में रसोइया नहीं है क्या ?”

“मैं जो हूँ....।”

“तुम तो अच्छे खानदान की हो, पढी-लिखी हो, पति भी अच्छा-खासा कमाते होंगे....।”

“हाँ तो....।”

“रसोइया क्यों नहीं रख लेती ?”

“मैं सवेरे से शाम तक घर में ही तो रहती हूँ। मुझसे अच्छा-भला मेरे बाल-बच्चों को और कौन खिलाएगा ? उनके कहने पर रसोइये की दो मास तक इल्लत पाली भी। बच्चों की सेहत खराब हो गई। खाना पकाने में भी कितनी देर लगती है ? अरे हाँ, तुम तो खड़ी ही रह गई। अन्दर जाकर बैठो भी, मैं अभी आई। सिगरेट मंगवाऊँ क्या ?”

रमा चौधरी ने ताना समझकर कालिन्दी की बाँहें रगड़ीं और मुस्कराती हुई कमरे के अन्दर आ कुर्सी पर बैठ गई।

मिठाइयाँ परोसते हुए कालिन्दी ने पूछा, “सुना है तुम्हें आये हुए दो-तीन दिन हो गए हैं ?”

“तुम्हें कैसे मालूम हुआ ? पर मुझे यह न पता था कि तुम बंगलौर में हो।”

“बंगलौर में उनकी बदली होते ही मैंने तुम्हें चिट्ठी लिखी थी।”

“मुझे तो मिली नहीं। क्लर्क ने इधर-उधर रख दी होगी। तुम्हारे, नाम लेना शायद ठीक नहीं, क्या काम करते हैं ?”

“रेलवे में हैं। हम लोग तो तुम जैसे रईस नहीं हैं। अब पूछो उनकी तनखाह कितनी है।”

“देखो तुम ताने बन्द करो, अच्छी तनखाह मिलती हो होगी.... नहीं तो।”

“गुजारा चल रहा है। चार सौ रुपये के करीब।”

“बस.....” फिर भट श्रीमती रमा चौधरी ने मुख पर हाथ रख

लिया, उन्हें अपनी असम्यगलती मालूम हो गई। बात को बदलते हुए कहा, “बस यह तो काफी है।”

“काफी है, मजे में गुजारा हो जाता है। तुम्हारा, सुना है, हजारों में भी गुजारा नहीं होता।”

“तुम्हें कैसे मालूम हुआ?”

“रईस समाज को कुछ देते हों या न देते हों, गप्पों का मसाला जरूर देते हैं।”

“पर तुम्हें पता कैसे लगा?”

“जॉर्ज ने बताया था। कल ही उसने यह आकर इतला दी थी कि तुम आई हुई हो। इच्छा हुई कि देख आऊँ। तुम जानती ही हो—वच्चों वाला परिवार है। फिर आज शुक्रवार है, दोनों लड़कियों को नहलाना-धुलाना था। देरी हो गई। यों तो कोई-न-कोई काम बना ही रहता है।”

“जॉर्ज ने ही मुझे बताया था कि तुम यहाँ रहती हो। पीछे लगा रहता है कम्बख्त।”

“यह आज की बात नहीं है—दिमाग फिरा हुआ है। खैर, जाने दो। तुम्हारे पति तो बहुत बड़े रईस हैं। शहर के सब बड़े क्लबों में तुम सदस्या हो। शहर की, सुना है, ऐसी कोई शानदार पार्टी नहीं होती जिसमें तुम उपस्थित न होती हो। कभी-कभी मैं तुम्हारा नाम अखबारों में भी पढ़ लेती हूँ। वे क्या तुम्हारे साथ आये हुए हैं?”

“नहीं तो....”

“तुम क्या अकेली आई हो....?”

“क्या तुम्हें ऐतराज है? आखिर स्त्रियों को भी तो मर्दों की तरह घूमने-फिरने की आजादी होनी चाहिए।”

“हूँ-हूँ—जरूर। सारा काम घूम-फिरकर वे ही जब कर देते हों तो स्त्रियों को इधर-उधर फिरने की जरूरत ही क्या है? अगर है भी तो उनको साथ ले जाने से अच्छा भला और क्या हो सकता है?”

“तुम दकियानूस हो गई हो।”

“तुम्हारे पति तो, सुना है, मौजूदा खयालात के हैं।”

“उनमें कोई भी खयालात नहीं हैं। पुराने खयाल के ही कहना चाहिए।”

“तब खूब पटती होगी...”

“क्यों, तुम खूब लड़ती-भगड़ती हो ?

“भगवान् की दया से लड़ने-भगड़ने की अभी तक तो नीबत नहीं आई। आखिर ज़रूरत ही क्या है ? जहाँ सुख है वहाँ लक्ष्मी है। मगर यह ज़रूरी नहीं कि जहाँ जक्ष्मी हो वहाँ सुख भी हो। सुना है वे बहुत अच्छे हैं।”

“क्यों, जॉर्ज कह रहा था ?”

“नहीं, सरला ने बताया था।”

“भला जॉर्ज यह क्यों कहेगा ?”

“सुना है, तुम यूरोप भी हो आई हो। कुछ सुनाओ तो सही।”

“अगर यह सुनाने लूँ तो एक सप्ताह भी काफी न होगा। अब मुझे जाना है—एक दोस्त को भोजन के लिए न्योता दे रखा है। शाम को फुरसत मिले तो चली आना। तुम्हें तो क्या फुरसत मिलेगी ? यहाँ क्या कोई टैक्सी मिलेगी ?”

“जल्दी क्या है ? मैं माली को भेजकर बुलवाए देती हूँ।” कालिन्दी ने माली को आवाज़ लगाई और टैक्सी के लिए भेज दिया।

“अभी तो तुम बंगलौर में रहोगी ?”

“नहीं, कल या परसों चली जाऊँगी।”

“क्यों, वे तुम्हारे बगैर रह नहीं पाते हैं क्या ?”

“नहीं, हमारे मकान के पास कुछ मछुओं के घर हैं। उन लोगों का कुछ ज़रूरी काम है। करना होगा।”

“हाँ, तुम वह काम भी करती हो ? फुरसत कैसे मिलती है ?”

“वही तो काम है...”

“शायद रईसी का भी तभी मज़ा है जब कुछ दान-दाक्षिण्य भी साथ हो ।”

“अब तो ताने मारने छोड़ो, टैक्सी आ रही लगती है । कभी मद्रास आओगी कि नहीं ? आओ तो ज़रूर चिट्ठी लिखना ।” रमा चौधरी जल्दी-जल्दी उठी, सिगरेट सुलगाई और थैला हिलाते-हिलाते टैक्सी में जा बैठी और चली गई ।

: ७ :

श्रीमती रमा चौधरी बगीचे में पेण्ट पहने टहल रही थीं । उनके पीछे दो-तीन कुत्ते दुम हिला-हिलाकर खिलवाड़ कर रहे थे । एक तो घुटने तक उछल-उछलकर उन्हें दुलार रहा था । कुत्तों के पीछे हाथ जोड़े मछियारों का सरदार था ।

आँखों पर काला चश्मा था । बाल बिखरे हुए थे । होंठों में राख होती सिगरेट । सवेरे का समय । शनिवार का दिन । वे किसीका इन्तज़ार करती हुई लगती थीं ।

उनके सिवाय उस बड़े मकान में शायद कोई नहीं था । नौकर पिछवाड़े थे । चौधरी साहब अभी आन्ध्र से वापस नहीं आये थे । श्रीमती रमा चौधरी भी बंगलौर से दो दिन पहले आई थीं ।

श्रीमती रमा चौधरी फाटक की ओर जाते-जाते यकायक रुकी और भट पीछे की ओर मुड़कर चलने लगीं । उनको ठीक सामने पा मछियारों का सरदार घबरा उठा और हाथ मलते-मलते उसने एक तरफ हटना चाहा । उसका पैर पास की फूलों की बग़ारी में जा पड़ा ।

“देखकर चलो, कीमती पौधे हैं,” श्रीमती रमा चौधरी ने गुस्से में कहा ।

“जी हाँ, गलती माफ हो ।”

“तुम लोगों को आने क्या देती हूँ कि अपना बगीचा बरबाद करती हूँ ।”

“अनजाने में पैर पड़ गया, माफी चाहता हूँ ।”

“रात-दिन तुम्हारा ही तो काम करती हूँ, फिर भी कुछ-न-कुछ बना ही रहता है ।”

“यह आपकी मेहरबानी है。” अब वह मछियारा कुत्तों से डरता-डरता श्रीमती रमा चौधरी के पीछे लड़खड़ा रहा था ।

“कहो, क्या काम है ?”

“आपकी मेहरबानी से हमें सूत तो मिल गया, जाने को रोज़ हम मछली मारने जाते भी हैं, पर भगवान् की दया नहीं होती; आप.....”

“भगवान् की दया नहीं होती तो भला मैं क्या कर सकती हूँ ?” श्रीमती रमा चौधरी ने सिगरेट का धुआँ उगलते हुए पूछा ।

“आपने हमारे लिए बहुत-कुछ किया है और कर सकती हैं । आने वाला मौसम बरसात का मौसम है । हमारे घर की छतों पर न बाँस हैं, न फूस । पिछले साल हमारी बुरी हालत हो गई थी । जैसे-तैसे थरथराते सारी बरसात काट दी । इस बार अगर हमें थोड़ी-बहुत मदद मिल गई तो मुसीबत टल जायगी ।”

“हाँ,” श्रीमती रमा चौधरी ने सिर ऊँचा कर कहा ।

“अगर आप जैसों की मेहरबानी हुई तो सरकार भी शायद मदद करे ।”

“कौन तुम्हें कहता है कि यह सरकार तुम्हारी मदद करेगी ?” श्रीमती रमा चौधरी ने खीजते हुए पूछा ।

“कांग्रेसी सरकार है,” मछियारों का सरदार गिड़गिड़ाया ।

“कांग्रेसी सरकार ने तुम्हारी सहायता करने की क्या कसम खा रखी है ? यह सब ढकोसलेबाजी है, सेवा के नाम पर लूट है ।”

“जी-जी.....” मछियारा कुछ कहना चाहता था ।

“जी-जी क्या लगा रखी है ? ज़मींदारी प्रथा रद्द कर दी गई है, पर इससे किसानों का क्या फायदा ? उलटा ज़मींदार बरबाद हो गया ।

दान देने वाले भी नहीं रहे । ये अनपढ़ आदमी क्या जानें ? हम उनके साथ घूमती-फिरती हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि हम उन्हें चाहती हैं.....”

“फिर क्या किया जाय माईजी ? हम तो आप ही के सहारे जी रहे हैं ।”

“सरकार क्या देगी ? किसी सेठ को पकड़ना होगा—देखा जायगा ।” श्रीमती रमा चौधरी ने उछलते हुए कुत्ते को थपथपाया और फिर फाटक की तरफ चलने लगीं । वे बहुत देर तक चुप रहीं । कुछ सोचती हुई नजर आ रही थीं । वह मछियारा भी कुत्तों की तरह उनके आगे-पीछे चलता जाता था ।

“शायद तुम्हारी मदद चेट्टियार करें । सूत भी उन्हीं के यहाँ से मिला था । उनसे पूछकर बताऊँगी । मगर देखो, इन अम्बिकादेवी की बातों में न आना । मुझे मालूम है, वह तुम लोगों में कम्यूनिज़्म का प्रचार कर रही हैं । अगर उसका कहा सुना, तो कहे देती हूँ कि न घर के रहोगे, न घाट के । मैं सब-कुछ करवा दूँगी ।”

“हमें आप पर भरोसा है माईजी ! अम्बिकादेवी आती हैं, उनसे कोई बात भी नहीं करता । जैसी आपकी मर्जी, वैसे ही हम करेंगे । हमें बाँस-फूस दिलवा दीजिए ।”

“चेट्टियार दे देंगे । मगर तुम्हें भी चेट्टियार की मदद करनी चाहिए । वे चुनाव लड़ेंगे, तुम सब अपने वोट उनको देना । वे ही तुम्हारी मदद करेंगे, न कि नारे उगलने वाले ये उजड़ु । समझे । जाओ अब ।”

श्रीमती रमा चौधरी एक गुलाब को पकड़कर देखने लगीं । उनकी उँगलियाँ लगते ही गुलाब की पंखुडियाँ गिरने लगीं । जब उनके हाथ में सिर्फ डण्ठल रह गया तो न जाने क्यों वे मुस्कराईं ।

वे फिर टहलने लगीं । फाटक के पास गई ही थीं कि उनका नौकर चार्ल्स भागा-भागा उनके पास आया ।

“मई गुड हेवन्स, श्री मुदलियार फोन पर हैं । पहले भी दो-तीन

बार फोन किया था, मगर आप टहल रही थीं इसलिए आपको नहीं बताया।” चार्ल्स ने कहा।

“कहो, काम में लगी हुई हैं,” चार्ल्स जाने को तैयार हुआ। “नहीं, नहीं, ठहरो!” अपने को सँभालते हुए श्रीमती रमा चौधरी ने कहा। और दूसरे क्षण मकान की ओर मुस्कराती हुई चल पड़ीं। उनकी मुस्कान से ऐसा लगता था, जैसे वे मन-ही-मन कह रही हों—अब आये ये रास्ते पर।

घर में जाकर फोन उठाया, “हलो—हाँ।”

“.....”

“हाँ, दो दिन पहले आई थी। सब-कुछ अच्छा है। हाँ, तो अभी आपको खबर मिली?”

“.....”

“फोन भी ऐसे समय किया, जबकि मैं काम में लगी हुई थी।”

“.....”

“हाँ-हाँ, चले आओ, फुरसत में बैठी हूँ, खाना यहीं खाइए।”

श्रीमती रमा चौधरी ने फोन रख दिया। आईने के सामने जा बाल वगैरह ठीक करने लगीं। थोड़ी देर बाद नहाने के लिए चली गईं।

श्री मुदलियार दस-पन्द्रह मिनट बाद एक अच्छी लम्बी कार में चले आए। बैठक में बैठे पत्र-पत्रिकाएँ उलटने लगे, पर पत्र-पत्रिकाओं में मन नहीं लगता था। वे श्रीमती रमा चौधरी की इस तरह प्रतीक्षा कर रहे थे, जैसे उन्हें किसीने कमरे में बन्द कर दिया हो।

चार्ल्स ने आकर उनको नमस्ते की। श्री मुदलियार मुस्कराये। मुस्कराहट बनावटी थी। उनकी नौकरों के सामने मुस्कराने की आदत न थी। कभी-कभी मतलबी मुस्कराहट मुस्करा देते थे।

“मालकिन कहाँ हैं?” श्री मुदलियार ने पूछा।

“नहा रही हैं।”

“क्या उनको मालूम है कि मैं आया हुआ हूँ?”

“हाँ साहब, मैंने खबर पहुँचाई है।”

“तब क्यों इतनी देर ?” कुछ सँभलते हुए कहा, “खैर कोई बात नहीं।”

चार्ल्स कुर्सी-मेज़ पोंछता हुआ चला गया और मुदलियार भी स्वयं चहलकदमी करने लगे। श्रीमती रमा चौधरी बन-ठनकर आ पहुँची। श्री मुदलियार ने खड़े होकर उनके प्रति सम्मान दिखाया। उस समाज की वही शिष्टता थी।

“तुम बुरा तो नहीं मान गई कि मैं तुम्हें अकेली छोड़कर बंगलौर से चला आया था। यकीन करो, बहुत ज़रूरी काम था, नहीं तो भला मैं तुम्हें छोड़कर जाने वाला हूँ। कारोबार है, हजारों काम-काज बने ही रहते हैं।”

श्री मुदलियार बात करते जाते थे और श्रीमती रमा चौधरी पत्रिका के पन्ने पलटती जाती थीं, मानों मुदलियार की बात ही न सुन रही हों। मुँह पर भी एक प्रकार की नाखुशी थी।

“क्यों, तुम नाराज़ लगती हो ? इतनी-सी बात पर नाराज़ हो गई ? बाद में कमला से मुलाकात हुई थी क्या ?”

“क्या आपने यह समझ रखा है कि पाँच हजार का यह माहात्म्य है कि मैं अपने एक पुराने दोस्त से भी नहीं मिलूँगी ?”

“अच्छा तो यह बात है।”

“आपने हमें समझ क्या रखा है—पाँच हजार रुपये दे दिए और हमारा मुख बन्द कर दिया। यह काम किसी बाज़ारू स्त्री से करना।”

“नहीं, नहीं, मेरा मतलब वह नहीं था।”

“मतलब-वतलब कुछ भी हो—नौकर के हाथ किसी लेडी के पास रुपये भेजे जाते हैं ?”

“पर नौकर को क्या मालूम कि लिफ़ाफे में रुपये थे।”

“तब भी...।”

“नहीं, मैंने रुपये इसलिए भेजे थे क्योंकि तुम्हें ज़रूरत थी, नहीं

तो क्या तुम सोचती हो कि तुम जैसी प्रतिष्ठित स्त्रियाँ ब्लेकमेल करेंगी ? तुम ऊटपटाँग मतलब न निकालो ।”

“पर तुम्हारे पास तो नकद नहीं रहता है । रुपया लगा हुआ है, यह उदारता यकायक कैसे आ गई ?” मुदलियार कुछ बोले नहीं, मुस्कराते बैठे रहे ।

श्रीमती रमा चौधरी ने कुछ देर बाद कहा, “आपको शायद मालूम नहीं है कि कमला दो-चार दिन में मद्रास आ रही है ।”

“सचमुच ?”

“हाँ, हाँ, देखते रहिए । आपको तो खुशी होनी चाहिए ।”

“खैर.....”

“शायद आपके यहाँ ही ठहरे—कह रही थी ।”

“हूँ-हूँ.....”

“हाँ, हाँ ?”

“तुम्हारी तो वह सहेली है और चौधरी साहब भी घर में नहीं हैं ।”

“मेरी सहेली है, और आपकी ?”

“मेरी मदद करो, मेहरबानी करो । बच्चों वाला घरबार है, वरबाद हो जायगा । खामखाह सताओ नहीं ।”

श्रीमती रमा चौधरी चेहरे के सामने अखबार रखकर मुस्कराने लगीं जैसे कोई पानीपत जीत लिया हो । श्री मुदलियार गिड़गिड़ाते जाते थे । दोनों काफी देर तक चुप रहे ।

फिर मुदलियार ने कहा, “अगर कमला आ ही रही है तो तुम ज़रा मेहरबानी करके उसे अपने घर में रख लेना ।”

“आप इतने घबरा क्यों गए हैं ? देखा जायगा ।” फिर दोनों बैठे पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने लगे । बहुत देर तक बातचीत न हुई । फिर न जाने मुदलियार को क्या शरारत सूझी, वे पूछ बैठे, “जॉर्ज की तबियत कैसी है ?”

श्रीमती रमा चौधरी ठट्ठा मारकर हँसने लगीं । वे हँसती जाती

थीं। उनको हँसता देख, मुदलियार फिर कह उठे, “मुझे भी मालूम है।” रमा चौधरी और जोर से हँसने लगीं।

“आपको क्या, दुनिया को मालूम है कि जॉर्ज मेरे पीछे पड़ा है और मैं उसकी तरफ देखती तक नहीं हूँ। पर दुनिया को यह नहीं मालूम है कि आपका और कमला का क्या रिश्ता है।”

“तुम भी अजीब हो.....खैर, बुरा न मानना, कमला को अपने यहाँ जरूर रख लेना।” यह कह मुदलियार अपना-सा मुँह लेकर बैठ गए।

रमा चौधरी सिगरेट सुलगाकर बैठ गईं। रमा चौधरी उन स्त्रियों में से थीं जो जान-बूझकर गलतियाँ करती थीं। उनके मापदण्ड समाज के भौतिक मापदण्ड नहीं थे। उन्होंने अपने जीवन में एक उद्देश्य बना रखा था। अगर उस उद्देश्य-पूर्ति के लिए उन्हें सौ बार भी इधर-उधर भटकना पड़े, तो वे अपने को निर्दोष समझने की हिम्मत रखती थीं।

कुछ सोचती-सोचती कभी-कभी मुदलियार की ओर देखकर वे मुस्करा पड़तीं, उन्हें कुछ याद आ गया था।

उनकी अहमदाबाद के मिल-मालिक से घनिष्ठता हो गई थी। तब वे जिनेवा में छुट्टी मना रहे थे। बात काफ़ी दूर चली गई थी। दोनों दूर-दूर घूमने जाया करते थे। घण्टों एक किशती में बिता देते थे। बाद में उन्हीं की मेहरबानी से चौधरी साहब को कपड़े की एजेन्सी भी मिल गई थी।

चौधरी साहब को यह सब गवारा न था। वे इनसे कुछ कह भी न पाते थे और कहे बगैर भी न रह सकते थे। पसोपेश में थे। माँ-बाप की नाराज़गी की बावजूद उन्होंने इनसे शादी की थी। रिश्तेदारों से दुश्मनी हो गई थी। रमा चौधरी को पाने के लिए उन्होंने बहुत-कुछ खो भी दिया था। फिर ऐसी हालत में, श्रीमती रमा को कैसे अलग करते ! लहू के घूँट पीकर रह जाते। जब रमा चौधरी भील में नौका-विहार कर रही होती तो वे अकेले मकान में बैठे रहते।

श्रीमती रमा चौधरी शुरू से ही चतुर रही हैं। वे पति के मन की बात ताड़ गई। इससे पहले कि वे कुछ कहते, उन्होंने स्वयं अपने पति पर आरोप लगाया कि वे नौकरानी से हँसी-मजाक कर रहे थे। यह बात भी सही थी कि चौधरी साहब अकेले में कभी उससे हँसी-मजाक कर लेते थे, पर उनका सम्बन्ध हँसी-मजाक तक ही सीमित था।

रमा चौधरी ने कहा कि नौकरानी ने उसे स्वयं बताया था। चौधरी साहब के यह कहने पर कि तुम उसे फिर बरखास्त क्यों नहीं कर देतीं, रमा चौधरी ने कहा कि यहाँ नौकरानियों का मिलना मुश्किल है, अगर बरखास्त कर भी दिया तो फालतू बदनामी होगी। यह देश का मामला है, इसके बाद भारतीयों को पूछेगा भी नहीं।”

असल बात यह थी कि नौकरानी को वहाँ रखकर, श्रीमती रमा चौधरी मिल-मालिक के साथ मजा उड़ाना चाहती थीं। जब तक नौकरानी घर में रहती चौधरी साहब को अपना मुख बन्द रखना पड़ता। यह उनकी चाल थी।

मुदलियार भी शायद यही चाल उन पर चलने की कोशिश कर रहे थे। यही याद कर उनको रह-रहकर हँसी आ रही थी।

इसीलिए ही उन्होंने मुदलियार से कहा, “घवराओ मत, कमला मेरे घर ही रहेगी। आने के लिए कहती जरूर थी। मालूम नहीं कि आयेगी या नहीं।”

मुदलियार का मुँह खिल-सा उठा, मानों कोई बहुत बड़ी समस्या हल हो गई हो। उनको इसका भान भी न था कि श्रीमती रमा चौधरी इस तरह उन्हें और गहरे दलदल में फँसाने की कोशिश कर रही थीं।

दोनों ने मिलकर खाना खाया—खाती-खाती श्रीमती रमा चौधरी यकायक कुछ सोचकर मुस्करा देती थीं, उनकी मुस्कराहट से ऐसा लगता था मानों कह रही हों कि आदि काल से स्त्रियों की यह नीति रही है कि जब आदमी पास आये तो स्त्री पीछे-पीछे हटे—आदमी फिर वैसे ही आयेगा जैसे कि गुड़ के डले के पीछे हाथी लपका-लपका आता है।

भोजन से निवृत्त हो मुदलियार चले गए । रमा चौधरी भी आराम के लिए अपने कमरे में चली गई ।

परन्तु शाम को श्रीमती रमा चौधरी नौकरों को डाँटती-डपटती बरामदे में चहलकदमी कर रही थीं । वे गुस्से से लाल हो रही थीं । उन्हें मालूम हो गया था कि श्री मुदलियार उनके घर से सीधे बंगलौर कार में चले गए थे । श्री मुदलियार भी धीमे-धीमे पुराने घाघ बन रहे थे ।

: ८ :

आज क्लब में फिर अच्छा समारोह था । क्लब के बाहर अहाते में दर्जनों कारें एक के पीछे एक खड़ी थीं । ड्राइवर गुटों में बैठे हुए थे । चहल-पहल थी । लोगों का आना-जाना बँधा हुआ था । अन्दर निरन्तर नाच का संगीत चलता जाता था ।

अब्राहम ने पार्टी दे रखी थी । उनका लड़का उच्च शिक्षा के लिए इंगलैंड जा रहा था, उसको विदाई दी जा रही थी । शहर के सब प्रतिष्ठित, नामी सज्जन निमंत्रित थे । दो-चार मंत्री भी निमंत्रण स्वीकार कर क्लब के लॉन में उपस्थित थे । राज्यपाल के अंगरक्षक भी अपनी शानदार वर्दी पहने राज्यपाल का प्रतिनिधित्व कर रहे थे । अब्राहम व उनके मित्र मंत्रियों की आवभगत में लगे हुए थे, उनके आगे-पीछे भौरो की तरह मँडरा रहे थे ।

अब्राहम के साथ उनकी नवयुवती मित्र भी थीं । उनकी पत्नी और लड़का एक कोने में बैठे हुए थे । पत्नी को देखकर ऐसा लगता था जैसे कोई छोटा-मोटा पहाड़ उठाकर रख दिया गया हो । वे इतनी मुटिया गई थीं कि चलना-फिरना उनके लिए मुश्किल हो गया था । शक्ल भी ऐसी थी कि सपने में दीखे ।

रमा चौधरी भी अपने दो-चार मित्रों के साथ अलग बैठी हुई थीं । वे आज अच्छे मूड में नज़र आती थीं । वे बहुत दिनों बाद अपनी मित्र

श्रीमती कृष्णस्वामी, मिसेज़ जोसफ़ और मिसेज़ डगन से मिल रही थीं। उनकी मित्र भी उनकी तरह खाली समय में समाज-सेवा का काम करती थीं। सभी रईस घराने की थीं। पैदल चलना बुरा समझती थीं। बिना कार के उनको सैर करना भी पसन्द न था। सबकी-सब अच्छी कारों की शौकीन थीं। चाहे किसी भी विषय पर बातचीत हो, घूम-फिरकर कारों पर ही गर्व लगने लगती थीं।

“क्यों रमा, तुम्हारी कार कैसी चल रही है?” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा।

“रमा को कार बेचे भरसा हो गया है, क्या तुम्हें मालूम नहीं है?” मिसेज़ डगन ने रमा के बदले जवाब दिया।

मिसेज़ डगन पारसी महिला हैं। उनके पति के शहर में कई होटल हैं। अच्छे रईस समझे जाते हैं। गर्मियों में नीलगिरी में रहती हैं, बरसात में दिल्ली, वसन्त में बम्बई और सर्दियों में मद्रास। उनके पति का सभी जगह कुछ-न-कुछ कारोबार है। वे सामाजिक कार्य में श्रीमती रमा चौधरी की प्रतिद्वन्दी हैं। लोगों का कहना है—कम-से-कम श्रीमती रमा चौधरी का तो पक्का खयाल था कि वे अपने जन्म-पहचान वाले लोगों से उनकी चुगली किया करती थीं। पर जब कभी दोनों मिलतीं तो ऐसे मिलतीं मानो बरसों के बिछुड़े हुए साथी मिले हों।

“क्यों रमा, कार नहीं है क्या?” मिसेज़ जोसफ़ ने पूछा, “मैंने सुना था कि तुमने ‘ओल्ड्स मोबाइल’ खरीदी है।”

“नहीं लीला, (मिसेज़ जोसेफ़ का अपना नाम लीला था,) अभी तो नहीं खरीदी है, भाव-ताव ज़रूर किया था। पर ऐजेंट ने बताया कि कोई नया मॉडल आ रहा है, जिसमें गीयर की ज़रूरत ही नहीं है। एक्सेलेरेटर से ही काम बन जाता है। मैंने सोचा, नया मॉडल ही खरीदेंगे।” श्रीमती रमा चौधरी ने कहा।

“यह कोई नई बात थोड़े ही है। पुराने फोर्ड्स में ठीक यही इन्तजाम था और ओल्ड्स मोबाइल का नया मॉडल भी आ गया है,

कमला ने खरीदा है। परसों वह मुझे महाबलिपुरं ले गई थी। ऐसा लगता था जैसे कोई डाइंगरूम पहियों पर रख दिया गया हो। साठ मील की रपतार पर भी न कोई धक्का, न दिक्कत। कार देखते ही बनती है। खरीद लो रमा !” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा।

श्रीमती कृष्णस्वामी शहर के एक मशहूर वकील की पत्नी हैं। लाखों रुपये की सम्पत्ति है। उनके विचार साम्यवादी हैं। घर में तीन कारें हैं। आधे दर्जन नौकर हैं। घर का बिजली का खर्च इतना कि एक सम्पादक को वेतन मिल जाय। उनके घर साम्यवादी नेता अक्सर ठहरा करते हैं। वे भी रमा चौधरी से चिढ़ी हुई हैं, क्योंकि वे कांग्रेस के मंत्रियों को सभा वगैरह में निमंत्रित करती हैं।

“उस एजेण्ट ने इतिला भी नहीं दी,” रमा चौधरी ने कहा।

“पर मेरा खयाल है, तुम अभी थोड़ी देर इन्तज़ार करो। शायद दाम गिर जायें। यह सरकार भी अजीब है, कारों पर दुनिया-भर के टैक्स लगा रखे हैं। कभी-न-कभी तो अक्ल आयेगी। मैं कहती हूँ, रमा, तुम थोड़ा और सब्र करो।” मिसेज़ जोसेफ़ ने कहा।

मिसेज़ जोसेफ़ कभी श्रीमती रमा चौधरी की सहपाठिनी थीं। उनके पति सेक्रेटेरियट में किसी ऊँचे ओहदे पर हैं। वे भी रमा चौधरी से खिन्नी रहती थीं, क्योंकि हर जगह उनकी ज्यादा पूछ-ताछ होती थी, यहाँ तक कि उनके पति भी उनकी समाज-सेवा की प्रशंसा करते। इसलिए रमा चौधरी के प्रति उनकी भी बही भावना थी जो एक स्त्री की दूसरी किसी स्त्री के बारे में हो सकती है, जिसकी उसके पति प्रशंसा करते हों। पर ऊपर का बतवि ऐसा था जैसे वे दो सगी बहनें हों।

“लीला, तुम्हारा यह गलत खयाल है। टैक्स वगैरह नहीं हटेंगे। सरकार चाहती है कि हिन्दुस्तान में बनी कारें बिकें, इसलिए ज़रूरी है कि टैक्स लगाकर विदेशी कारों को मंहगा बनाया जाय। खरीदना हो तो अभी खरीद लीजिए।” मिसेज़ डगन ने श्रीमती रमा चौधरी से कहा,

श्रीमती रमा चौधरी सिगरेट सुलगाकर दरवाजे की तरफ देख रही थीं, मानों किसीका इन्तज़ार कर रही हों। रह-रहकर घड़ी भी देखती जाती थीं। कुछ बेचैन-सी हो रही थीं।

“मेरा भी यही खयाल है,” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा, “कार खरीदनी हो तो ओल्ड्स मोबाइल खरीदो, नहीं तो केडिलियाक, ब्रिटिश कारें उनके सामने मिनियेचर कारें लगती हैं। छोटी कारों को तो बस चलता-फिरता पिंजड़ा समझो। ओल्ड्स मोबाइल डीलर हमारी जान-पहचान का है, चाहो तो डिस्काउण्ट भी दिलवा दूँगी।”

“हाँ जब खरीदूँगी, तुम्हें कहकर ही खरीदूँगी, लक्ष्मी !” (मिसेज़ कृष्णस्वामी का शादी से पहले लक्ष्मी नाम था।)

श्रीमती रमा चौधरी उठीं और मुस्कराती हुई, मेजों से बचती हुई, बरामदे में गईं। वहाँ मन्त्री, गवर्नर साहब के मिलिटरी सेक्रेटरी, अब्राहम वगैरह बैठे हुए थे। गवर्नर साहब के सेक्रेटरी से बातचीत करने लगीं।

इस बीच उनके साथियों में गप्पें लग रही थी। मिसेज़ डगन आद-तन बातूनी थीं, तिस पर श्रीमती रमा चौधरी के बारे में जब बातें चल पड़ती थीं, तो उनकी एक-एक बात से तेजाब टपकता था।

“कार खरीदने चली है। सुना है, दिवाला निकल गया है।” मिसेज़ डगन ने कहा।

“तब क्या ? मुदलियार जो मिल गए हैं।” मिसेज़ जोसेफ़ ने बताया।

“यानी, अब मुदलियार को फँसाया है। चौधरी क्या हुए ?”

“वे शायद आन्ध्र गये हुए हैं, बची-खुची ज़मीन-ज़ायदाद बेचने के लिए।”

“चौधरी को पीस दिया, अब मुदलियार का नम्बर है। न जाने ये लोग भी कैसे फँसते हैं ?”

“मुदलियार पहले बचा-बचा फिरता था, अब इसकी दुम बनकर

चलता है। सुना है, उसने भी कर्ज करना शुरू कर दिया है।”

“वे आये नहीं क्या ?” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा।

“दिखाई तो दिए थे। वे मिलिटरी सेक्रेटरी से कुछ बातचीत कर रहे थे, फिर कहीं चले गए।” मिसेज़ जोसेफ़ ने कहा।

“फिर अब्राहम का क्या हुआ ?” मिसेज़ डगन ने पूछा।

“अब्राहम चलता पुर्जा आदमी है। जब तक इसके पास पैसा रहा तब तक इससे उसने बनाये रखा, अब किसी और की छाया बना फिरता है। वह है इसके लायक आदमी।”

“हाथ में पैसा नहीं और ओल्ड्स मोबाइल खरीदने के खाब ले रही है। मछियारों से तो क्या रुपये मिलेंगे, शायद चुनाव के नाम पर चेट्टियार से कुछ रुपया ऐंठ ले।” मिसेज़ डगन ने कहा।

“परन्तु रमा के बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता। अब भी अगर उसे पैसा चाहिए तो मिनटों में ला सकती है। मैं उसको वर्षों से जानती हूँ। जब कॉलेज में पढ़ती थी, वह अपने कारनामों के लिए इतनी बदनाम थी कि कॉलेज से भी बाहर कर दी गई थी। कॉलेज डे के नाम पर लोगों से पैसा इकट्ठा करती और कभी हिसाब न देती। लोगों को बिना टिकट ही अन्दर ले जाती। सौ-डेढ़ सौ हर साल इस तरह बना लेती। अच्छा नाचना-गाना जानती थी। लोगों से हँस-हँसकर, बढ़-बढ़कर बातें करती। सैकड़ों रुपये इकट्ठे होते। काम चल जाता था। घर से एक पैसा नहीं आता था।”

“क्यों, इनके माँ-बाप क्या बहुत गरीब हैं ?”

“आजकल उन लोगों ने कुछ बना लिया है। पर एक ज़माना था जब दो जून ठीक खाना भी नहीं मिलता था। जब यह फर्स्ट ईयर में थी इसकी आवागारदी की हद ही न थी। एक बार सड़क के बीचों-बीच किसीको चूमती पकड़ी गई। वह भी रात को। शायद लड़के का नाम फिलिप था। पुलिस ने ‘न्यूइसेन्स’ का केस चलाना चाहा, मगर ले-देकर उनको चुप कर दिया। मालूम है सिर्फ़ किसलिए ?”

“किसलिए ?”

“कालेज की फ्रीस देने के लिए ।”

“अगर न पढ़ती, तो दुनिया कौनसी उलट जाती ?”

“इतनी बेशर्म थी यह ?” श्रीमती कृष्णस्वामी ने घृणा-भरे स्वर में पूछा ।

“उन दिनों यह बहुत बदनाम थी……”

“और आज समाज-सेविका बनी फिरती है……” मिसेज़ डगन ने कहा ।

“तब जंग का ज़माना था । हजारों सिपाही मद्रास की सड़कों पर पीकर मटरगश्ती किया करते थे । तब भी शरीन के बारे में कितनी ही अफ़वाहें उड़ी हुई थीं ।”

“शरीन कौन ?” श्रीमती कृष्णस्वामी ने पूछा ।

“इसीका नाम तब शरीन था ।”

“हूँ,” मिसेज़ डगन ने मुस्कराते हुए कहा ।

“एक बार अकेली ही पाँच-छः लड़कों के साथ एनीर सैर करने चली गई । सभी लड़के धनी थे, अपनी-अपनी कारों में गये थे । तब से शरीन के लिए फ्रीस की समस्या ही नहीं रही । मान लो, शरीन को अब भी पैसे चाहिए तो कोई दिक्कत न होगी ।”

“और अब समाज का उद्धार करने चली है । मेरा बस चले तो मैं ऐसों को जेलखाने में डलवा दूँ । लोगों की आँखों में दिन-दहाड़े धूल भोंक रही है ।” श्रीमती डगन ने भीहें एक करते हुए कहा ।

“यह सब अब याद करके एक कहानी-सी लगती है । सुनाने लगूँ तो रात-भर यहीं बैठना पड़ेगा । मगर घर में काम है । वे भी नहीं है । टिची गये हुए हैं । कभी आया करो न ? तुम तो आजकल इतनी काम में लगी रहती हो कि सिवाय इन पार्टी वगैरह के कहीं मिलना ही नहीं होता । क्यों लक्ष्मी, वे दिल्ली से कब आ रहे हैं ?” मिसेज़ जोसफ ने कहा ।

“मुकद्दमे का मामला है—वक्त का कोई ठिकाना नहीं। शायद कल-परसों आ जायें। कभी आओ न घर ?” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा। मिसेज जोसफ अपना थैला उठाकर, बरामदे में अब्राहम से मिलकर चली गई।

“क्या लोग यह सब नहीं जानते हैं ?” श्रीमती डगन ने कहा।

“जानते होंगे, पर रमा को इसकी फ़िक्र नहीं है।”

“बेशर्म जो है।”

“शर्म और इज्जत की सबकी अपनी-अपनी परिभाषा है।”

“मन्त्री और गवर्नर जानें या न जानें, कम-से-कम लोगों को तो पता चले कि उनका उद्धार कौन कर रहे हैं।”

“पता लग ही रहा है। सुना है किसी अम्बिकादेवी ने इसके नाकों दम कर रखा है। इसके विरुद्ध वह मछियारों में काम कर रही है। रोज़ कोई-न-कोई मीटिंग करवाती है और इसकी पोल खोलती है। अगर उसका काम जारी रहा तो, इसे शहर छोड़कर जाना पड़ जायगा। आखिर मछियारों की भी तो आँखें खुलेंगी।” श्रीमती कृष्णस्वामी कह रही थीं।

“यह अम्बिकादेवी कौन हैं ?”

“सुना है कम्यूनिस्ट पार्टी की कोई कार्यकर्त्री हैं।”

“कहाँ रहती हैं ? उनका क्या पता है ?” मिसेज डगन की उत्सुकता बढ़ती जाती थी।

“उनका पता तो हमें मालूम नहीं है, कम्यूनिस्ट पार्टी के ऑफिस को फोन करके मालूम कर लीजिए।”

“वह खतरनाक काम है।”

“अच्छा, कोई बात नहीं, मैं मालूम करके आपके पास खबर भिजवा दूँगी।” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा।

श्रीमती डगन कुछ सोचती हुई उपस्थित जनसमुदाय को देखने लगीं।

“लोग काफ़ी आये हैं। हम बातों में ही लगी रहीं। आओ, ओरों से भी मिल-जुल लें। हाँ, ज़रूर इन अम्बिकादेवी के बारे में खयाल रखना।”

“हाँ हाँ, ज़रूर। उधर देखो तो शायद मुदलियार भी आ गए हैं। वे बरामदे में खड़े हैं। रमा भी उनके पास खड़ी है।” श्रीमती कृष्ण-स्वामी ने कहा।

“मैं मुदलियार साहब को नहीं जानती हूँ। क्यों लक्ष्मी, मेरा उनसे परिचय कराओगी?” मिसेज़ डगन ने पूछा।

“हाँ-हाँ, ज़रूर।”

दोनों मुस्कराती हुई मेजों के बीच से होती हुए बरामदे में गईं। श्रीमती कृष्णस्वामी ने इशारा करके मुदलियार को बुलाया। उनके साथ श्रीमती रमा चौधरी भी चली आईं।

“मिस्टर मुदलियार, मिलिए, ये हैं मेरी मित्र मिसेज़ डगन। नाम तो सुन रखा होगा।” श्रीमती कृष्णस्वामी ने मिसेज़ डगन का परिचय कराया।

“मुझे आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई। मैंने आपकी शोहरत सुन रखी थी। मिलना भी चाहता था। अब मौका मिला।”

“लक्ष्मी, मिसेज़ डगन!” श्रीमती रमा चौधरी ने पीछे से कन्धों पर हाथ रखकर उनका ध्यान खिंचवाया। “मैं अभी मिलिट्री सेक्रेटरी से बातचीत कर रही थी। मैंने गवर्नर साहब को पहले ही चिट्ठी लिख रखी थी। सेक्रेटरी साहब कह रहे थे कि शायद मछियारों की स्थिति देखने के लिए गवर्नर साहब स्वयं मंजूर कर लें। देखो, भूल मत जाना—” श्रीमती रमा चौधरी अभी कुछ कह ही रही थीं कि मुदलियार किसी से बातचीत करने कमरे के अन्दर चले गए।

“आप जा रही है क्या?” श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा।

“क्या आप आना चाहती हैं?” मिसेज़ डगन ने पूछा।

“हाँ-हाँ।”

“आइए आइए—चले चलें।” मिसेज़ डगन ने कहा, यद्यपि वे क्लब में अभी लोगों से बातचीत करना चाहती थी। परन्तु हो सकता है वे श्रीमती रमा चौधरी को अपनी कार व मकान वगैरह दिखाना चाहती हों।

दूसरे क्षण वे दोनों, मिसेज़ डगन की खूबसूरत, नई ‘केडिलियाक’ में बैठ ‘डगन विला’ की ओर जा रही थीं।

: ६ :

आज श्रीमती चौधरी को लग रहा था जैसे कोई उनको ज़िन्दा ही तेल में तल रहा हो। वह भुन-सी रही थीं। गुस्से से पागल थीं। कमरे के दरवाजे बन्द थे। फिर भी मछियारों के भोंपड़ों से लगातार शोर सुनाई पड़ रहा था। ऐसा लग रहा था, मानों विद्रोहियों के किसी गुट ने उनके मकान को चारों तरफ़ से घेर लिया हो और वे अकेली फँसी हुई हों। वातावरण में सरगर्मी थी, खलबली थी।

शाम का समय। पुरवा चल रही थी। मछियारे सब अपने घर पर ही थे। श्रीमती रमा चौधरी के घर के पास ही मछियारों की काफ़ी भीड़ जमा थी। अम्बिकादेवी जी चिल्ला-चिल्लाकर भाषण दे रही थीं। ध्वनि-विस्तारक यन्त्रों की ज़रूरत ही नहीं थी। वे कह रही थीं—

“आप लोग इनकी चिकनी-चुपड़ी बातों का विश्वास न कीजिए। ये आपके साथ तभी तक हैं जब तक उनका उल्लू सीधा होता है। आप बनें या बिगड़ें, उनको अपने ऐशो-आराम से मतलब, हैसियत से मतलब। आजकल समाज-सेवा भी एक फैशन हो गया है। इन आलीशान बंगलों में रहने वाली, चुलबुली रईस औरतें, भला भोंपड़ों में मरते-जीते गरीबों का क्या सही प्रतिनिधित्व कर सकती हैं? उनको क्या मालूम कि आप पर क्या गुज़रती है? उनको अपने गुलछरों से मतलब। उनको क्या पड़ी कि आपकी मदद करें? उनको तो अखबारों में नाम छपवाने के लिए एक बहाना चाहिए, समाज में उदार होने का

एक खिताब चाहिए । भाइयो ! इनकी सेवा के फन्दों में मत पड़ो ।”

अम्बिकादेवी चेहरे का पसीना पोंछने के लिए थोड़ी देर रुकीं कि सारा वायुमण्डल करतल-ध्वनि से गूँज उठा । श्रीमती रमा चौधरी का लगा कि उन्हीं पर चांदमारी हो रही हो । वे भन्ना उठीं । सिगरेट के डिब्बे के लिए मेज के पास गईं । डिब्बा खोला तो उसमें कोई सिगरेट न थी । उनका गुस्सा और बढ़ गया । दरवाजे की तरफ लपककर पुकारा, “चार्ल्स, चार्ल्स, मई गुड हेवन्स ।”

चार्ल्स भी आँगन की दीवार के पास खड़े हो अम्बिकादेवी का भाषण सुन रहा था । उसको वहाँ पा श्रीमती रमा चौधरी भुलस-सी पड़ी । वे वरामदे में ज्यादा देर न खड़ी रह सकीं । उन्होंने कमरे के अन्दर जाकर किवाड़ बन्द कर लिये और अम्बिकादेवी कहती जाती थीं—

“यह क्यों होता है कि एक व्यक्ति आलीशान बंगले में रहता है और एक को धूप-पानी से बचने के लिए फूस की छत भी नसीब नहीं ? यह क्यों होता है कि एक के पास मदद करने के लिए...सेवा करने के लिए पैसा होता है तो दूसरे पैसे के लिए मोहताज बने फिरते हैं ? ये मदद करने वाले होते कौन हैं ? इनके पास भीख देने के लिए पैसे कहाँ से आये ? हमीं से तो छीने हैं, वे हमारी ही चीज हमें वापस कर एह-सान पाते हैं । अजीब है इस दुनिया की बात ! भाइयो, खयाल रखो, हर मनुष्य को समान अधिकार प्राप्त है । आर्थिक भिन्नताओं के कारण मनुष्य को भिन्न-भिन्न स्तरों में नहीं रखा जा सकता । जिस दिन आप यह जान जायेंगे उसी दिन आपका कल्याण होगा ।”

सभा में फिर करतल-ध्वनि हुई और श्रीमती रमा चौधरी को लग रहा था जैसे मूसल के नीचे सिर दे दिया हो । वे खौलती हुई इधर-उधर चहलकदमी कर रही थीं ।

चार्ल्स हाँपता-हाँपता आया और किवाड़ खटखटाने लगा । श्रीमती रमा चौधरी ने दाँत कटकटाते हुए किवाड़ खोले । खोलते ही वे चार्ल्स

पर गरज उठीं—

“कहाँ थे ? कितनी बार कहा कि मकान छोड़कर इधर-उधर मटर-गश्ती मत किया करो । क्या कर रहा था ?”

“माईजी, माईजी...” चार्ल्स गिड़गिड़ाते लगा ।

“माईजी-माईजी क्या लगा रखी है—तुम्हें दीवार के पास क्या काम ?”

“जी...जी...जी ।”

“तुम्हें सभा में जाने के लिए किसने कहा ?”

“सभा तो कोई नहीं हो रही है । लोग बस वहाँ इकट्ठे हो गए हैं, कुछ घरों में हैं और कुछ घरों के बाहर—”

“तो अम्बिकादेवी वहाँ क्या कर रही हैं ?”

“अम्बिकादेवी कौन ?”

“वही जो वहाँ भीगुरों की तरह चिल्ला रही है ।”

“माईजी.....”

“मैं कुछ नहीं सुनूँगी, खबरदार आगे से वहाँ न जाना !” यह कह श्रीमती रमा चौधरी सिगरेट लेने के लिए फिर मेज की तरफ बढ़ी और चार्ल्स ने भी बाहर बरामदे की ओर मुँह कर बनावटी ग्राह भरी, जैसे कह रहा हो, “ये तो क्या मुझे नौकरी से निकालेंगी ? मैं इनकी नस-नस जो जानता हूँ ।”

“सिगरेट क्यों नहीं लाये ? देखते नहीं हो, डिब्बा खाली है ? श्रीमती रमा चौधरी ने आगबबूला होते हुए पूछा ।

“जी, मगर सिगरेट की दूकान वालों ने उधार देने से इन्कार कर दिया है ।” चार्ल्स ने सिर हिलाते हुए कहा ।

“कितना है वहाँ उधार ?”

“छः सौ के करीब ।”

“उधार के लिए उस दिन दिये तो थे, डान्स कलेक्शन वाले तीन सौ रुपये । क्यों नहीं दिये उसने ? है कि नहीं वह ?”

“अभी तक तो नहीं आया है।”

“हूँ, यह लो पैसे, भागकर एक पेकेट सिगरेट लाओ। हाँ, सुनो, मुदलियार साहब ने कार भेजी है कि नहीं?”

“अभी तक नहीं आई है।”

“फोन किया था कि नहीं?”

“फोन किया तो था। उन्होंने कहा, कार बच्चों के लिए स्कूल गई हुई है, आते ही भिजवा देंगे।”

“अच्छा जाओ। जल्दी लाओ सिगरेट।”

अब श्रीमती रमा चौधरी अकेली ही कमरे में रह गई थीं, इसलिए ‘भींगुर’ की आवाज़ फिर सुनाई पड़ने लगी। अम्बिकादेवी जी का भाषण चल रहा था—

“अब आप इन चेट्टियार साहब को ही देखिए—जिनके पास सब-कुछ है उन्हीं को और चाहिए। लाखों की सम्पत्ति है। लाखों का व्यापार है। कारों से उतरने का नाम नहीं लेते। बड़े-बड़े बंगलों में रहते हैं। वे आपके क्षेत्र से चुनाव लड़ना चाहते हैं, आपका प्रतिनिधित्व करने की हिम्मत करते हैं।

“वह व्यक्ति, जो आपको अपनी शक्ल दिखाना अपनी शान के खिलाफ़ समझता है, विधान सभा में आपकी पैरवी करना चाहता है। न आपने उसकी शक्ल देखी, न उसने आपकी। उससे अच्छा तो पिछला कांग्रेसी ही था। वह कम-से-कम आपकी दिक्कतों को तो समझता था, भले ही उसके दिमाग में कीड़ा हो। बेचारा गुज़र गया। उसकी जगह पर दूसरा चुनाव होने वाला है। आपको सोच-समझकर वोट देना चाहिए।

“इन पैसे वालों ने समझ रखा है, जिनके पास पैसा है उनके पास सब-कुछ है। आप इनके बहकावे में मत आइए। जान-बूझकर साँप को दूध न पिलाइए।”

श्रीमती रमा चौधरी को लग रहा था मानो स्वयं अम्बिकादेवी

विष उगल रही हो। वे चाहती थीं कि मकान छोड़कर कहीं चली जायँ। पर कार न थी। मुदलियार भी न आये थे, सिगरेट भी न थी। उनकी बुरी हालत थी।

चार्ल्स का सिगरेट का पेकट देना था कि श्रीमती रमा चौधरी ने सिगरेट होंठों में दबाकर चैन की गहरी साँस खींची। जान-में-जान आई। इत्मीनान से बैठते हुए चार्ल्स से पूछा कि पुलिस वाले बंगले के बाहर घूम रहे थे कि नहीं ?

“सबेरे देखा था, इस वक़्त नहीं हूँ।”

“कहीं वे मीटिंग में तो नहीं थे ?”

“वहाँ भी नहीं थे।”

“कमिश्नर साहब ने इन लोगों को कह रखा है कि हमारे बंगले के पास पहरा दिया करें। जब से वह गुप्त नाम चिट्ठी मिली है हमारी जान खतरे में है। जब ज़रूरत नहीं होती तब आ जाते हैं, जब ज़रूरत होती है तो गायब हो जाते हैं। ये लोग भी खूब हैं। इस मकान में रहना मुश्किल हो रहा है। हूँ, हूँ, खैर, तुम जाओ।” श्रीमती रमा चौधरी ने यह ऐसे कहा जैसे कहकर वे गलती कर बैठी हों और गलती को सुधारने की कोशिश कर रही हों।

वे चार्ल्स के जाते ही फोन की तरफ गईं। फोन उठाया, फिर यकायक कुछ खयाल आया और फोन नीचे धर दिया।

वे पुलिस कमिश्नर को फोन करना चाहती थीं। फिर उनको खयाल आया कि कमिश्नर यह न समझ बैठे कि अम्बिकादेवी को देखते ही उनको बुखार चढ़ जाता है। आलतू-फालतू अफवाह उड़ेगी। यह अम्बिकादेवी, जो अभी ही अपने को न जाने क्या समझ बैठी है, क्या-क्या कर देगी। ये पुलिस वाले चाहे कितने ही भले हों, हैं तो पुलिस वाले ही। ढिंढोरा पीटते रहेंगे।

सिगरेट पीते हुए, सोचते-सोचते उन्होंने एक पत्रिका के पन्ने पलटने शुरू किये। इधर-उधर देखा, पर कुछ सूझता-सा नहीं लगता था और

भाषण की प्रतिध्वनि ऐसी हो रही थी मानों दीवारों पर पत्थरों की वर्षा हो रही हो। वे सुनना नहीं चाहती थीं। कुछ देर के लिए बाथ रूम में गईं, पर बाथ रूम में भी कितनी देर रहतीं ?

फिर फोन उठाकर चेट्टियार को बुलाया। चेट्टियार सांभाग्यवश फोन पर थे। श्रीमती रमा चौधरी ने कहा, “आपको मालूम है, यहाँ कम्प्यूनिस्टों ने गड़बड़ी मचा रखी है। करीब एक घण्टे से होहल्ला कर रहा है। आपकी मिट्टी पलीद कर रहे हैं। अगर इन लोगों का यही रवैया रहा तो हम लोग चुनाव जीत चुके।”

“.....”

“देखिए, पुलिस कमिशनर ने कह रखा था कि दो-चार मफ़्टी सिपाहियों को पहरों के लिए मेरे बंगले के पास रखेंगे। वे लोग कल-परसों तक तो थे, पर अब ऐन मौके पर गायब हो गए हैं। मैं घर में अकेली हूँ। चौधरी साहब भी नहीं हैं। मुझे डर लग रहा है। आप ज़रा तुरन्त इस बारे में पुलिस कमिशनर को इत्तिला दे दीजिए। मेहर-बानी होगी।”

“.....”

“हाँ एक बात और याद आ गई—मुझे इसमें शक है कि इन लोगों ने मीटिंग के लिए पुलिस की अनुमति ली है कि नहीं। मुझे ऐसा लगता है कि अनुमति वगैरह कुछ नहीं ली है, नहीं तो पुलिस बन्दोबस्त होता। आप यह भी कमिशनर से कह दीजिए। इन लोगों को इस तरह मनमानी बकवास करने देना खतरे से खाली नहीं है, ज़रूर कहिएगा।”

“.....”

“क्लब जाने का समय हो गया है—कार नहीं है। आप अपनी कार भिजवा सकेंगे ? क्लब में मिलेंगे। पुलिस को ज़रूर इत्तिला दीजिए।” श्रीमती रमा चौधरी ने कहा और इस तरह अपने बाल हिलाए जैसे कोई किला जीत लिया हो।

वे जल्दी-जल्दी साज-शृङ्गार करने लगीं। लगातार सिगरेट पीती जाती थीं। जब चेहरे पर क्रीम की मोटी परत बिठाई तो वे घुटन के मारे पसीने हो गईं। पंखा भी काफ़ी नहीं लगता था। वे किवाड़ खोलने के लिए चलीं, ताकि समुद्र की हवा अन्दर आ जाय। फिर रुक गई। रूमाल से हवा करने लगीं, पर पसीना आता जाता था। विवश हो खिड़की खोलनी पड़ी।

अम्बिकादेवी का धुआँधार भाषण अब भी चल रहा था। श्रीमती रमा चौधरी ने एक बार अपनी तिरछी नज़र फेंकी और यथापूर्व अपना शृङ्गार करने लगीं, ऐसी लापरवाही से मानों कह रही हों—कुत्ते भूँकते हैं तो भूँकते रहें।

अम्बिकादेवी जोर-जोर से कह रही थीं—

“अब आप इन्हीं रमा चौधरी को लीजिए, जिनका आलीशान बंगला आपके सामने है। ये भी आपकी ‘सेवा’ करती हैं। चेष्टियार की मदद कर रही हैं। मानती हूँ कि इन्होंने आप लोगों को जाल दिलवाये हैं। मगर क्यों? इसलिए कि आप उन्हें वोट दें ताकि वे आराम से विधानसभा के भव्य-भवनों में बैठ सकें, जब आप अपनी जान जोखिम में डालकर समुद्र से लोहा ले रहे हों।

“क्या वे आप लोगों से ऐसा बर्ताव भी करती हैं जैसा कि वे अपने कुत्तों से करती हैं? गिड़गिड़ाते हुए आपका सरदार जाता है और उनकी झिड़कियाँ सुनकर दुम दबाकर चला आता है। इन्सान को क्या वे इन्सान की तरह देखती हैं? देखतीं तो क्या आज यह होता कि पति अपने घर जाकर अपनी जमीन-जायदाद की कुर्की देखें और ये यहाँ रंगरेलियाँ करती रहें?

“वे आप लोगों में काम करने का दावा करती हैं, पर तभी तक जब तक उनको गवर्नरों और मन्त्रियों की पार्टियों में इसके कारण निमन्त्रित होने का बहाना मिलता है। आपके ‘सेवकों’ की वह पूछ होती है, जो आपकी भी नहीं होती।” अम्बिकादेवी यह कह ठट्ठा मारकर हँसीं,

पर सुनने वाले स्तब्ध बैठे रहे, शायद उनको उनका ताना समझ में नहीं आया था। उन्होंने फिर कहना शुरू किया—

“और इन रमा चौधरी का तो पेशा ही चन्दा इकट्ठा करना है और उसको हज़म कर जाना है। जब तक कालेज में रहीं, यही करती आईं। जब बाहर भेजी गईं तो बाढ़-पीड़ितों के लिए चन्दा इकट्ठा किया और कपड़े की दुकान में कर्ज चुकता किया। वे आपकी मदद करती हैं। तो पैसा कहाँ से लाती हैं? अपने घर से थोड़े ही लाती हैं? फिर उनके घर की हालत किनसे छिपी है! आप सँभलकर रहिए। इनकी मीठी बातों में न पड़िए। इनके चंगुल में न फँसिए।”

श्रीमती रमा चौधरी से न रहा गया। वे तिलमिलाती हुई बाथ रूम की तरफ गईं जैसे उन पर किसीने तेजाब उलट दिया हो। वे लपकी-लपकी बाहर आईं और अपना थैला लेकर मुँह पर हवा करने लगीं। एक क्षण भी एक जगह खड़ी न हो पाती थीं।

फिर चेट्टियार को फोन किया।

“कार भेजी है कि नहीं?”

“.....”

“पुलिस को इत्तिला मिल गई है न?”

“.....”

“अच्छा।”

श्रीमती रमा चौधरी थैला हिलाती खुशी-खुशी अपने कमरे से नीचे उतरने लगीं—कार का इन्तज़ार करने के लिए। वे पुलिस के आने से पहले ही क्लब चली जाना चाहती थीं। स्वयं पुलिस की पकड़-धकड़ नहीं देखना चाहती थीं।

वे थोड़ी देर पोर्टिको में खड़ी रहीं। इतने में पिछवाड़े से शोर-शराबा सुनाई पड़ा। पुलिस पहले ही पहुँच गई थी। लोग तितर-बितर हो भाग गए थे। अम्बिकादेवी जी कह रही थीं—“यह सभा कैसे हो सकती है, न यहाँ ध्वनि-विस्तारक यन्त्र हैं, न कुर्सी न मेज, न सभा न

सभापति । ये लोग यहाँ बैठे हुए थे । मैं इनसे सिर्फ़ बातचीत कर रही थी । क्या बातचीत करना भी मना है ?”

“यह कैफ़ियत आप कचहरी में दीजिए,” एक पुलिस अफ़सर ने कहा । अम्बिकादेवी और दो-चार मछियारों को वान में चढ़ने के लिए कहा ।

इस बीच श्रीमती रमा चौधरी के लिए चेट्टियार की कार भी आ पहुँची । रमा चौधरी ने मुस्कराते-मुस्कराते चेहरे पर पाउडर की एक और परत लगाई और कार में चढ़ गईं ।

सामने अम्बिकादेवी को लिये पुलिस वान स्टेशन की ओर जा रही थी, पीछे-पीछे एक लम्बी ‘ब्यूक’ गाड़ी श्रीमती रमा चौधरी को क्लब पहुँचा रही थी ।

: १० :

अर्सा हो गया था, जब से श्रीमती रमा चौधरी के बंगले से चैन गायब हो चुका था । हर रोज़ नई समस्या पैदा हो जाती थी । ठाठ-बाट रईसों के थे, परन्तु रईसी कभी की खत्म हो चुकी थी । समस्याओं का पहाड़-सा तैयार हो गया था । कर्ज का भार भी इतना कि ढोना मुश्किल और आदतें ऐसी कि मितव्यय एक असम्भव भयानक सपना-सा लगता था ।

चौधरी साहब ँधर गये हुए थे । वे ज़मीन-ज़ायदाद बेचकर बचा-खुचा पैसा रमा को भेजना चाहते थे, पर रमा को अभी पैसा न मिला था । उन्हें यह भी न मालूम था कि ज़मीन बिकी है कि नहीं । उधार ज़रूर दो-तीन दोस्तों से समय-समय पर मिल जाता था । जैसे-तैसे गुज़ारा चल रहा था ।

बहुत सा घर का सामान, फ़र्नीचर वगैरह, जो रमा चौधरी ने कभी बहुत दौड़-धूप करके इकट्ठा किया था, रातों-रात बिक गया था । चीज़ें लगातार बिक रही थीं । चौधरी साहब को उसकी सूचना भी

नहीं दी गई थी। यह श्रीमती रमा चौधरी का निजी घरेलू महकमा था। चौधरी साहब को इसमें दखल देने का हक नहीं था।

आजकल जुए में भी श्रीमती रमा चौधरी का भाग्य साथ नहीं दे रहा था। घुड़दौड़ में लगातार हार रही थीं। क्लब में भी ताश के खेल में कभी सौ-डेढ़-सौ जीततीं तो कभी दो-ढाई सौ हार जातीं।

परन्तु श्रीमती रमा चौधरी की मस्ती बनी हुई थी। उनका शायद यह खयाल था कि जब तक पति जीवित हैं, यह उनकी जिम्मेदारी है कि पत्नी के लिए आवश्यक धन कमाकर दें। इसलिए किसी बात के लिए फ़िक्र करना वे फ़िज़ूल समझती थीं।

यह ज़रूर था कि आजकल वे तुनकमिज़ाज़ हो गई थीं। जब से मछियारों की बस्ती में सभाएँ होने लगी थीं, उनका स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया था। अपने सामाजिक कार्य के बारे में सोच-सोचकर कभी खौल पड़तीं, मगर अगले क्षण ही जोर-शोर से फिर से अपना काम शुरू कर देतीं। वैयक्तिक कष्टों पर उनका उतना ध्यान न था।

पिछले दिनों उन्होंने बंगले में शहर के गिने-चुने लेखकों को एक पार्टी भी दी। श्रीमती रमा चौधरी सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में शहर के प्रसिद्ध व्यक्तियों से परिचय बनाये रखना अपना कर्तव्य समझती थीं। लेखकों को प्रोत्साहन देना भी उनके बड़प्पन के दायरे में आता था। लेखकों में भी उनके कई अच्छे जान-पहचान के हैं। उनमें से नारायण राव उनके निकट मित्र समझे जाते हैं। श्रीमती रमा चौधरी कभी-कभी उनसे दिल खोलकर बात भी कर लेती हैं।

नारायण राव से जब बहस छिड़ी तो श्रीमती रमा चौधरी ने बड़ी गम्भीरता से सिगरेट का दम खींचते हुए कहा, "कोई निजी समस्या तभी तक समस्या है, जब तक उसको समस्या के रूप में समझा जाता है, वरना वह समस्या ही नहीं है। यह व्यक्तिगत प्रकृति पर निर्भर है—छोटे व्यक्तियों के लिए छोटी समस्या भी हिमालय-सी लगती है, जिसे दूसरा रास्ते का रोड़ा-मात्र समझता है। चालीस मील का फ़ासला

पैदल चलने के लिए लम्बा है, दो दिन का रास्ता है, मगर कार वाले के लिए एक घण्टे की भी दौड़ नहीं। जैसा आप सोचते हैं वैसे ही आपको अपनी समस्याएँ दिखाई पड़ती हैं।”

नारायण राव ने भी उनका समर्थन करते हुए सिर हिला दिया था।

वे किसी अन्य विचार पर आचरण करती हों या न करती हों, इस विचार को जरूर अमल में लाती थीं। शायद इसीलिए वे आराम से कुत्तों की संगति में सिगरेट पी रही थीं, जबकि उनका घर जल रहा था।

आज श्रीमती रमा चौधरी देर से उठी थीं। रात को श्रीमती डगन ने पार्टी दी थी। शहर के सब मान्य सज्जन और देवियाँ उपस्थित थीं। काफी देर तक पार्टियाँ चलती रही। श्रीमती डगन की पार्टियों का क्रम ठीक वैसा ही था जैसा श्रीमती रमा चौधरी का कभी था।

श्रीमती रमा चौधरी श्रीमती डगन को पसन्द न करती थीं। सहयोग की बात तो अलग, उनको वे ईर्ष्या की दृष्टि से देखती थीं। दोनों एक ही शतरंज का खेल खेल रही थीं। दोनों के सामने समय काटना एक समस्या थी। दोनों समाज की ‘उच्चतम’ तह में रहना चाहती थीं, मगर ऊपर से घनिष्ठता का ऐसा अभिनय था कि समझने वाले उनको अच्छा मित्र समझते थे।

श्रीमती रमा श्री डगन से बहुत देर तक बातचीत करती रहीं। श्री डगन को सामाजिक कार्य में दिलचस्पी नहीं है। उनको अपने व्यापार से मतलब। पैसा कमाने की धुन है। चाल-चलन के भी खास पाबन्द नहीं हैं। फिसलते-फिसलते ही रास्ता निकाल लेते हैं। औरतों की सोहबत में मजा लेते हैं।

देखते-देखते ही उनका श्रीमती रमा चौधरी से अच्छा परिचय हो गया। परिचय इतना बढ़ा कि श्रीमती रमा चौधरी ने डगन दम्पति को अपने घर एक पार्टी के लिए निमन्त्रित भी किया। पार्टी अगले शनिवार को थी। आज सवेरे भी डगन ने श्रीमती रमा चौधरी का हाल-चाल

पूछने के लिए फोन किया था ।

श्रीमती रमा चौधरी का मिजाज अक्सर सवेरे गरमाया हुआ रहता, क्योंकि नौकर-चाकर उनके चारों तरफ़ कुछ-न-कुछ फ़रियाद लेकर खड़े रहते । परन्तु आज श्रीमती रमा चौधरी खुश थीं । श्री डगन ने फोन कर उनको टॉनिक-सा दे दिया था । वे कुछ सोचती-सोचती सहसा मुस्करा पड़तीं । शायद वे सोच रही थीं कि श्रीमती डगन को जीतने की कुञ्जी धीमे-धीमे उनके हाथ में आ रही थी । फिर श्री डगन जैसे व्यवित्यों से जान-पहचान करने में हमेशा फ़ायदा ही था ।

श्रीमती रमा चौधरी बाग़ में आराम से बैठी हुई थीं । चार्ल्स ने आकर बताया कि कोई सज्जन आये हुए हैं, अपना नाम उमा महेश्वर राव बता रहे हैं । श्रीमती रमा उमा महेश्वर राव नाम से परिचित थीं, यद्यपि उनको स्वयं कभी न देखा था । उनके ससुर का नाम उमा महेश्वर राव था । कपड़े सँभालती हुई उठीं और बैठक की तरफ़ चलीं ।

कमरे में उमा महेश्वर राव ठाठ के साथ एक कुर्सी पर बैठे हुए थे । खिचड़ी हुए बाल, रौबीला चेहरा, बड़ी-बड़ी घनी मूँछें, साँवला रंग । भारी-भरकम शरीर, कढ़ावर । हाथ में शानदार छड़ी, आंध्र का पहनावा । उनको देखते ही लगता था मानों वे हुक्म देने के लिए ही इस संसार में पैदा हुए हों ।

श्रीमती रमा चौधरी के नमस्ते करने पर उन्होंने उनको बैठने का इशारा किया । उमा महेश्वर राव पुराने ज़माने के आदमी थे । औरतों को दो-चार सीढ़ी नीचे रखने में ही अपनी इज्जत समझते थे । कुछ देर चुप रहे, शायद यह सोचते हुए कि क्या कहा जाय । उनकी नज़र फर्श पर बिछे सुन्दर कालीन पर थी और श्रीमती रमा चौधरी उन पर तरेर रही थीं । चुप्पी बनी रही । फिर श्रीमती रमा चौधरी ने ही बातचीत शुरू करने के लिए पूछा—

“सब-कुछ ठीक तो है ?”

“हूँ,” छड़ी को संवारते हुए उमा महेश्वर राव ने कहा ।

“चौधरी साहब कब आयेंगे ?”

“यह तो तुम्हीं कह सकती हो ?”

“आपका मतलब ?”

“मतलब तो तुम जानती हो ।”

“घर से गये हुए दो-तीन महीने हो गए हैं । जाते ही चिट्ठी जरूर लिखी थी । फिर न चिट्ठी लिखी, न रुपया ही भेजा....” उमा महेश्वर राव को आँखें बड़ी करते देख श्रीमती रमा चौधरी ने भट शिष्टता का अभिनय शुरू किया, “खैर, ये बातें तो बाद में भी हो सकती हैं । पहले आप उठिए, नहाइए-धोइए, आराम कीजिए । रात में सफर कैसा रहा ?”

“मेरी फिक्र मत करो । मैं होटल में नहा-धो आया हूँ । शायद तुम्हें अभी नहाना-धोना है, निबट लो ।” उमा महेश्वर राव ने कहा ।

श्रीमती रमा चौधरी अक्सर ग्यारह-बारह बजे नहाया करती थीं । पर अचानक अपने ससुर जी को घर में देख उन्हें सूझ नहीं रहा था कि क्या किया जाय । मौका पा उन्होंने नहाने-धोने की ठानी ।

श्रीमती रमा चौधरी को गुसलखाने में बीते दिन याद आने लगे । यद्यपि चौधरी साहब से उनका विवाह हुए सालों बीत गए थे, पर पहली बार ही उनके पिता उनके घर आये थे । उनको यह विवाह बिलकुल पसन्द न था । उन्होंने अपने लड़के के बारे में न जाने क्या-क्या उम्मीदें बाँध रखी थीं । श्रीमती रमा चौधरी की उनसे शादी हुई, उन्हें ऐसा लगा मानों उम्मीदों के गुब्बारे काँटों की झाड़ी में जा पड़े हों ।

शादी के कारण बाप-बेटे में ज़मीन-ज़ायदाद का बँटवारा भी हो गया था । इकलौते थे, इसलिए उमा महेश्वर राव जैसे-तैसे ज़मीन की आमदनी उनको भेज दिया करते थे । पर कब तक भेजते ?

श्रीमती रमा चौधरी भी उमा महेश्वर राव से नाखुश थीं । कोई ऐसा दिन न गुज़रता था, जिस दिन वे उन्हें याद न करें, और न कोसें । उनका ख़याल था कि उमा महेश्वर राव उनको उतना पैसा नहीं भेज

रहे थे, जितना कि उनको भोजना चाहिए था। वे अपने ऐश-आराम में ही, उनका खयाल था, सारा पैसा खर्च देते थे। अलावा इसके, श्रीमती रमा चौधरी यह भी सोचती थीं कि अगर उमा महेश्वर राव उनकी शादी का विरोध न करते, तो उनके पति के हाथ में सारी ज़मीन-जायदाद होती। श्रीमती रमा चौधरी के रास्ते में उमा महेश्वर राव कांटे की तरह थे। उनको यह भी शक था कि चौधरी साहब को वे उन्हें छोड़ देने के लिए प्रेरित कर रहे थे।

वे बहुत दिन से सोच रही थीं कि उमा महेश्वर राव से सीधी-सीधी बातें हो जायें। वे उनके घर जा नहीं पाती थीं। वहाँ उनका स्वागत करने वाला कोई न था। शादी के बाद चौधरी साहब एक बार ले भी गए थे; घर के लोग तो अलग, नौकरों ने भी उनसे बातचीत नहीं की थी। उनको इस निगाह से देखा गया था मानों वे एक वेश्या हों। उन दिनों की याद अब भी श्रीमती रमा चौधरी के दिल में चुभती रहती थी।

अब मौका मिला था, जब स्वयं उमा महेश्वर राव उनके घर में थे। वे उनको आड़े हाथ लेने की सोच रही थीं। उन्होंने निश्चय-सा कर लिया था।

नहा-धोकर जब वे आईने के सामने खड़ी हो बाल ठीक कर रही थीं, उनके विचार बदलने लगे। वे सोच रही थीं—कुछ भी हो, है तो वे चौधरी साहब के पिता ही। अगर पैसा मिलेगा तो उन्हीं के यहाँ से मिलेगा। उनसे वैर ठानना अच्छा नहीं है।

जब वे अपने ऊपर यूडिकलोन छिड़क रही थीं, तो उनके विचारों ने एक और चक्कर खाया—आखिर इन लोगों के पास पैसा है ही कितना? सब पहले ही काफ़ूर हो चुका है। चौधरी साहब से मेरी बनती भी कहाँ है? फिर आदमी भी किस काम के हैं? औरतों की तरह घर में बैठे रहते हैं—नालायक, कमज़ोर, डरपोक। उनके बग़ैर भी तो काम चल ही रहा है।

वे रुमाल को लपेटती हुई फिर बैठक की ओर चलीं। उनकी चाल और हाव-भाव से लगता था, मानों वे सोच रही हों—देखें क्या होता है ? मे इन लोगों से कोई डरने वाली नहीं हूँ।

श्रीमती रमा चौधरी जाकर ठीक उमा महेश्वर राव के सामने बैठ गईं। चेहरे पर मुस्कान थी, पर मुस्कान में असाधारण कृत्रिमता थी। वह नकाब का काम कर रही थी।

“आपको यहाँ खाना खाने में तो कोई एतराज नहीं है ?” श्रीमती रमा चौधरी ने कुछ ताने के स्वर में और कुछ आतिथ्य के विनय में पूछा।

उमा महेश्वर राव ने गम्भीरता के साथ कहा, “नहीं।”

श्रीमती रमा चौधरी झट उठकर रसोई में चाल्स से कहने चली गईं। उमा महेश्वर राव बैठक में पड़ी पत्रिकाएँ उलटने लगे। वे भी किसी उलझन में थे। यद्यपि वे मन की बातों को चेहरे पर न झलकने देने की कोशिश कर रहे थे, पर चेहरे पर कभी-कभी गुस्से की झुर्रियाँ पड़ ही जाती थीं।

श्रीमती रमा चौधरी जब वापस आकर बैठीं तो उन्होंने उनसे कहा, “चलो आज घर चलें। शाम की गाड़ी में टिकिट भी रिजर्व करवा दिया है।”

श्रीमती रमा चौधरी चकरा उठीं। उन्हें समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्यों घर बुला रहे हैं।

“सामान वगैरह ठीक करवा लो,” उमा महेश्वर राव ने फिर कहा। उनके बातचीत करने के तरीके से यह साफ मालूम होता था कि उन्हें घुमा-फिराकर बात करने की आदत न थी।

“आखिर क्यों ? हमारे लिए तो आपके घर के दरवाजे बन्द हैं ?” श्रीमती रमा चौधरी ने ताना कसते हुए कहा।

“यह तो तुम्हें मालूम ही है।”

“क्यों, उन्होंने शहर आने से इन्कार कर दिया है ? आपको यका-

यक हमारी ज़रूरत कैसे पड़ गई है ? मुझे कुछ समझ में नहीं आ रहा है ।”

“मुझे यकीन नहीं कि तुम घर की हालत से एकदम नावाकिफ हो । पुरानी बातों को छोड़ो । जाने की तैयारी करो ।”

“आखिर क्यों ?” श्रीमती रमा चौधरी ने ज़िद पकड़ी ।

“क्या तुम नहीं जानती हो ? आखिर बिना किसी काम-धन्धे के लक्ष्मीनारायण (एल० एन० चौधरी—रमा चौधरी के पति) कब तक शहर में रह सकेगा ? ज़मींदारी छीन ली गई है । कई मकानात और ज़मीन वगैरह भी बिक चुके हैं । तब भी दुनिया-भर का कर्ज बना ही हुआ है । आखिर बर्दाश्त करने की भी हद होती है । हम लोग आपको अधिक पैसा न दे सकेंगे । गाँव में रहिए । कम खर्चा होगा, आराम से ज़िन्दगी कटेगी । यह हमारी राय है । मैंने यही बात लक्ष्मीनारायण से कही थी, वह मान गया ।”

“आखिर करते क्या ? लाचारी है । तो क्या वे शहर नहीं आयेंगे ?”

“आयेंगे किस मुँह से, पैसा हो तब न ? इस ढोंग-ढकोसले से क्या फ़ायदा, जब बुनियाद ही खोखली हो गई है ? चलो हम कहते हैं ; शादी हुए अब सालों हो गए हैं और शादीशुदा भी तो गाँवों में रह रहे हैं । चलो ।”

“पर यहाँ मुझे बहुत काम है ।”

“क्या काम है ?”

“यही सामाजिक कार्य । इन गरीब मछियारों की हालत सुधारने की कोशिश करती रहती हूँ । फिर कितनी ही बातें ऐसी हैं, जो मेरे बग़ैर यहाँ चल न सकेंगी ।”

“गरीबों की हालत ही सुधारनी है तो गाँव गरीबी के अड्डे हैं । कितना ही काम कर सकती हो । जितना काम गाँव में हो सकता है, वह भला शहर में क्या हो सकेगा ? जितने काम की गाँव में ज़रूरत है

उतनी शहर में कहाँ हैं ?”

“नहीं, फिर भी—जैसा काम मैं कर रही हूँ, वह शहर में ही किया जा सकता है। गँवारों के बीच रहते-रहते तो मैं पागल हो जाऊँगी। न कोई क्लब, न कोई पार्टी। दिन-रात एक-दूसरे की शक्ल देखते-देखते जी मचल उठेगा। मैं गाँव में कभी नहीं रही, न रहने का इरादा ही है।”

“मगर मैं तुम्हें फिर कहे देता हूँ कि गाँव में जाकर रहने में तुम दोनों का फायदा है, आगे तुम्हारी मर्जी। सामान वगैरह तैयार करवा लो,” उमा महेस्वर राव का अब भी खयाल था कि श्रीमती रमा चौधरी विरोध के बावजूद उनके साथ जाने के लिए राजी हो जायँगी। रमा चौधरी चुप रहीं। वे अपनी छड़ी हिलाने लगे। दीवार पर लगी घड़ी को देखते हुए फिर पूछा, “आप लोग खाना कब खाते हैं ?”

“एक बजे।”

“अभी तो दो-एक घण्टे बाकी हैं। मुझे शहर में थोड़ा काम और है। मैं ठीक वक्त पर आ जाऊँगा। इस बीच तुम अच्छी तरह सोच-समझ लो।” यह कहकर वे चले गए। किसी बाहर उनकी प्रतीक्षा कर ही रही थी।

उमा महेस्वर राव के चले जाने के बाद श्रीमती रमा चौधरी को लगा जैसे कोई ऑपरेशन खतम हो गया हो। वे सिगरेट पीने के लिए ललचा रही थीं। उनके जाते ही सिगरेट पीना शुरू कर दिया। कमरे में चहलकदमी प्रारम्भ कर दी। उनके सामने विकट समस्या पैदा हो गई थी। वे थोड़ी देर इधर-उधर घूमती-फिरती रहीं, फिर पत्रिका लेकर पढ़ने लगीं।

इतने में श्री मुदलियार अपनी नई ब्यूक में आये। आते ही श्रीमती रमा चौधरी का हाथ पकड़कर पूछा, “क्या हाल-चाल है ?”

“सब ठीक है। तुम बंगलौर से कब आये ?”

“बस, अभी चला आ रहा हूँ।”

“खैर, उसके बारे में तो बाद में बातचीत होगी। मैं एक अच्छी आफत में फँसी हुई हूँ। चौधरी साहब के पिता आये हुए हैं। वे मुझे गाँव लिवा ले जाना चाहते हैं। चौधरी वहाँ हैं ही, तुम्हारी क्या राय है ?

“चली जाओ, अच्छा ही है।”

“ताकि तुम्हारा पिण्ड छूटे ?”

“आखिर तुम मेरा बिगाड़ ही क्या रही हो ? बल्कि तुमसे तो मेरा फ़ायदा ही होता है। मुझे तो ऐसा लग रहा है, तुम्हारी परीक्षा हो रही है। चली जाओ।”

“हूँ,” श्रीमती रमा चौधरी ने कुछ सोच-विचारकर कहा।

इन दोनों में झड़-उधर की बातें बहुत देर तक होती रहीं। जब श्री उमा महेस्वर राव ठीक एक बजे कमरे में घुसे तो श्री मुदलियार और श्रीमती रमा चौधरी पास बैठे एक-दूसरे की सिगरेट जला रहे थे।

अथ !

: १ :

नित्यकर्म से निवृत्त हो, अपने बड़े बंगले की बैठक में, श्रीमती रमा चौधरी अंगड़ाइयाँ लेने लगीं। वे थकी, चिन्तित-सी मालूम होती थीं। बाहर जाने की तैयारी में थीं। कार की प्रतीक्षा कर रही थीं।

दीवार पर टंगा कलेण्डर शनिवार दिखा रहा था। श्रीमती रमा चौधरी के जीवन में शनिवार का विशेष महत्त्व रहता आया है। या तो वे किसी पार्टी में इस रोज़ उपस्थित होती आई हैं, या स्वयं पार्टी की आयोजना करती आई हैं। यह उनके जीवन में एक रस्म-सा हो गया है।

उमा महेश्वर राव ने उनको साथ ले जाने के लिए बहुत ज़िद की, परन्तु उमा महेश्वर राव शायद लौहकण को चुम्बक से हटाने की कोशिश कर रहे थे। नागरिक जीवन की श्रीमती रमा चौधरी को लत हो गई थी। वे पानी से बाहर मरती-जीती मछली की तरह तड़पना नहीं चाहती थीं। उमा महेश्वर राव ने बहुत मनाया, पर रमा चौधरी यही कहती गईं कि वे उनके सुभाव पर विचार करेंगी। उमा महेश्वर राव को भूक मारकर अकेला जाना पड़ा।

पर श्रीमती रमा चौधरी के मन में भविष्य का डर लगा ही हुआ था। वे एक चौराहे पर खड़ी थीं—सभी रास्ते परिचित थे, परन्तु वे अपना रास्ता चुन नहीं पा रही थीं।

इस चिन्ता के साथ पार्टी की भी चिन्ता सता रही थी। उनकी पार्टियाँ मद्रास के शिष्ट समाज में प्रसिद्ध थीं। काफी रुपया खर्च किया

जाता था। विनोद-विलास की हर सामग्री प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया जाता था। परन्तु वह सब अब उनके पारिवारिक इतिहास का एक स्मरणीय अध्याय-मात्र रह गया था।

यद्यपि उनकी फ़िर करने की आदत न थी, पर पार्टी के खर्च का खयाल काँटे की तरह चुभ रहा था। पार्टी देना अब उनके लिए ज़रूरी हो गया था—उनके दाँव-पेंच में इसका खास स्थान था। वे यह दिखा देना चाहती थीं कि श्रीमती डगन उनके अहाते में बिना उनकी इज़ाजत के दखल कर रही हैं।

पर पैसा ? बाज़ार में खरीद-फरोख्त करने के लिए उनके पास अपनी कार भी न थी। सवेरे उन्होंने मुदलियार को कार भेजने के लिए कहा तो उन्होंने बताया कि वे दो विदेशी व्यापारियों को महाबलिपुरं घुमाने के लिए ले जा रहे हैं।

श्रीमती रमा चौधरी उस राही जैसी थीं, जो बिजली के खम्भे छूता-छूता रास्ता तय करने का आदी हो। उनके जीवन-मार्ग में व्यक्तियों की वही कीमत थी, जो राही के लिए खम्भों की होती है। वे उनको छूतीं और आगे बढ़ जातीं। मुदलियार एक खम्भे जैसे थे। किसी परम्परागत नैतिकता के अभाव में, उनका जीवन किसी निश्चित पटरी पर नहीं चलता था। वे अपना मार्ग स्वयं निश्चित करती थीं। स्वार्थ उनका आधारभूत सिद्धान्त था। मुदलियार से वह किनारा करती जा रही थीं—अगला खम्भा नज़दीक ही दिखाई दे रहा था।

कार के लिए श्रीमती रमा चौधरी ने श्रीमान् डगन को फोन करना चाहा, पर न जाने क्या सोचकर वे रुक गईं और चेद्वियार को कार भेजने के लिए कहा। चेद्वियार के घर दो-तीन कारें थीं। उन्होंने एक कार दस बजे भेजने का वादा किया। दस बजने में अभी दस-पन्द्रह मिनट बाकी थे।

श्रीमती रमा चौधरी जे थैले से डायरी निकाली, कुछ लिखा, फिर लिखते-लिखते चार्ल्स को पुकारा। चार्ल्स के हाज़िर होते ही उससे

पूछा, “मालूम है आज शाम को बंगले में पार्टी है ? जानते हो क्या-क्या करना है ?

“जी ।”

“घर में सब सामान है कि नहीं ?”

“क्यों, पक्वान घर में तैयार होंगे क्या ? पहले तो कभी नहीं होते थे । होटल से चीजें आती थीं ।”

“हाँ-हाँ, मुझे मालूम है । इस बार भी चीजें आयेंगी, पर कई चीजें घर में बनेगी—पुलाव वगैरह, समझे ?”

“पर.....”

“अगर सामान की जरूरत हो तो अय्यर से पैसे ले लेना ।”

“मगर काम करने वाले.....”

“काम करने वालों की जरूरत हो तो दो-चार अपनी स्वयं-सेविकाओं को बुला लेना, कहना कि मैंने कहा है—पार्टी मेरे घर का काम कोई थोड़े ही है, जाओ ।” थोड़ी देर सोचकर चार्ल्स को बुलाकर कहा, “कुर्सियाँ बाहर बगीचे में मत लगाना, अन्दर हॉल में इन्तजाम करना । ज्यादा आदमी नहीं आयेंगे । बस, बीस-पच्चीस ।”

“मगर हॉल में कालीन नहीं है ।” चार्ल्स ने हिचकते हुए कहा । कालीन कभी का बिक चुका था ।

“कालीन नहीं तो कुर्सियाँ तो हैं । आने वाले कुर्सियों पर बैठेंगे, कालीन पर नहीं, जाओ ।” श्रीमती रमा चौधरी ने झट अपना काला चश्मा निकालकर लगा लिया और कमरे का निरीक्षण करने चलीं । चार्ल्स उनके पीछे था । कालीन के अतिरिक्त कुछ फर्नीचर भी पहले बिक चुका था । वह फर्नीचर श्रीमती रमा चौधरी को बहुत पसन्द था । वे मन-ही-मन दुखी थीं । उनको यह डर था कि कमरे की हालत देखकर उनकी आँखों में आँसू न आ जायँ और चार्ल्स देख ले । काला चश्मा ढाल का काम कर रहा था ।

जब कमरा देख-दाखकर वे बैठक में आईं तो चेष्टियार की भेजी

हुई कार आ चुकी थी। उनका क्लर्क भी उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसको देखते ही, जैसे श्रीमती रमा चौधरी को कुछ याद आ गया हो, झटपट एक चिट्ठी लिखी और अय्यर को देते हुए कहा, “कार में चेट्टियार के घर जाओ और इसका जवाब लाओ। कहना ज़रा जल्दी है।”

कार चली गई और श्रीमती रमा चौधरी सिगरेट सुलगाकर बैठ गई। यद्यपि कमरे में परदे लटके हुए थे, धूप कतई न थी, फिर भी वे काला चश्मा लगाये हुए थीं।

जब कुछ न सूझा तो उन्होंने फोन पर श्रीमती जोसेफ़ और श्रीमती कृष्णस्वामी आदि को निमन्त्रित किया। गवर्नमेण्ट हाउस को भी फोन कर मिलिटरी सेक्रेटरी को आमन्त्रित किया। अखबार के सम्पादकों को भी सूचना दी। दो-चार और मित्रों को बुलाया। फिर क्लब को आइस क्रीम तैयार कर शाम को भेजने के लिए आर्डर दिया। क्लब में उनका नकदी हिसाब न था।

इतने में अय्यर ने आ उनको तीन-एक सौ रुपये के नोट दिये।

“उन्होंने कहा कि इस वक़्त तीन सौ ही हैं, ज़रूरत हुई तो बैंक खुलने पर दो सौ रुपये और भिजवा देंगे।” अय्यर ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

“तुमने उनसे साफ़ कहा कि नहीं, यह उधार नहीं है।”

“जी हाँ, मैंने उनको यह बता दिया कि पार्टी इसलिए दी जा रही है ताकि मछुओं की बस्ती में उनके प्रभाव के लिए अनुकूल वातावरण बन सके। उनकी सहायता के लिए ही है।”

“वे कुछ हिचकिचाए तो नहीं?” श्रीमती रमा चौधरी ने अपनी ऐनक ठीक करते हुए पूछा।

“जी नहीं, वे सिर्फ़ मुस्करा दिए।” अय्यर ने बड़ी गम्भीरता से कहा। वह भी बखूबी श्रीमती रमा चौधरी की पैतरेबाजी शायद समझता था।

अपना थैला लिया। कार में जा बैठीं। शहर की एक बड़ी दुकान

में जाकर ब्रेड, बटर ड्रिन्क्स वगैरह खरीदे। फूलवालों से भी फूल पहुँचाने के लिए कहा गया। बैंड वालों को इत्तिला दी गई। श्रीमती रमा चौधरी ने बंगले में डांस का इन्तजाम भी किया था।

सब काम पूरा कर श्रीमती रमा चौधरी श्री डगन से मिलने उनके होटल में गई। जब कभी वे मद्रास आते तो अपने होटल में एक-दो घण्टे रोज़ बैठा करते। काम तो उनकी गैरहाज़िरी में भी हो जाता था, पर वक्त काटने के लिए वे स्वयं कभी-कभी काम देखा करते। फिर शनिवार के दिन तो होटल में भी अधिक हलचल रहती।

तिमंज़िली विशाल बिल्डिंग। दर्जनों एयर-कण्डीशण्ड कमरे, पचासों नौकर-चाकर, टेलीफोन, ऐश-आराम की हर वस्तु उस होटल में मौजूद थी। धनी-मानी हिन्दुस्तानी और यूरोपियन ही वहाँ ठहरा करते थे। भीड़ नहीं रहती थी।

श्री डगन अपने एयरकण्डीशण्ड कमरे में बैठे कुछ हिसाब देख रहे थे। मुख में मोटा सिगार था। मेज पर दो-तीन टेलीफोन रखे हुए थे। श्रीमती डगन का खूबसूरत फोटो एक कोने में रखा हुआ था। कई किताबें भी अलमारियों में सजाकर रखी हुई थीं। दीवारों पर दुनिया के नक्शे टँगे थे। तक तरफ हिन्दुस्तान का नक्शा था, जिसमें कई जगह लाल बल्ब थे। जहाँ-जहाँ वे जल रहे थे वहाँ डगन परिवार का कारोबार चल रहा था।

श्रीमती रमा चौधरी के आते ही वे उठे, कुर्सी खींचकर उनको जगह दी। दोनों आमने-सामने बैठकर मुस्कराने लगे। श्री डगन ने चांदी के सिगरेट-केस में से एक कीमती सिगरेट निकालकर श्रीमती रमा को दी।

“आपने क्यों तकलीफ़ की? फोन करतीं तो मैं ही खुद आपके घर हाज़िर हो जाता।” डगन ने कहा।

“आपको हजारों काम लगे रहते हैं, मैंने सोचा कि मैं खुद ही आपको शाम की पार्टी की याद दिलाती जाऊँ।” श्रीमती रमा चौधरी

खूब मुस्करा रही थीं, उनके चेहरे पर मुरझाई जवानी फिर खिल-सी गई थी ।

“आप पार्टी दें और मैं भूल जाऊँ, यह कैसे हो सकता है ? यह देखिए—” उन्होंने अपनी एंगेजमेंट-बुक खोलकर दिखा दी और धुआँ छोड़कर मुस्कराने लगे, “आपको लेमनज्यूस का शौक है या कॉफी का ?”

“किसीका भी खास शौक नहीं,” श्रीमती रमा चौधरी ने चश्मा निकालकर आँखें मलते हुए कहा ।

डगन ने अपनी मेज के नीचे बटन दबाया और बाहर आवाज होने लगी ।

“नहीं-नहीं, सचमुच मुझे कुछ जरूरत नहीं है । खाने का समय हो गया है । नहीं-नहीं, आप तकल्फ न कीजिए ।” श्रीमती रमा चौधरी ने कहा ।

“इसमें तकल्फ की क्या बात है ? अच्छा, खैर, खाना ही खाइए । घर में रोज खाती ही हैं, आज यहाँ खाइए ।”

“आप क्या अकेले ही खाते हैं ?”

“जी नहीं, आप हैं न...”

“नहीं-नहीं, मेरा मतलब था...”

“मैंने घर सूचना भिजवा दी है...” श्रीमान् डगन ने नौकर को दोनों के लिए भोजन तैयार करने के लिए कहा ।

“कहिए, आपका काम कैसे चल रहा है ?” डगन ने पूछा ।

“चल ही रहा है । जब से कांग्रेसी लोगों के हाथ में हुकूमत आई है सब-कुछ उल्टा हो गया है—कहते हैं, गाँवों में काम करो, जैसे शहरों में आदमी रहते ही न हों, गरीबी ही न हो । सबकी अपनी अलग-अलग जगह है । हिन्दू माइण्ड ऐसा है—जब इसको वैराग्य होता है तो इसके लिए हिमालय पर पहुँचना जरूरी है । बिना हिमालय के वैराग्य ही नहीं हो सकता, बिना गाँव गये सेवा ही नहीं हो सकती । बेढब खयाल है ।”

“यह आपने खूब कही । पर नकेल तो अब इन लोगों के हाथ में है—जब जिधर घुमाई हमें उधर घूमना पड़ेगा ।”

“हाँ-हाँ, कई बार इच्छा होती है कि यूरोप में जा बसूँ—मगर... मगर....।”

“क्या आपके पति को ऐतराज है ?”

“नहीं...नहीं...फिर भी....”

“हमारी श्रीमती जी के सिर पर आजकल सेवा का भूत सवार है । पहले घूमने-फिरने का था, अब सेवा करने का है—माफ़ कीजिए, औरतों के दिमाग में.....”

“कोई पुर्जा ढीला रहता है, यही न आप कहना चाहते हैं.....” श्रीमती रमा चौधरी हँसने लगीं जैसे उनकी अपनी राय भी यही हो ।

“नहीं-नहीं, मेरा मतलब....” डगन ने मुस्कराते हुए बात टालनी चाही, “आपने तो यह होटल देख ही रखा होगा ।”

“यहाँ मैं एक माल रह भी चुकी हूँ, दुमंज़िले पर । तब मेरा आपसे परिचय न था । आप यहाँ थे भी नहीं । कोई और रिश्तेदार शायद यहाँ थे ।”

“हाँ-हाँ, मेरा एक चचेरा भाई था । मैं कलकत्ता में था । आपने देखा, नया फर्नीचर रखवाया जा रहा है ? मैं अपने निजी कमरे सजवा रहा हूँ । कुछ दिन पहले मैं नीलामी में कुछ फर्नीचर खरीद लाया था, मुझे बहुत पसन्द आया । हिन्दुस्तान में वैसा फर्नीचर मिलना मुश्किल है । आइए, देख आइए । इसी बीच लंच भी तैयार हो जायगा ।”

श्रीमती रमा चौधरी को श्री डगन अपने निजी कमरे में ले गए । वहाँ फर्नीचर सजा रखा था । फर्नीचर को देखते ही श्रीमती रमा चौधरी ने आँखों पर काला चश्मा चढ़ा लिया । वह उन्हीं का फर्नीचर था, जो उन्होंने बड़ी मेहनत से देश-विदेश घूमकर इकट्ठा किया था । उनके दिल में एक ज्वाला-सी उठ रही थी ।

“आपको फर्नीचर पसन्द आया कि नहीं ?” डगन ने पूछा ।

श्रीमती रमा चौधरी के मन में एक बार खयाल आया, कह दें कि वह उन्हीं का फर्नीचर है, परन्तु कुछ सोच-विचारकर मुस्कराते हुए कहा, “हाँ-हाँ, बहुत अच्छा है। यहाँ तो मिलना मुश्किल है।”

“सुना है आपको भी फर्नीचर का शौक है। कुछ दिनों पहले अब्राहम क्लब में कह रहा था कि आपके बंगले में बहुत अच्छा फर्नीचर है। देखने की इच्छा हो रही है।”

श्रीमती रमा चौधरी के मन में इच्छा हुई कि शाम की पार्टी को रद्द कर दिया जाय, पर इन्तज़ाम हो चुका था। अब प्रोग्राम बदलने का वक्त भी न था। “हाँ-हाँ, मामूली-सा फर्नीचर है। पहले कभी था, हमारे फादर-इन-लाँ साहब की आँख उस पर पड़ गई और वे अपने घर सारा फर्नीचर ले गए। अब नया खरीदना है।” एक क्षण रमा चौधरी का मुँह लाल हो गया, फिर शिकनें ढीली पड़ गईं, जैसे एक मुसीबत से बाहर आ पड़ी हों। बिना कुछ पहले सोचे ही उन्होंने सरासर झूठ बोल दिया था।

श्रीमान् डगन और श्रीमती रमा चौधरी फिर ऑफिस के कमरे में चले आए। दुनिया-भर की गप्पें लगने लगीं। डगन से उनकी घनिष्ठता बढ़ती जा रही थी। पर रमा चौधरी को सबसे अधिक यह जानकर खुशी हुई कि श्रीमान् डगन को अपनी पत्नी का सामाजिक कार्य पसन्द नहीं था।

जब वे जाने को तैयार हुईं, तीन बजने को थे। बहुत-कुछ काम था। डगन भी उनके साथ छोड़ने के लिए आये।

“आज शनिवार है, होटल में भी कुछ काम है। माफ़ कीजिए, मैं ज्यादा देर आपके घर न रह सकूँगा।” डगन ने कहा।

“मैं जाते वक्त आपकी दलील आप ही को वापस कर देना चाहती हूँ। होटल में तो आप हर शनिवार को रहते ही हैं, आज हमारे घर ही सही..... घर में तो हमेशा खाते ही हैं आज हमारे होटल में ही सही।” श्रीमती रमा चौधरी ने उनका हाथ पकड़कर मुस्कराते हुए कहा।

“आप बहुत चतुर लगती हैं, अच्छा, जैसी आपकी इच्छा ।”

“आप हमारे घर आकर पछतायेंगे नहीं, इतना मैं कहे देती हूँ ।”

वे चलते-चलते होटल के बाहर आईं । देखती क्या हैं कि उनकी कार में न जाने क्या-क्या खाने की चीजें भरी जा रही हैं । होटल के नौकर पार्सल-पर-पार्सल रखने में व्यस्त थे । रमा चौधरी यह देखते ही दंग रह गईं । उन्हें त्रन्त शक हो गया कि यह डगन की करतूत है । जब उन्होंने भीहें चढ़ाकर श्री डगन की ओर देखा तो उन्होंने मुस्कराते हुए श्रीमती रमा चौधरी का हाथ पकड़कर कहा, “जैसी आपकी पार्टी है वैसी हमारी है, बुरा न मानिए ।”

“आप भी खूब हैं । आपने यह क्या किया ?.....”

“हाँ-हाँ नाखुश न होइए—” डगन ने कहा ।

“नहीं-नहीं, नाखुश नहीं,” उनकी बातचीत से ऐसा लगता था जैसे वे श्री डगन को छोड़कर न जाना चाहती हों, और उस विचित्र परिस्थिति में बातें भी न कर पा रही हों ।

“नाखुश होने की कोई बात नहीं—यह हम होटल वालों का अपना तरीका है—” श्रीमती रमा चौधरी तब तक कार में बैठ चुकी थी । “फिर मुझे मेरी पत्नी ने सब-कुछ-बता भी दिया है, आपको इन चीजों की ज़रूरत हांगी ।” इतने में कार चल पड़ी ।

रमा चौधरी का चेहरा फीका पड़ गया । उन्हें लगा कि उन पर किसीने मनो बर्फ डाल दिया हो । वे सोचने लगीं—तो क्या श्रीमती डगन को मेरी आर्थिक स्थिति के बारे में सब-कुछ मालूम है ? उसकी यह हिम्मत ? वह अपने पति से मेरा इस प्रकार अपमान करवाती है, ताकि मैं उनसे गुस्सा हो जाऊँ, और वह चैन से रहे । उसे भी मालूम हो जायगा कि किस औरत से उसका पाला पड़ा है ! मैं कोई ऐसी-वैसी नहीं हूँ । इन लोगों को कुछ तो तमीज होनी चाहिए ।

जिस समाज में वे रह रही थीं उसमें पैसे की कीमत फिर उनकी समझ में आई । घर जाकर एस्परीन की गोली खाकर, कमरा बन्द कर,

बिस्तर पर लेट गईं । वे मन-ही-मन सिसक रही थीं ।

: २ :

आज रमा चौधरी का बंगला जगमगा रहा था । हर कमरे में रोशनी थी । बिजली के पंखे चल रहे थे । बगीचे की हरी घास भी चमक रही थी । पेड़-पत्तों पर रंग-बिरंगे बल्ब जल रहे थे । बर्दी पहने नौकर बड़ी-बड़ी थालियाँ ले इधर-उधर भाग रहे थे । उनके घर में पार्टी थी ।

श्रीमती रमा चौधरी ने अपनी जवानी पार्टियों और क्लब के आनन्दमय वातावरण में गुजारी थी । पार्टियों में उनका व्यक्तित्व निखर आता था, एक चुलबुलापन-सा आ जाता था । उनको देखकर लगता था जैसे किसी छटपटाती मछली को पानी मिल गया हो ।

उन्होंने कीमती पर सादे कपड़े पहन रखे थे—नीली साड़ी, नीली जाकेट, नीला थैला । चेहरे पर पाउडर के साथ लाल रंग की परत भी लगी हुई थी । हाँठ लाल, भौंहें कटी हुई, घुँघराले वाल पीछे की ओर लहरें खा रहे थे । कमरे की तेज़ रोशनी ने उनके सौन्दर्य को और भी बढ़ा दिया था ।

श्रीमती कृष्णस्वामी ने सफेद रंग की कीमती साड़ी पहनी हुई थी । बालों पर फूलों के गुच्छे, माथे पर बड़ा लाल सिन्दूर का टीका । हाव-भाव में निश्चिन्तता और अभिमान । वे सञ्भ्रान्त महिला लगती थीं ।

श्रीमती डगन भी सज-धजकर, बन-ठनकर आई हुई थीं । उनके साथ उनके पति भी पश्चिमी लिवास में थे—सफेद रेशमी कोट, पेष्ट, काली नेकटाई । दोनों लगातार सिगरेट पीते जा रहे थे । श्रीमती डगन निरन्तर मुस्करा रही थीं । मुस्कराहट के कारण उनकी कनखियों और गालों पर झुर्रियाँ दिखाई पड़ रही थीं ।

श्रीमती जोसेफ भी अपने पति के साथ उपस्थित थीं । चेट्टियार और मुदलियार भी निमंत्रित थे । पर उनके साथ न उनकी पत्नी ही थीं, न

कोई अन्य दोस्त-दास्त ही। वे अकेले, अनमने-से, पेण्ट की जेब में हाथ डाले, मुस्कराते-मुस्कराते इधर-उधर घूम रहे थे।

गवर्नर के मिलिटरी सेक्रेटरी, सरकार के कई ऊँचे कर्मचारी, शहर के पुलिस और कारपोरेशन के अधिकारी भी पार्टी में निमंत्रित थे। एक कोने में दो-तीन पत्रकार और एक फोटोग्राफर ऐसे बैठे हुए थे, जैसे बेंडवालों की तरह पार्टी के लिए उनकी भी जरूरत हो।

कुल मिलाकर तीस-पैंतीस व्यक्ति थे। कमरा काफी बड़ा था, पार्टी आदि के लिए ही उसका खास निर्माण किया गया था। कभी दीवारों पर कीमती चित्र थे। अब दो-चार फोटो जरूर थे, अन्यथा दीवारें नंगी थीं। दरवाजों के पर्दे भी पुराने हो गए थे। पहले कमरे में एक ही तरह का फर्नीचर था, अब हर कमरे से कुछ-न-कुछ बटोरकर वहाँ रख दिया गया था। छः मेजें रखी हुई थीं, उनके चारों ओर पाँच-छः कुर्सियाँ थीं और हर मेज पर फूलों के गुलदस्ते।

श्रीमती डगन अपने पति के साथ बैठी हुई थीं। अन्य लोग अपने-अपने मित्रों के साथ थे। बातचीत चल रही थी। भोजन भी होता जाता था। रमा चौधरी नौकरों को हुक्म देने में व्यस्त थीं। कमरे में एक तरफ़ मधुर संगीत बजाया जा रहा था।

और बाहर, फाटक से बाहर सड़क पर, और पिछवाड़े मछुओं का खासा झुण्ड जमा हो गया था। भूखे-नंगे, बड़े-बूढ़े, बच्चे, सुस्त, खिन्न, रात की ठण्डी समुद्र की हवा में खड़े आश्चर्य से श्रीमती रमा चौधरी के बंगले की ओर ताक रहे थे।

न जाने क्यों, जब-जब श्रीमती रमा चौधरी के बंगले में रोशनी की जाती तो वे अपनी टूटी-फूटी भोंपड़ियों का अंधेरा छोड़ बाल-बच्चों के साथ बंगले की आँगन की दीवार के सहारे घंटों खड़े रहते।

श्रीमती कृष्णस्वामी ने श्रीमती रमा से हँसते-हँसते पूछा, “खाना बहुत बढ़िया बना है, रसोइया बदल दिया है क्या?”

श्रीमान् डगन की ओर देखते हुए उन्होंने कहा, “नहीं तो, और

मँगाऊँ क्या ?” श्रीमती रमा चौधरी मुस्कराती-मुस्कराती उस मेज पर गईं जहाँ सरकारी कर्मचारी बैठे हुए थे। वे श्रीमती रमा चौधरी के तो मित्र थे ही, उनकी हर पार्टी में भी हमेशा उपस्थित होते थे। श्रीमान् जोसफ़ ने पूछा, “मि० चौधरी कैसे हैं ?” श्रीमती रमा चौधरी ने इधर-उधर देखा जैसे प्रश्न सुना ही न हो और पूछा, “सब ठीक तो है ?”

“हाँ-हाँ, बिल्कुल ठीक।” कारपोरेशन कमिश्नर ने कहा।

“हम चाहते हैं कि आप ऐसी पार्टियाँ और अधिक दिया करें - क्या बढ़िया खाना है !” गवर्नर के मिलिटरी सेक्रेटरी ने अपनी राय दी। श्रीमती रमा चौधरी ने उनकी पीठ थपथपाई मानों सालों का परिचय हो।

“इस बार कई महीनों बाद आपने पार्टी दी है, परन्तु आपकी एक पार्टी ऐसी होती है जो दूसरों की दस का मुकाबला करे।” एक पुलिस के अधिकारी ने श्रीमती रमा चौधरी की ओर देखते हुए कहा। मुदलियार और चेट्टियार को एक ही मेज पर बैठे, मुस्कराते, श्रीमती रमा चौधरी ने देखा।

श्रीमती रमा चौधरी उनके पास गईं और कहा, “तुम भी अच्छे भलेमानस हो, अपनी पत्नियों को क्यों नहीं लाए ?” दोनों भँप-से गए। जो सज्जन पत्नियों के साथ आये थे, उनको ऐसी तिरछी नज़रों से देख रहे थे जैसे कोई दो नामाकूल गँवार आ बंठे हों।

“यह क्या चेट्टियार तुम्हारा खाना खत्म भी हो गया ?”

“क्या-क्या खाऊँ, पेट में जगह हो तब न ?”

“खैर,” श्रीमती रमा चौधरी ने डगन की ओर देखा। वे भी भोजन से निवृत्त हो, होंठ पोंछ रहे थे। श्रीमती डगन ने तो सिगरेट भी सुलगा ली थी।

“बाल्सं, चाल्सं,” श्रीमती रमा चौधरी ने बरामदे की ओर मुँह करके कहा, “सिगरेट लाओ।”

“चेट्टियार, क्या आप डगन को जानते हैं ? आप तो जानते ही होंगे

मुदलियार ?” श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा ।

“नहीं तो...” चेट्टियार ने कहा । नीचा मुख किये मुदलियार पुडिंग खाते जाते थे, क्योंकि वे भली भाँति जान गये थे कि उनसे वह प्रश्न सभ्यतावश पूछ लिया गया था ।

“आइए आपका परिचय करा दूँ । वे बहुत मशहूर आदमी हैं । कई कारोबार हैं । माने हुए रईस हैं । मैं तो सोच रही थी आप उन्हें जानते हैं । आइए मिलाऊँ ।” चेट्टियार गले का बटन ठीक करते हुए श्रीमती रमा चौधरी के पीछे हो लिए ।

“खाना बहुत अच्छा रहा,” श्रीमती डगन ने मुस्कराते हुए कहा । उनकी मुस्कराहट में कुछ शरारत थी । परन्तु श्रीमती रमा चौधरी को नीचा दिखाने के लिए न केवल उन्हें अभी अनुभव की ही जरूरत थी, परन्तु साहस की भी आवश्यकता थी । श्रीमती रमा चौधरी ने भट होंठ चपटे कर कहा, “खाना तो क्या है ? सब आपकी मेहरबानी है ।” किसी को कुछ भी न मालूम हुआ ।

“ये हैं मि० डगन और ये हैं मि० चेट्टियार तथा ये हैं इनकी पत्नी श्रीमती डगन ।” रमा चौधरी ने परिचय कराया और तीनों ने मुस्कराते-मुस्कराते हाथ मिलाया ।

“रमा, तुमने तो कुछ खाया ही नहीं ?” श्रीमती डगन ने पूछा, “अब तो सबका खाना परोसा जा चुका है, कई खा भी चुके हैं । बैठो भी ।” श्रीमती रमा चौधरी वहीं बैठ गई । श्री चेट्टियार भी पास वाली एक कुर्सी घसीटकर बैठ गए ।

“चेट्टियार इस इलाके से चुनाव में खड़े हो रहे हैं ?” श्रीमती रमा चौधरी ने श्री डगन से कहा ।

“हूँ-हूँ, आजकल आप जैसे व्यक्तियों की विधानसभाओं में बहुत जरूरत है, उम्मीद है आप जरूर सफल होंगे ।” डगन ने कहा ।

“उम्मीद है, पर...पर, जीत गया तो बस; वह श्रीमती रमा चौधरी की मेहरबानी होगी । यों तो कांग्रेस और कम्युनिस्ट पार्टी दोनों ने नाक

में दम कर रखा है। अब ये सोशलिस्ट भी मूँछें ऐँठने लगे हैं, जीतना है तो टेढ़ी खीर, पर देखें क्या होता है ?”

“होगा क्या ? आप जीतेंगे, श्रीमती रमा चौधरी ने मुख में कौर रखते हुए कहा।

“आप जैसों को जीतना ही चाहिए, वरना इन कांग्रेसियों के हाथ तो देश का व्यापार चौपट हो जायगा—अधिक उत्पत्ति चाहते हैं और व्यापारियों को कर से लादना भी चाहते हैं। व्यापारी पूँजी ही लगाये या सरकार को कर दे। बिना पूँजी के उत्पत्ति अधिक नहीं हो सकती। अधिक उत्पत्ति हो भी गई तो अधिक कर भी लगेगा। फिर व्यापारी भला पैसा ही क्यों लगाये ?” डगन ने कहा।

“आप ठीक कहते हैं,” चेट्टियार ने हाँ-मैं-हाँ मिलाते हुए कहा।

“मगर आप जैसे आदमी चुने गए तो अच्छा है। कम-से-कम ये लोग व्यापार के पहाड़े तो जानें। ऐरा-गैरा नत्थू-खैरा भला शासन क्या करेंगे ? बन्दरों के हाथ अज़ार दे दिए तो घर बन चुका।” श्री डगन का यह कहना था कि सबके-सब ठट्ठा मारकर हँसने लगे।

“आजकल कांग्रेस का बोलवाला है, दो-चार स्वतन्त्र सदस्य क्या कर सकते हैं ?” चेट्टियार ने पूछा।

“इस अनियन्त्रित भुण्ड को हाँक सकते हैं। भारत इन्हीं के हाथ में रहा तो मैं सोच रहा हूँ कि दक्षिणी अमेरिका में बस जाऊँ। मगर मेरी पत्नी……” मि० डगन पत्नी की ओर देखने लगे।

“अमेरिका जाओगे तो भारत आने की कोशिश करोगे। भला तुम मरदों का क्या एतबार ? क्यों रमा ?” सब-के-सब फिर हँसने लगे।

“खैर, आप लोग राजनीति के बारे में बातें कर रहे हैं, मैं ज़रा अभी आई।” श्रीमती डगन उठकर उस मेज़ पर गई, जहाँ श्रीमती कृष्णस्वामी और श्रीमती जोसफ़ वगैरह बैठी हुई थीं।

भोजन समाप्त हो चुका था। लोग धूम्रपान में मस्त थे। बेंड ने भी स्वर बदल दिया था। उसमें कुछ तेज़ी आ गई थी। नाच के लिए

उपयुक्त वातावरण बन रहा था ।

“क्या हाल है ?” श्रीमती डगन ने श्रीमती कृष्णस्वामी और श्रीमती जोसफ़ से पूछा ।

“चल रही है दुनिया, सुना है तुमने कोई स्कूल खुलवाया है ?”

“स्कूल क्या है यतीमखाना है । कभी तुम देखने आना । क्या अच्छे-अच्छे बच्चे हैं, बिना माँ-बाप के ! कभी बेचारे भीख माँगते-माँगते गली-गली फिरा करते थे—अब उनको एक रास्ते पर लाने की कोशिश की जा रही है । किसी दिन वे भी अपने पैरों पर खड़े हो जायेंगे ।” श्रीमती डगन ने अति विनय का अभिनय करते हुए कहा ।

“सब आपकी मेहरबानी है,” श्रीमती जोसफ़ ने कहा, “क्यों मिसेज़ कृष्णस्वामी, आपकी पार्टी लैण्ड आर्मी बना रही है न ? मैं कहती हूँ कि उनको बैग्स आर्मी बनानी चाहिए । इससे भिखमंगे भी जाते रहेंगे और काम-का-काम भी होगा ।”

“तुम ये बातें नहीं छोड़ोगी ?” श्रीमती कृष्णस्वामी भुंभलाईं, फिर मुस्कराते हुए कहा, “आज खाना अच्छा बना है । तुम्हें कैसे लगा था ?”

“तो खाना आपको अच्छा लगा ?” श्रीमती डगन ने उत्सुकता से पूछा । संगीत ज़ोर पर था । फिर वे धीमे-धीमे श्रीमती जोसफ़ के कानों में कहने लगीं, “हमने ही अपने होटल से सब चीज़ें भिजवा दी थीं । आप जानती ही हैं । आजकल रमा की हालत कोई अच्छी नहीं है । हर वक्त पैसे की इल्लत लगी ही रहती है ।”

“रमा क्या इतनी बेशर्म हो गई है कि आपने चीज़ दी और उसने ले ली ? यानी पार्टी तो आपकी हुई, उसकी क्या हुई ?” श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा ।

“लेने की तो उसकी आदत है । उसने किसको ऐसा छोड़ा है जिससे कुछ न लिया हो ?” श्रीमती जोसफ़ ने बातों में अपनी बात मिलाई ।

“अब इनको मालूम होगा कि इनकी जगह कहाँ है । उनको वहीं

तक जाना चाहिए जहाँ तक वे जा सकती हैं, फालतू कूदने-फाँदने से बचा फायदा ?” श्रीमती डगन ने खुशी-खुशी कहा ।

“रमा को अपनी जगह अच्छी तरह मालूम है । वह देखिए ।” श्रीमती रमा चौधरी श्रीमान् डगन के पास बैठी, हँस-हँसकर बड़ी आत्मीयता से बातें कर रही थीं । दोनों की आँखें एक-दूसरे पर थीं । श्रीमती डगन की आँखों में खून उतर आया । “मैंने सोचा था कि यह बिल्ली की तरह गुस्सा करेगी, पर यह क्या कुतिया की.....वेशर्म ।” श्रीमती डगन उबलने लगीं । उनका पेंतरा फालतू गया था । श्रीमती रमा चौधरी को शर्म तो अलग, उनसे बातचीत करने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट भी न हो रही थी । फिर श्रीमती डगन से भी उन्होंने ऐसे बातचीत की जैसे उन्हें कुछ मालूम ही न हो । अब, जब श्रीमती डगन ने अपने मित्रों से कहा तो उन्होंने इसे ऐसे टाल दिया जैसे श्रीमती रमा चौधरी के जीवन में यह रोज़मर्रा की घटना हो ।

श्रीमती डगन अपनी साड़ी संभालती हुई पति के पास गईं । अन्दर यद्यपि वे आग हो रही थीं, फिर भी मुस्कराकर श्रीमती रमा की ओर देखा । (सभ्यता की ओर कुछ देन हो या न हो, कृत्रिम संयम जरूर है ।)

“अब काफी देर हो गई है, आज होटल में भी एक फंक्शन है ।” श्रीमती डगन ने पति के हाथ-में-हाथ डालते हुए कहा ।

“पर मैंने रमा चौधरी के साथ नाचने का वचन दे दिया है । अच्छा, जरा ठहरो !” श्री डगन ने पत्नी से कहा ।

“मैं ज़रा अभी आई, आप बातें कर लीज़िए ।” श्रीमती रमा चौधरी ने कहा और श्री चेदियार को साथ लेकर बरामदे में चली गईं । “गाँववालों को भी खिलाने-पिलाने का इन्तज़ाम मैंने करा दिया है । आप जानते ही हैं । गाववालों को खाना-पीना चाहिए, न कि धुएँधार भाषण, आखिर मछुए ही तो हैं । आप बेफिक्र रहिए । उनके सब वोट आपको ही मिलेंगे ।”

“खैर, कोई बात नहीं, जब तक आप हैं भला मुझे क्या फिक्र ?”

दोनों फिर कमरे में आ गए। श्री डगन ने पत्नी का हाथ छोड़कर श्रीमती रमा से कहा, “आओ, नाच भी हो जाय।” श्रीमती डगन चेहरा पोंछती हुई बरामदे में चली गई। श्री डगन और श्रीमती रमा चौधरी संगीत के साथ-साथ घेरे ले-लेकर नाचने लगे।

श्री मुदलियार ने, जो अकेले एक खम्भे के सहारे खड़े थे, सिगरेट पर एक लम्बा दम लिया और धुआँ उगलते हुए सिगरेट फेंक उसको जूते से दबा दिया। इधर-उधर देखा और जब में हाथ दे बाहर बगीचे में चले गए।

नाच काफी देर तक चलता रहा। जो नाचने के शौकीन थे, नाचते रहे और देखने वाले वहाँ बैठे रहे। कमरे की घड़ी में दस बज रहे थे। धीरे-धीरे जाने वाले जा भी रहे थे। श्रीमती डगन और श्री डगन जाने में सर्वप्रथम थे।

जैसे-जैसे लोग फाटक में से अपनी कारों में निकलते जाते थे, सड़क के किनारे मछुए अपनी-अपनी रकाबियाँ, टोकरियाँ, तौलियाँ लिये भयभीत शक्ल बनाये फाटक के पास इकट्ठे होते जाते थे।

अभ्यागतों की भीड़ चली गई। मछुओं को बचा-खुचा भोजन दिया गया। जब वे एक-दूसरे पर लपक-लपककर आते तो गोरखा डंडा मारकर उनको पीछे कर देता। किसीको पुलाव मिला, किसीको कूर्मा, किसीको रोटी, किसीको चावल, किसीको कुछ भी नहीं। कुछ देर हो-हल्ला हुआ, फिर एकदम शान्ति। उनके खाने-पीने का यही प्रबन्ध था।

पास में कुत्ते कूड़े में पड़ी हड्डियों का बड़े चाव से खा रहे थे।

: ३ :

जब श्रीमती रमा चौधरी के बंगले के सामने टैक्सी रुकी तो बरामदे में कोई न था। टैक्सीवाले ने हार्न बजाया। चार्ल्स कहीं पिछवाड़े से भागा-भाग आया। मगर तब तक रमा चौधरी के पति टैक्सी से

उतर चुके थे और बैठक में चले गए थे ।

चौधरी साहब के बाल बिखरे हुए थे । चेहरे पर थकान थी । कन-पटी के सफ़ेद बाल और घने-से लगते थे । लगातार सिगरेट पीते जा रहे थे । उनकी आँखों में एक प्रकार की शून्यता थी । व्यक्तित्व पर अस-मर्थता की छाप ।

“कहाँ हैं वे ?” उन्होंने चार्ल्स से पूछा । चार्ल्स ने सामान एक तरफ़ रखा और हाथ जोड़कर कहने लगा, “बाहर गई हुई हैं । चुनाव का कुछ काम है ।”

“कब गई थीं ?” चौधरीजी की आवाज़ में खानदानी रौब था ।

“कल शाम को गई थीं ।”

“रात भी नहीं आई ?”

“जी नहीं । कह गई थीं कि आज सवेरे आयेंगी ।”

“अकेली गई थीं ?”

“जी नहीं, चेट्टियार साथ थे । उन्हीं का चुनाव है ।”

“हूँ । नहाने का इन्तज़ाम करवाओ । अय्यर को नहाने के बाद मेरे पास हाज़िर करो, समझे ।” चौधरी साहब, सिगरेट पर दम खींचते-खींचते लम्बे डग रख-रखकर, चहलकदमी करने लगे ।

श्री चौधरी अपनी पत्नी को दूध की धुली समझते हों, ऐसी बात नहीं । उनको अपने अनुभव ने इस विषय में किसी संदेह की गुञ्जाइश न छोड़ी थी । उनके पिता ने भी उनको वस्तु-स्थिति बता दी थी । वे भुंभलाये हुए थे । उनके चलने से लगता था कि वे हमेशा के लिए अपनी पत्नी से निपटने के लिए आये हों ।

वे यकायक रुके और फिर चार्ल्स को बुलाकर पूछा, “मुदलियार यहाँ कब आये थे ?”

“आजकल तो वे अक्सर नहीं आते हैं । सुना है, वे अब बंगलौर में रहते हैं ।”

“ये कब बंगलौर गई थीं ?”

“अर्सा हो गया इनको गये हुए, हुजूर !”

“अच्छा, जाओ ।”

चार्ल्स पर्दे की आड़ में खड़ा हो, हाथ मल-मलकर शक्ल बनाने लगा । किसीका घर जल रहा था और वह उसको जलता देख खुश हो रहा था । मनुष्य की प्रकृति विचित्र है—या तो खुद वह एक तमाशा हो जाता है, या तमाशबीन बना रहता है ।

चौधरी ने सिगरेट एश ट्रे में फेंकी और कुर्सी पर सिर पर हाथ दे बैठ गए । उनको शायद यह पसन्द न था कि नौकर से अपनी पत्नी के बारे में पूछें, पर दूसरा रास्ता ही क्या था ? किससे जाकर पूछें कि उनकी पत्नी क्या कर रही हैं ? और पूछे बगैर भी कैसे रहें ? फिर पुराने नौकरों से छिपा ही क्या है ?

“क्या कहती थीं कि आज सवेरे आयेंगी ?” श्री चौधरी ने उताबले-पन में कुछ याद करते हुए पूछा ।

“जी हाँ ।” चार्ल्स ने बताया ।

“सवेरा हुए तो काफी देर हो गई है ।”

“शायद वे चेट्टियार के घर पहुँच गई हों ।” क्या फोन कर दूँ हुजूर ?”

“हाँ-हाँ, नहीं-नहीं, ठहरो……खैर,” चार्ल्स की तरफ चौधरी एकटक देखने लगे, जैसे कुछ निश्चय कर रहे हों । “कहा था न कि सवेरे आयेंगी । थोड़ी देर में आ ही जायँगी । जाने दो ।”

चौधरी साहब अपनी तरफ से पूरी कोशिश कर रहे थे कि मन के तूफान का भान उनके हाव-भाव व बातचीत से न हो । पर कहीं पेड़ों की आड़ में तूफान छिपा है ?

वे चेट्टियार को यह भी न बताना चाहते थे, वे जानते हैं कि उनका, उनकी पत्नी से क्या सम्बन्ध है । उनकी अपनी ही तौहीन होती । वे ऐसी प्रकृति के आदमी थे, जो गलती देखकर आँखें मूँदने में अक्ल-मन्दी समझते थे, बजाय उसको देखकर उसको सुधारने में होहल्ला करने

के । चौधरी साहब लाचारी के बुत-से थे ।

कुछ देर और वे कमरे में इधर-उधर घूमे । उनकी चहलकदमी से लगता था कि किसी उधेड़-बुन में, उन्होंने घंटों चलते-चलते काट दिए ह और कहीं पहुँच नहीं पाए हों । वे एकान्त में रहने के आदी हो गए थे । सिगरेट के धुएँ में न जाने उन्होंने कितनी लड़ाइयाँ लड़ी थीं, न जाने उन्होंने कितनी बार अपनी पत्नी को सपनों में नीचा दिखाया था । पर...

उनके रोज़मर्रा के कार्य और चौबीस घंटों की फिक्र से लगता था कि उनमें किसी अपराध की भावना ने छत्ता बना लिया हो । वे शायद सोचते थे कि पत्नी की देख-भाल करना पति का कर्तव्य है । अगर पति पत्नी के आनन्द के लिए आवश्यक सामग्री और धन नहीं दे पाता है तो वह बिगड़ेगी नहीं तो क्या होगी ? वे अपनी पत्नी को इस तरह समझने की कोशिश करते आ रहे थे । अपने को ही अपराधी मानते थे ।

पर जब से उनके पिताजी को भी उनकी घरेलू हालत मालूम हो गई, तो उनका पारा भी चढ़ा । उनको रमा चौधरी एक चुड़ैल-सी लगने लगीं, जिसने उनके घर को बरबाद कर दिया हो । उनमें बिजली की शक्ति-सी आ गई, उनकी आवाज़ में बादलों का-सा गर्जन भर आया, पर हो सकता है कि उन गरजते बादलों में कहीं अब भी संचित स्नेह के वाष्प हों ।

उन्होंने अपना कोट उतारकर कन्धे पर रखा और सीढ़ियों से अपने कमरे की ओर चलने लगे । वे ऐसे चल रहे थे जैसे एक-एक क़दम से आवाज़ आ रही हो—देखें अब क्या होता है ?

जब वे दूसरी मंजिल की बैठक में पहुँचे तो उनको अपनी आँखों पर ही विश्वास न हुआ । सारा कमरा खाली पड़ा था । न फर्श पर पर्शियन कालीन था, न दीवारों पर कीमती तस्वीरें, खिड़कियों पर पर्दे भी न थे । फर्नीचर के नाम बेंत की चार-कुसियाँ रखी हुई थीं ।

कभी वह कमरा उनके घर में सबसे अच्छी तरह सजा हुआ था ।

मेहनत से कहीं-कहीं से इस कमरे के लिए फर्नीचर इकट्ठा किया गया था। इसकी सजावट के लिए हजारों रुपये खर्च किये गए थे। यकायक श्री चौधरी के मन में मित्रों के प्रशंसात्मक वाक्य गुञ्जित होने लगे। मित्रों का कहना था कि ऐसी बैठक उन्होंने कहीं मद्रास में न देखी थी और वही कमरा एक क़ब्र की तरह अब सूना था।

चौधरी ने बेंत की कुर्सी पर अपना कोट फेंका और खिड़की के पास जाकर फिर चार्ल्स को पुकारने लगे।

चार्ल्स भागा-भागा आया और इससे पहले कि श्री चौधरी कुछ पूछते, कहने लगा, “जी, नहाने के लिए पानी गरम हो रहा है। दो-चार मिनट में बाथरूम में पहुँचवा दूँगा।”

“खैर, अय्यर आया कि नहीं?” श्री चौधरी अभी यह सोच रहे थे कि चार्ल्स से फर्नीचर के बारे में पूछा जाय कि नहीं।

“जी, वे तो अभी नहीं आये। आजकल वे ग्यारह बजे से पहले आने का नाम नहीं लेते हैं।” चार्ल्स और अय्यर की बनती न थी। वे एक-दूसरे की चुगली करना अपना फ़र्ज समझते थे।

“क्यों?” चौधरी साहब ने पूछा।

“काम ही नहीं है।”

“हूँ,” वे इधर-उधर देखने लगे, जूते से फ़र्श कुरेदने लगे।

“जी, अय्यर ने तीन हजार रुपये का कालीन सात सौ रुपये में बेच दिया था। उसने, सुना है, बेचने-बाचने में अपनी जेब भी गरम की।”

“हूँ, तुमको कैसे मालूम?”

“यों ही लोगों को कानाफूसी करते सुन लिया था। गुस्ताखी माफ़ हो, हुज़ूर!”

“हूँ!” चौधरी साहब गम्भीर स्वभाव के व्यक्ति थे, पर उनकी गम्भीरता ऐसी न थी जो दूसरों को मूक कर दे। उसमें एक आकर्षण था। उनकी चुप्पी दूसरों को बाचाल बना देती थी।

चार्ल्स में बढ़ती उम्र की बुरी आदत थी—बकवास करने की। वह

चौधरी साहब के खानदान में तब से था जब से रमा चौधरी उस घर की सदस्या हो गई थीं। उनके साथ उसने भी उतार-चढ़ाव देखे थे। रईसी के ठाठ देखे थे और तंगी की तकलीफें भी। वह कुत्ते की तरह मालिक के मन की बात जान जाता था।

“जी, यहाँ का फर्नीचर भी नीलाम हो गया है।”

“क्यों ? नया फर्नीचर खरीदने का इरादा है ?”

“जी नहीं, पैसे की तंगी थी।”

“इतनी भी तंगी क्या ? मैं तो यहाँ रुपया छोड़ गया था, क्या घुड़दौड़ में……” श्री चौधरी कहते-कहते यकायक रुक गए। “खैर, अच्छा तुम जा सकते हो। गुसलखाने में पानी रखवाओ।”

श्री चौधरी खिड़की से बाहर देखते-देखते वहीं खड़े रहे। उनका दिल, जो पहले से ही खोल रहा था अब शायद आग हो रहा था, आर यह भी हो सकता है कि आग होकर राख हो गया हो। वे निश्चल खड़े थे, स्तब्ध, मूर्तिवत्।

जब रमा चौधरी घर आई तो उनके पति गुसलखाने में थे। चार्ल्स ने उनके बारे में बताया। रमा चौधरी सिर हिलाकर अपने कमरे में चली गईं। कमरे को अन्दर से बन्द कर दिया।

यद्यपि महीनों बाद पति घर आये थे, तथापि वे सम्भवतः उनसे मिलने के लिए उत्सुक न थीं। अगर थी भी तो वे उस उत्सुकता को छिपा रही थीं। उनको शायद यह भी मालूम था कि पति क्यों हठात् घर वापस आ गए थे।

जब नहा-धोकर चौधरी साहब नीचे बैठक में आये तो उनकी करीब-करीब वही हालत थी, जो नहाने से पहले थी। फर्क इतना था कि बाल ठीक कर लिए थे, कपड़े साफ़ थे। फिर पहले की तरह हाथ बाँधे चहलकदमी करने लगे।

चार्ल्स को बुलाकर पूछा, “वे आई हैं या नहीं ?”

“जी, आ चुकी हैं, अपने कमरे में हैं।”

“जाकर पूछो कि मैं आ सकता हूँ कि नहीं,” उनके घर में एक परम्परा चली आती थी कि कोई भी किसीके कमरे में बिना इजाजत के नहीं जाया करता था। यों तो चौधरी साहब के घर में परदे का रिवाज था। श्रीमती रमा चौधरी पर्दा नहीं करती थीं, परन्तु कमरे में किसी को बिना बुलाये नहीं घुसने देती थीं।

चार्ल्स ने आकर बताया, “मालकिन नहा रही हैं। भोजन का समय हो रहा है, भोजन के समय मिलेंगी।”

“हूँ,” चौधरी साहब ने तिरछी नज़र से देखा और बाग में चले गये। पेड़-पत्तों को देखते हुए इधर-उधर घूमने लगे। बरामदे के एक कोने में कुत्ते बँधे हुए थे। कुत्ते उनको देखकर दुम हिलाने लगे। जंजीर खींच-खींचकर जाने के लिए उताबले होने लगे। उनके लिए मालिक मालिक ही था, भले ही उसके मन में दुःख का ज्वालामुखी लावा उगल रहा हो। जो श्रद्धा पत्नी में न थी, शायद कुत्तों में थी।

उनको उताबला देख, कुत्तों वाले नौकर ने उनको छोड़ दिया। वे लपके-लपके आये और चौधरी साहब को चारों तरफ से घेर लिया। कोई उनके कपड़ों को पंजों से दुलारता, कोई जीभ से उनके पैर चाटता, कोई दुम हिलाता चारों तरफ परिक्रमा करता। पर चौधरी उदासीन हो, नीचा मुख किये चलते जाते थे।

चौधरी साहब को कुत्तों का शौक न था। वे इसे फ़िज़ूल-खर्च समझते थे। पत्नी को कुत्ते पालने का व्यसन था और उनको खुश करना चौधरी साहब बीसवीं शताब्दी की तहज़ीब के अनुसार अपना कर्तव्य समझते थे।

इन तंगी के दिनों में भी कुत्तों पर उनके नौकरों से अधिक खर्चा होता था। जबकि कीमती कालीन बिक रहे थे, कुत्तों की संख्या बढ़ती जाती थी। भले ही चौधरी साहब का घर खाक हो रहा हो, भला कुत्ते

अपना प्राकृतिक धर्म कैसे छोड़ सकते हैं ? कुत्तों को बेचना खानदानी शान के खिलाफ़ था ।

थोड़ी देर घूमते रहे । कई बार घड़ी देखी, पर अभी भोजन का समय न हुआ था । घूमते चले गये और जब समय हुआ तो सीधे भोजन के कमरे में चले गये ।

श्रीमती रमा चौधरी वहाँ पहले से ही बैठी हुई थीं । न जाने क्यों, उन्होंने वही साड़ी पहनी हुई थी, जिस साड़ी में पहले-पहल चौधरी साहब ने उनको देखा था । श्रीमती रमा ने उस साड़ी को यादगार के लिए बड़ी हिफाज़त से रखा हुआ था । कितनी ही साड़ियाँ खरीदी गईं, कितनी ही फट जाने पर फेंक दी गईं, पर वह साड़ी चली आती थी । आज उन्होंने साज-शृङ्गार भी बड़ी मेहनत से किया था । दस-पन्द्रह साल कम उम्र की लगती थीं । चेहरे पर मुस्कराहट खिल रही थी ।

चौधरी साहब ने उनको देखा, होंठ हिले, पर न मुस्कराहट ही बनी, न आवाज़ ही निकली । बिना कुछ बोले वे अपनी कुर्सी पर बैठ गए । सिर नीचा कर खाने का उपक्रम करने लगे । पर वे आराम से कौर निगल नहीं पा रहे थे, न पत्नी की तरफ़ ही देख पाते थे । होंठ मीचते, भौं समेटते, इधर-उधर देखते, तश्तरी में चम्मच से भोजन कुरेदते ।

“चाल्स, तुम जा सकते हो । यह कोन है ? रसोइया—तुम भी जा सकते हो ।” चौधरी साहब ने कहा ।

“यह अपना नया रसोइया है—सेमुअल ।” श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए उसका परिचय कराया । “सेमुअल, तुम जाओ, मैं ही परोसूँगी ।”

श्रीमती रमा चौधरी बड़े प्रेम से खाना परोसने लगीं । पति को हर तरह से खुश करने की कोशिश कर रही थीं । शायद वे जानती थीं कि नौकरों को भेजकर उनके पति उन पर आग बरसाना चाहते थे ।

इससे पहले कि वे फूट पड़ते, वे स्त्री-मुलभ चातुर्य से उनको मना रही थीं ।

“कम-से-कम चिट्ठी तो लिख दी होती ? मैं स्टेशन पर लेने आ जाती ।” रमा चौधरी ने उनके होंठों के नज़दीक अपना मुँह करते हुए पूछा । एक क्षण चौधरी साहब को लगा कि आग की लपट को हवा का झोंका मिल गया हो, पर दूसरे क्षण वे सँभल गए । वे गुस्से में भी असभ्य नहीं होना चाहते थे ।

“भला तुम्हें फुरसत कहाँ है ? यहाँ सवेरे से आया हुआ हूँ, देखने तक फुरसत नहीं, कहती हो कि स्टेशन पर लेने आती ?” चौधरी साहब ने नीची निगाह किये कुछ कड़वे स्वर में कहा ।

“मैं बाहर चुनाव के काम पर गई हुई थी । सब कपड़े गन्दे हो गए थे, क्या आप मुझे गन्दे कपड़ों में देखना पसन्द करते ? अब नहा-धोकर आई हूँ । याद है, साड़ी कौनसी है ?—बताओ भी ।” श्रीमती रमा चौधरी ठुड्डी पकड़कर पूछने लगीं ।

पर चौधरी साहब कुछ न बोले । उनके हाव-भाव से अभी गुस्सा टपक रहा था ।

“बताओ भी, क्यों मुँह सुजा रखा है ? फुरसत तो तुम्हें न थी, भूलकर भी चिट्ठी न लिखी कभी । रुपया न भेजा तो न भेजा, कम-से-कम चिट्ठी तो भेज दी होती ।”

रुपये के नाम से चौधरी साहब अक्सर घबरा जाते थे, पर इस बार उन्होंने पूछा, “पर रुपये की जरूरत ही क्या थी ?”

“जरूरत थी, आप जितना रुपये छोड़ गए थे, उतना कर्ज चुकाने में चला गया, और फिर……।”

“और फिर……कालीन, फर्नीचर वगैरह बेचने की नौबत आ गई ।” चौधरी साहब नीचा मुँह कर दाँत कटकटा रहे थे । पर जब मुँह ऊपर कर देखा तो उनकी पत्नी मुस्करा रही थीं ।

“अभी आये भी नहीं कि लड़ाई-भगड़ा शुरू कर दिया । खैर जाने

भी दो, पैसे के बारे में ही क्या पहले दिन भगड़ोगे ? तबियत ठीक है ?” रमा चौधरी ने इस बार पति की बांह पकड़कर पूछा ।

चौधरी साहब की इच्छा हुई कि हाथ भटक दें और साफ-साफ कह दें कि उनको उसकी अवारागर्दी पसन्द नहीं है । पर उनके पास सबूत क्या है ? पिताजी ने कहा था । क्या उन्होंने खुद अपनी आँखों देखा था ? मुदलियार को सिगरेट जलाते देखा तो था । पर क्या किसी औरत के लिए किसी आदमी का सिगरेट जलाना गुनाह है ?

चौधरी साहब पत्नी से बहुत-कुछ कहना चाहते थे । खरी-खोटी सुनाना चाहते थे । इसलिए वे घर से भागे-भागे आये थे । पर पत्नी को मुस्कराती देख, वे कुछ सोच नहीं पा रहे थे कि क्या कहें । कहने के लिए जब हिम्मत समेटी, उन्हें न सूझा कि क्या कहा जाय । वे खानदानी आदमी थे । कभी गुस्सा न किया था, किसी चीज की कमी न थी, फिर गुस्सा किस पर करते ?

रमा चौधरी उनकी नस-नस पहचानती थीं । चतुर लोमड़ी की तरह वे उनको कठपुतली बनाकर नचाती थीं । जो शिष्ट व्यक्ति के लिए प्रशंसनीय गुण समझे जाते हैं, वे पति के लिए शायद कमजोरियाँ हैं । अगर चौधरी शिष्ट न होते तो रमा चौधरी कभी की जूती खा चुकी होतीं और दर-दर भटक रही होतीं । ताली तो दोनों हाथों से ही बजती है ।

“हैंसो भी, अब तो घर आये हो । लाख फिक्र हों, पर जब मेरे पास आओ तो फिक्र दूर फेंककर आया करो । गले की तकलीफ तो अब नहीं है ? बताओ भी ?” रमा चौधरी श्रद्धालु पत्नी की तरह पूछती जाती थीं ।

“नहीं,” श्रीमान् चौधरी जी के चेहरे पर अनायास हल्की मुस्कान आ गई थी । उनकी आग उन्हीं के अन्दर जल-जलकर बुझ गई थी । बादल गरज-गरजकर शायद बूँदाबूँदी में पिघल पड़े थे ।

जब खाना खत्म हुआ तो श्रीमती रमा चौधरी ने पति के लिए स्वयं

सिगरेट जलाई। शायद तब चौधरी साहब सोच रहे थे कि भले ही वह कुलटा हो, पर जब तक वह उनको प्यार करती है, उनको पत्नी को धिक्कारने का क्या अधिकार है? प्यार और प्यार के अभिनय में एक पतली परत का ही तो फर्क है। फिर चौधरी जी जैसे व्यक्ति को, जो परवाने की तरह दुनिया से दुश्मनी कर उन पर मुग्ध हो गए थे, वह परत शायद दिखाई न देती थी, दिखाई देती तो भी वे आँखें मूँद लेते।

आराम करने के लिए जब वे कमरे में गये तो रमा चौधरी आगे-आगे जा रही थीं और वे पीछे-पीछे मुस्कराते-मुस्कराते। उनकी हालत उस शिकायत की तरह थी जिसने निरीह, हरिण की कातर दृष्टि देखकर बन्दूक नीचे रख दी हो और उसको पालने का निश्चय कर लिया हो।

: ४ :

आठ बजे के करीब बिस्तर पर से उठते हुए श्रीमती रमा चौधरी ने कहा, “आज मुझे बहुत काम है। गवर्नर साहब मछियारों के इस गाँव को देखने आ रहे हैं। बहुत-कुछ करना है।”

चौधरी साहब चुप हो सुनते रहे। यों तो उनको पत्नी के सामाजिक कार्यों में अधिक दिलचस्पी न थी, पर जब से वे घर से लौटे थे, वे और भी उदासीन हो गए थे। अगर उनका बस चलता तो वे अपनी पत्नी को घर में ही रखते। यह सामाजिक कार्य उनको आवारागर्दी-सालगने लगा था। लाचारी थी। वे कुछ कह न पाते थे। मन की बात मन में ही रह जाती थी। शिष्टता और खानदानी तहजीब ने उनको जकड़ रखा था। एक तरफ़ से तो उन्होंने किनारा कर ही लिया था, दूसरी तरफ़ से भी वे बिगाड़ना न चाहते थे।

गुसलखाने की ओर जाते हुए श्रीमती रमा चौधरी ने कुछ खिजी हुई आवाज़ में कहा, “आप कार कब खरीदने जा रहे हैं? बिना कार के तो मद्रास में रहना बहुत मुश्किल है।”

“हूँ.....” चौधरी साहब सिगरेट के धुएँ के छल्ले बनाने लगे ।

“कब तक किसीसे कार माँगते रहें ?”

शायद सोच रहे थे कि कह दें—किसने कहा है कि कार में चढ़कर गरीबों की मदद करो ? वह सामाजिक कार्य भी क्या जो बिना कार के न हो सके ? परन्तु वे मुस्कराकर, मूँछे मरोड़ते रह गए ।

“आप अपने राव को फोन कर कार भेजने के लिए कहिए । उसके घर तो दो-दो कारें हैं ।”

“दो कारें हैं तो चढ़ने वाले भी तो दसियों हैं ।”

“होंगे, पर एक दिन के लिए भी क्या वह अपनी कार नहीं दे सकेगा ?”

“कितनी बार देगा ? जब कभी माँगी, वह बेचारा देता ही आ रहा है । आखिर हमें....”

“अगर आप कार माँगने के लिए हिचकिचाते हैं तो दस-पाँच हजार रुपये उधार ही क्यों नहीं ले लेते ? हम अपनी कार ही खरीद लेंगे ।” श्रीमती रमा चौधरी खिजने लगी थीं ।

“हूँ, देखा जायगा ।” श्री चौधरी अखबार के पीछे धीमे-धीमे गुन-गुनाये ।

“मई गुड हेवन्स, एक साल होने को आ रहा है, और अभी तक हम कार खरीद नहीं पाए हैं । क्लब में श्रीमती डगन वगैरह ने तो मजाक भी शुरू कर दिया है । वह हर साल, सुना है, अपनी केडिलियाक बदल देती हैं ।”

“हूँ, अधिक पैसे होंगे,” श्रीमान् चौधरी अब भी अखबार पढ़ने का उपक्रम कर रहे थे । न जाने यह भी क्या खानदानी परम्परा थी कि वे भले ही कंगाल हो जाते, पर असलियत को बाहर नहीं कह पाते थे, यहाँ तक कि पत्नी को भी न बता पाते थे कि दिन बदल गए हैं और पैसे की तंगी हो गई है । वे सोचते थे कि आखिर पत्नी से छिपा क्या है ? उसे

खुद मालूम हो जाना चाहिए था । अगर नहीं मालूम हुआ हो तो कहने से भी क्या फायदा ? अगर मालूम हो तो कहने का कोई मतलब नहीं । फिर खामखाह अपनी पोल क्यों खोली जाय ?

“क्या हमें फिर पाँच-दस हजार रुपये भी न मिलेंगे ?” श्रीमती रमा चौधरी मुख में टुथ ब्रश दबाये, गुसलखाने के दरवाजे पर खड़ी हो, सवेरे-सवेरे ही आग हो रही थीं और चौधरी साहब अखबार के पीछे खबरें पढ़ने का असफल प्रयत्न कर रहे थे । मूँछें मरोड़ते जाते थे ।

“मैं कहे देती हूँ कि मैं कार बगैर ज्यादा दिन न रह सकूँगी, पैसे की भी बचत इसीमें है । रोज़ दस-पन्द्रह रुपये टैक्सी के लिए खर्च हो ही जाते हैं, और दूसरों के सामने हाथ भी पसारने पड़ जाते हैं ।”

“हूँ—पर...” चौधरी साहब कुछ कहना चाहते थे पर यकायक रुक गए । अगर उन्हें कहना पड़ जाता तो शायद कहते—दस-पन्द्रह रुपये टैक्सी पर खर्च कर कितने रुपयों का कारोबार किया है ?

“मुझे वक्त हो रहा है, जाना है । आपसे बातें करने से अच्छा है कि आपके ‘पत्थर के भगवान् के सामने’ दिल खोलकर चिल्ला दूँ ।”

चौधरी साहब धार्मिक प्रकृति के न थे । देवी-देवताओं में भी उनका विश्वास न था । परन्तु श्रीमती रमा चौधरी, जो विवाह से हिन्दू थीं, उनको हर तरह छेड़ने में एक प्रकार का खास आनन्द लेती थीं । न जाने क्यों ?

“सुना कि नहीं ? फोन कर दीजिएगा ?” श्रीमती रमा चौधरी ने जोर से किवाड़ मारा और दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया ।

श्री चौधरी थोड़ी देर तक बैठे रहे । फिर जाकर श्री राव को कार के लिए फोन कर दिया । उनके चेहरे से लगता था, जैसे कुछ गुजरा ही न हो । मन में चाहे तूफान उमड़ रहा हो, पर चौधरी साहब का चेहरा प्रायः वही पत्थर का बना रहता । न गुस्सा, न ग़म, न खुशी ।

श्री राव श्री चौधरी के निकट सम्बन्धी हैं । चौधरी साहब की तरह वे भी ज़मींदारी खानदान के हैं । पढ़े-लिखे हैं । कालेज की हवा

भी देखी है, डिग्री मगर नहीं ली है। वे उन लोगों में से हैं जो आफ़त आने से पहले ही स्वरक्षा के लिए सुरक्षित स्थान खोज लेते हैं। सरकार अभी ज़मींदारी प्रथा के नाश की बात सोच ही रही थी कि उन्होंने अपना रुपया कारोबार में लगा दिया। दो चीनी की मिल थी। मद्रास शहर में भी एक मुद्रणालय था। कार का भी व्यापार साभे में करते थे। उनका व्यापार सफल था। खुद आठ घण्टे दफ़्तर में काम करते थे। ज़मींदारी हो या न हो, उनके ऐश में कोई कमी न थी। श्री चौधरी की हालत उनसे छिपी न थी। जब से श्री चौधरी का विवाह हुआ, तब से श्री राव का खानदान भी उनके प्रति उदासीन था। शिष्टता के नाते बातचीत हो जाती थी, पर उनके पीछे श्री राव का परिवार उनकी निन्दा करता था। श्री राव की माँ तो यह भी कहा करती थी—जब गलती की है तो भुगतनी ही चाहिए।

राव श्री चौधरी से सहानुभूति करते थे। उनकी मदद भी करना चाहते थे, यद्यपि मदद करने की परिपाटी ज़मींदारों में नहीं होती। बिना माँगे मदद करते हैं तो कहीं ऐसा न हो, चौधरी साहब बुरा मान जायें। उनके स्वाभिमान को चोट पहुँचाना श्री राव को पसन्द न था। और चौधरी साहब का स्वभाव ऐसा था कि बरबाद हो जायेंगे मगर किसी के सामने गिड़गिड़ायेंगे नहीं। अपने-अपने स्वभाव की बात है।

श्री राव और चौधरी लगभग समवयस्क थे, खूब हिल-मिलकर रहते थे। श्री राव अक्सर अपनी कार में चौधरी साहब को क्लब ले जाते थे। जब कभी कहीं जाते तो वे ही अपनी जेब से खर्चते थे। आजकल वे दोनों और भी नज़दीक आ गए थे। मद्रास में ज़मींदारों का अपना अलग गुट था। जो अपने-अपने गाँव में कभी किसीसे बात भी न करते थे, मद्रास में ताश के पत्तों पर घण्टों गप्पें मारते थे। श्री राव और श्री चौधरी की जोड़ी उस गुट में मशहूर थी।

श्री चौधरी साहब अखबार पढ़कर बगीचे में घूमने निकल गए। यह उनका रोज़ाना का काम था। दस-ग्यारह बजे के करीब वे अपनी बैठक

में आ जाते और अय्यर के साथ हिसाब-किताब देखते । अभी तक यह न मालूम हुआ था कि वे क्या करना चाहते थे ।

दस बजे के करीब जब नहा-धोकर खूब सज-धजकर श्रीमती रमा चौधरी अपने कमरे से नीचे उतरतीं तो उनके लिए श्री राव की कार तैयार थी । ड्राइवर ने दरवाजा खोल रखा था । उन्होंने अपने पति से कुछ न कहा और कार में मुस्कराती हुई बैठ गईं ।

वे सीधी डगन साहब के होटल गईं । श्री चौधरी के आने के बाद भी श्रीमती रमा चौधरी प्रायः प्रतिदिन श्री डगन से किसी-न-किसी बहाने मिल लेती थीं । उनकी घनिष्ठता बढ़ती जाती थी, मगर पैसे का लेन-देन न था । जब कभी पैसे की ज़रूरत होती, या तो वे श्री मुदलियार से ले लेतीं, नहीं तो चेट्टियार से । डगन उनके लिए एक सीढ़ी-से थे, जिस पर चढ़कर वे कहीं पहुँचने की कोशिश कर रही थीं । जिस स्तर पर वे अब थीं, न वहाँ मुदलियार की ही सीढ़ी पहुँचती थी, न चेट्टियार की ही । चौधरी साहब की सीढ़ी तो पहले ही खोखली और कमजोर हो चुकी थी ।

श्री डगन अपने कमरे में बैठे कुछ कागजात पढ़ रहे थे । श्रीमती रमा चौधरी को उनके पास जाने में कोई रुकावट न थी । श्री डगन से वे प्रायः होटल में ही मिला करती थीं । घर जब कभी श्रीमती डगन किसी पार्टी के लिए निमन्त्रित करतीं तो ही जातीं । होटल में श्रीमती डगन मुश्किल से कभी आतीं । श्री डगन भी दस बजे श्रीमती रमा चौधरी का प्रतीक्षा करने के आदी हो गए थे ।

श्रीमती रमा चौधरी श्री डगन की बगल में ही हाथ मिलाकर बैठ गईं । दोनों के चेहरे मुस्कराहट से खिल उठे थे । दोनों एक-दूसरे की आँखों में देखते हुए बातचीत करते थे । श्रीमती रमा चौधरी अब काला चश्मा भी नहीं लगाती थीं । उनमें प्रारम्भिक भ्रंश अब न थी । न श्री डगन ही अब हिचकते-झिझकते थे । श्रीमती रमा चौधरी उनको 'डार्लिंग' कहकर सम्बोधन भी करने लगी थीं । सम्माननीय 'आप' के स्थान पर

अब वे स्नेहमय 'तुम' का उपयोग करती थीं ।

“तुम जानते ही हो, कल गवर्नर साहब हमारे घर के पास के मछियारों का गाँव देखने के लिए आ रहे हैं ।” रमा चौधरी कह रही थी कि श्री डगन बोल उठे, “जो समय तुम इन मछियारों पर बरबाद करती हो यह देखकर मुझे लगता है कि मैं भी एक मछियारा बन जाऊँ और तुम जैसी—अगर तुम्हें मछली कहूँ तो बुरा तो नहीं मानोगी—और तुम जैसी मछली पकड़ूँ ।”

श्री डगन ने श्रीमती रमा चौधरी के हाथ दबाए और जोर से हँसने लगे । श्रीमती रमा चौधरी भी ऐसी खिसियाईं मानों बीस वर्ष की पर्दानशीन युवती हों । श्री डगन कह रहे थे, “जवानी में कई बार नर्स की शक्ल देखकर बीमार पड़ जाने की मर्जी होती थी ।” वे दोनों और जोर से हँसने लगे ।

थोड़ी देर बाद फिर डगन ने कहा, “जब गवर्नर साहब आ रहे हैं तो उनको एक पार्टी भी दी जानी चाहिए । यह काम मेरे जिम्मे रहा । देखो, आनाकानी न करो । मुझे भी अपना ‘सामाजिक कार्य’ करने दो । कल शाम तक तुम्हारे घर में सब इन्तज़ाम हो जायगा । गवर्नर साहब कब आ रहे हैं ?”

“कल शाम को ।”

“तो ठीक है । पार्टी की तुम फ़िक्र न करो……”

“मगर—”

“मगर-वगर कुछ नहीं । हमें भी कुछ ‘सामाजिक कार्य’ करने दो ।”

“नाचने-गाने का भी इन्तज़ाम करना है ।”

“तो गवर्नर साहब क्या नाच-गाना भी देखेंगे ?”

“क्यों ? एक-दो नाच मछियारिनें करेंगी, फिर शहर में, सुना है, पंजाब से कोई अच्छी नाचने वाली आई है । नाम सुना ही होगा, वही ‘सितारा’, उसका नाच भी होगा । गवर्नर साहब को मछियारिनों का नाच देखने में तो ऐतराज नहीं होना चाहिए । ‘सितारा’ का नाच देखना

चाहेंगे तो देखेंगे, नहीं तो चले जायेंगे।”

“ये कांग्रेसी गवर्नर भी खूब हैं, इनको तो नंग-धड़ंग शिव की बरात का नाच दिखाना चाहिए।” श्री डगन कहते-कहते हँस पड़े।

“आप अपनी पत्नी के साथ ज़रूर आइए। आप गवर्नर साहब को जानते हैं न ?”

“हाँ-हाँ, आजकल गवर्नर साहब को जानने में क्या रखा है, ऐरा-गैरा सब जानते हैं।”

“मई गुड हेवन्स, रिपब्लिक-डे की ये पार्टियाँ भी क्या हैं ! कोई ढीली-ढाली धोती में आ रहे हैं, कोई आधी कमीज में, कोई नंगे पैर, कोई नंगे सिर। पंसारी, जौहरी, ज़मींदार, जागीरदार, एडीटर, ऑडीटर, सब बुलाये जाते हैं। पुराने ज़माने में किंग्स बर्थ-डे पार्टी के लिए निमन्त्रण पाने के लिए, याद है, कितनी सिफ़ारिशों की ज़रूरत हुआ करती थी ! पार्टी तो उसे कहते हैं।”

“हूँ-हूँ।” उन दोनों में काफ़ी देर तक इधर-उधर की बातचीत चलती रही। भोजन का समय हो गया। श्री डगन ने कहा, “आज तो भोजन यहाँ कर लो। मेरी पत्नी किसी रिश्तेदार के यहाँ खाना खाने जा रही हैं।”

“पर मेरे पति तो घर में ही खा रहे हैं।”

“उनको शायद तुम्हारे बिना खाने की आदत होगी।” श्री डगन ने मुस्कराते हुए कहा।

“हाँ, बहुत काम लगा रहता है। आजकल उन्होंने जुवेनाइल कोर्ट का काम भी सँभाल लिया है। सवेरे ही चली जाती हूँ। खैरियत है, हफ़्ता में एक बार ही बैठक होती है।”

श्री डगन अँगुलियों पर अँगुलियाँ रगड़ते हुए मुस्कराने लगे। लगता था कि वे कुछ कहना चाहते थे और सोच रहे थे, कहें कि नहीं। आखिर वे पूछ बैठे, “तुम्हारे कितने बच्चे हैं ?”

“तुम्हारा मतलब ?” श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए पूछा।

“मेरा मतलब यह है, जब तक कोई स्त्री माँ न बन जाय तब तक वह बच्चों की प्रकृति ठीक तरह समझ नहीं पाती है।”

“यानी तुम्हारा मतलब है कि बाल-बच्चे वाले ही जुवेनाइल कोर्ट में जज बनाये जाने चाहिए।”

“खैर, हटाओ भी यह बात। आओ, खाना खायें। तुम चौधरी साहब को फोन कर दो।”

श्रीमती रमा चौधरी ने घर फोन कर सूचना दी, “अभी काम में लगी हुई हूँ। मुमकिन है, देरी हो जाय। चौधरी साहब भोजन के लिए मेरा इन्तज़ार न करें।”

श्रीमती रमा चौधरी ने श्री डगन के साथ भोजन किया। एक-डेढ़ बजे के करीब श्री डगन के साथ उनके शयन-कक्ष में आराम करने चली गईं।

चार बजे के करीब वे होटल से श्री राव की कार में श्री चेट्टियार के घर गईं। वे सौभाग्यवश घर में थे। श्री चेट्टियार का घर शहर के घने मुहल्ले में था। होने को मकान बहुत बड़ा था, पर चारों तरफ़ से मकानों से इस तरह घिरा हुआ था कि उनका मकान ईंट-पत्थर का एक पहाड़-सा लगता था। बैठक में सस्ती कालीनें बिछी हुई थीं और कुर्सी वगैरह भी रखी हुई थीं। दीवारों पर देवी-देवताओं की तस्वीरें थीं। टेलीफोन को बगल में रखकर वे एक मोटे गद्दे पर फर्श पर बैठे हुए थे। सामने एक तिपाई पर पाँच सौ पचपन का सिगरेट का डिब्बा रखा हुआ था। श्रीमती रमा चौधरी कुर्सी पर बँठ गईं।

“मैं आपके लिए एक और काम करवा रही हूँ। चुनाव में इसका अच्छा असर पड़ेगा। मैंने गवर्नर साहब को मछियारों का गाँव दिखाने के लिए बुलाया है। वे कल देखने आ रहे हैं। सभा का इन्तज़ाम करना है।”

“यह आपकी अच्छी सूझ है। सभा तो होनी ही चाहिए।”

“ठीक है।”

“कम्युनिस्ट तो कोई गड़बड़ी नहीं करेंगे ?”

“गड़बड़ी क्या करेंगे ? जब गवर्नर साहब आ रहे हैं तो पुलिस का इन्तज़ाम होगा ही । आप कम्युनिस्टों की फ़िक्र न कीजिए ।”

“आप ठीक कहती हैं ।”

“सभा के लिए माइक, फूल, कुर्सी वगैरह की ज़रूरत होगी ।”

“हाँ ज़रूरत तो होगी ।”

“मैं स्वयंसेविका भिजवा दूँगी—आप जो खर्च हो सो दिलवा देना ।” श्री चेट्टियार का जवाब बिना सुने ही श्रीमती रमा चौधरी नमस्ते करती हुई बाहर चली गई । वे समुद्र-तट पर होती हुई क्लब गईं । क्लब में उन्होंने शहर के सब समाचार-पत्र व समाचार-एजेन्सियों को सूचित किया कि गवर्नर साहब मछियारों की बस्ती देखने आ रहे हैं । श्रीमती रमा चौधरी ने इतना उत्साह तब न दिखाया था, जब गवर्नर की पत्नी बस्ती देखने आई थीं । उन्होंने अपने निजी फोटोग्राफ़र को भी आने के लिए आज्ञा दी ।

क्लब के लॉन पर बैठकर वे सिगरेट का कश लेती हुई शिकंजवी पीने लगीं । जो कोई परिचित दिखाई देते उनको गवर्नर साहब के कार्यक्रम के बारे में बतातीं और अपने घर पार्टी के लिए निमन्त्रित करतीं ।

अब्राहम भी, जो उनसे दूर भागा-भागा फिरता था, आज उनके पास आकर बैठ गया । बहुत देर तक इधर-उधर की बातचीत होती रही । फिर अब्राहम ने पूछा, “सुना है तुम गवर्नर साहब को बहुत अच्छी तरह जानती हो ?”

“हाँ-हाँ ।”

“मैं तुम्हारी मदद चाहता हूँ । मेरी एक दोस्त अच्छे चित्र बनाती है । वह अपने चित्रों का प्रदर्शन करना चाहती है । उसकी इच्छा है कि गवर्नर साहब उसकी प्रदर्शनी का उद्घाटन करें ।”

“पहले यह बताओ, वह दोस्त कौन है ?”

“तुम उसे जानती होगी—लता ।”

श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए कहा, “जो तुम पर लिपट रही है।” वे दोनों हँसने लगे।

अंधेरा हो गया। क्लब के अन्दर डांस म्यूजिक शुरू हुआ। श्रीमती रमा चौधरी पहले अब्राहम के साथ नाचीं, फिर एन्थोनी के साथ। एन्थोनी किसी बड़ी इन्ड्यूरेन्स कम्पनी के मैनेजर थे। फिर बार में बैठकर गप्पे लगाती रहीं। साढ़े नौ बजे वे श्री मुदलियार के साथ सिनेमा देखने चली गईं।

आधा सिनेमा देखा और ऊबकर बाहर चली आईं। जब वे घर पहुँचीं तो साढ़े दस बज चुके थे। उनके पति खाना खाकर सिगार का दम ले रहे थे। श्रीमती रमा चौधरी ने जल्दी-जल्दी भोजन निगला और अँगड़ाइयाँ लेती हुई अपने कमरे की ओर चलीं। वे अपने पति से कह रही थीं, “आज बड़ा काम रहा। एक मिनट की भी फुर्सत न मिली। कल जल्दी उठना है, गवर्नर साहब जो आ रहे हैं।”

चौधरी साहब अपनी कुर्सी पर ही बैठे रहे और उनकी पत्नी अपने कमरे में चली गईं।

: ५ :

मछियारों की बस्ती में, जहाँ कॉरपोरेशन ने भी प्रकाश का प्रबन्ध नहीं कर रखा था, आज तरह-तरह की रोशनी हो रही थी। जगह-जगह रंग-बिरंगे झण्डे बाँधे गए थे। कॉरपोरेशन वालों ने सवेरे ही आकर सारी जगह साफ़ करवा दी थी। महीनों के कूड़े-कंकट के ढेर हटा दिये गए थे। सड़ान-भरे गढ़ों में डी० डी० टी० छिड़क दी गई थी। जहाँ सूखी मछलियों की बदबू आया करती थी आज वहाँ एक विचित्र बू आ रही थी।

श्रीमती रमा चौधरी के बंगले में भी रोशनी की गई थी, सफ़ेदी पोती गई थी। दूर से लगता था मानों रात की चाँदनी उनके बंगले में ही जम गई हो। ज्यों-ज्यों रात होती जाती थी बंगले का सौन्दर्य और

निखरता आता था। उनके बंगले के सामने कारों की एक लम्बी पंक्ति खड़ी हुई थी। पुलिसवाले ट्रैफिक कण्ट्रोल कर रहे थे।

सात बजने वाले थे। सदियों के दिन, अँधेरा हो चुका था। श्रीमती रमा चौधरी के घर में कई अतिथि एकत्रित हो गए थे, जो पार्टी के लिए निमन्त्रित थे। उन्होंने मछियारों के गाँव को न देखना चाहा था।

श्री चौधरी बहुत देर तक बगीचे में कुत्तों के साथ खेल-खिलवाड़ में वक्त काटते रहे। वे यद्यपि कुत्तों को पसन्द न करते थे, पर आज न जाने क्यों वे उनसे मन-बहलाव कर रहे थे। थोड़ी देर बाद जब श्रीमती रमा चौधरी का बाहर जाने का समय हो गया तो वे अन्दर आये और मेहमानों से इस तरह बातें करने लगे, जैसे वे एक अपना कर्तव्य निभा रहे हों।

सात बजे गवर्नर साहब को आना था। श्रीमती रमा चौधरी उनकी अगवानी करने के लिए, पाँच मिनट पहले ही अपने बंगले के फाटक पर खड़ी हो गईं। शहर के बड़े-बड़े कर्मचारी पहले से ही वहाँ उपस्थित थे—सरकारी सेक्रेटरी, कॉरपोरेशन के कमिश्नर व अन्य अफसर।

ठीक सात बजे लाल रंग की एक मोटर साइकल आई, जिस पर दो बड़े पुलिस के अफसर थे, फिर पुलिस कमिश्नर की मोटर, तब गवर्नर साहब की बड़ी गाड़ी। यद्यपि गवर्नर साहब हिन्दुस्तानी थे, पर लगता ऐसा था मानों अब भी भारत में किंग जॉर्ज सिक्स्थ का राज्य हो।

गवर्नर साहब के गले में बहुत मालाएँ डाली गईं। श्रीमती रमा चौधरी की माला सबसे कीमती और बड़ी थी। मछियारों के सरदार ने भी एक माला पहनाई। गवर्नर साहब मुस्कराते हुए आगे बढ़े।

इस अवसर के लिए बस्ती के बीचों-बीच वाले रेतीले टीले पर एक छोटा-सा पंडाल बनाया गया था। श्रीमती रमा चौधरी के घर से पाँच-दस कुर्सियाँ लाकर रख दी गई थीं, जिन पर ऑफिसर बैठे हुए थे। माईक वगैरह का अच्छा इन्तजाम था। परन्तु पास वाला समुद्र इस

जोर से गरज रहा था कि लोगों को भी जोर से बातें करनी पड़ रही थीं ।

श्रीमती रमा चौधरी के दोस्त वहाँ कम थे । वे सब उनके बंगले में इस प्रतीक्षा में थे कि कब सभा समाप्त हो और कब नाच-गाने का कार्यक्रम शुरू हो । श्रीमती डगन, श्री डगन, श्रीमती कृष्णस्वामी और उनके पति, श्रीमती जोसफ, अब्राहम और उनके अनेक मित्र बंगले में ही बातचीत कर रहे थे । मुदलियार भी वहीं मटरगश्ती कर रहे थे । श्री चेट्टियार श्रीमती रमा चौधरी के साथ थे ।

गवर्नर साहब ने थोड़ी देर इधर-उधर घूमकर देखा । जो गन्दगी और गरीबी दिन की रोशनी में नंगी और भयंकर दिखाई देती थी, रात में परदे में छिपी-सी लगती थी । गवर्नर साहब छड़ी लेकर ऐसे चलते गये, जैसे समुद्र-तट की सैर से भटककर आ गए हो । जब उन्होंने एक बच्चे से पूछा, “कहीं पढ़ते हो, कि नहीं ?” तो पास खड़े पत्रकारों ने उनका प्रश्न नोट कर लिया और फोटोग्राफरों ने उनकी फोटो ले ली । और जब लड़का जवाब दे ही रहा था कि गवर्नर साहब की पार्टी उसके जवाब के बारे में उदासीन हो गई ।

तुरन्त गवर्नर साहब ने कमिश्नर से पूछा, “यहाँ से स्कूल कितनी दूर है ?”

“जी-जी, करीब चार-पाँच फर्लांग दूर, मैलापुर में ।”

“क्या यहाँ से कोई बच्चे वहाँ पढ़ने जाते हैं ?” कमिश्नर साहब ने एजुकेशनल ऑफिसर को जवाब देने का संकेत किया । उन्होंने कहा, “जी नहीं, परन्तु हम एक ऐसी योजना बना रहे हैं कि इनके लिए दो-तीन वर्ष में स्कूल जाना अनिवार्य हो जायगा ।”

गवर्नर साहब ने इस जवाब को इस तरह सुना मानों वे इन जवाबों के सुनने के आदी हो गए हों । वे थोड़ी देर खड़े होकर समुद्र की ओर देखने लगे, जो चाँदनी में मतवाला हो रहा था ।

फिर वे आकर सजी बेदी पर बैठ गए । उनकी बगल में श्री चेट्टियार

और श्रीमती रमा चौधरी बैठे हुए थे और उनके साथ उस मुहल्ले के कॉरपोरेशन कौंसिलर आसीन थे। उनके पीछे सरकारी कर्मचारी। सबने बढ़िया कपड़े पहने थे। फिर उन पर बिजली की रोशनी पड़ रही थी। सभा का वह भाग चमक रहा था—दिन के समान था।

और नीचे मछियारे बैठे हुए थे—काले-काले मछियारे, नंगे मछियारे, नंगे बच्चे, फटी-पुरानी, मैली-कुचैली साड़ियों वाली औरतें। उनके झुण्ड में से एक विचित्र बदबू आ रही थी, मानों मछलियाँ पकड़ते-पकड़ते वे स्वयं एक सूखी मछली बन गए हों। बिजली की रोशनी भी कम थी। यह हिस्सा रात के समान था।

मछियारों के सरदार ने झिझकते-झिझकते धीमे-धीमे सम्मान-पत्र पढ़ा। वह ठीक तरह पढ़ नहीं पाता था। चेट्टियार के ग्रेजुएट क्लर्क ने उसको लिखा था। बड़े-बड़े शब्दों का उपयोग किया था। वेचारे मछियारे की ज़बान न हिल पाती थी। पढ़े-लिखे अफ़सर एक-दूसरे को देखकर मुस्करा रहे थे।

सम्मान-पत्र में गवर्नर साहब से निवेदन किया गया था कि उनको जाल बनाने के लिए सस्ते दाम पर सूत दिया जाय। चूँकि उनकी बस्ती में पीने के पानी की तंगी थी, इसलिए उन्होंने माँग की कि कॉरपोरेशन की तरफ से पानी के नल वहाँ लगवाये जायें। मछियारों के सरदार ने यह भी शिकायत की, यद्यपि यह सम्मान-पत्र में न थी कि कारपोरेशन वाले शहर-भर का कूड़ा उनकी बस्ती के पास के बड़े-बड़े गढ़ों को भरने के लिए डाल रहे थे, जिसके कारण बदबू तो फैलती ही थी, बीमारी भी साथ ही फैल रही थी।

यह सुन श्रीमती रमा चौधरी चौकन्नी हो गईं, लाल-पीली होने लगीं। कमिश्नर साहब श्रीमती रमा चौधरी की ओर ताकने लगे और कॉरपोरेशन के रेवेन्यू ऑफ़िसर कमिश्नर की तरफ देख रहे थे, क्योंकि श्रीमती रमा चौधरी की शिकायत पर ही वे गढ़े भरे जा रहे थे; उनका कहना था कि यहाँ मच्छर पैदा होते थे। मछियारों के बच्चे उनमें अक्सर

मछलियाँ पकड़ा करते ।

श्रीमती रमा चौधरी ने गवर्नर का स्वागत किया । वे तमिल ऐसे बोल रही थीं, जैसे अंग्रेजी बोल रही हों । वे तमिल अच्छी तरह न जानती थीं, न उनको बोलने का अभ्यास ही था । उनके खड़े होते ही उनके फोटोग्राफर ने फोटो ली । पत्रकारों की कलमें भी तेजी से चलने लगीं । श्रीमती रमा चौधरी कह रही थीं—

“एक ज़माना था जब गवर्नरों का इस तरह की बस्तियों में आना असम्भव समझा जाता था । इनको कूड़े-कंकट का ढेर समझा जाता था । परन्तु अब दिन बदल गए हैं । भारत स्वतन्त्र है और भारतीय ही गवर्नर हैं । (श्रीमती रमा चौधरी गवर्नर की तरफ देखकर मुस्कराईं ।) और भारत का भविष्य इन उपेक्षित, अशिक्षित, दीन-हीन लोगों पर है । इनकी आवश्यकताओं को पूरा करना सरकार का कर्तव्य है (श्रीमती रमा चौधरी की नज़र सरकारी कर्मचारियों पर गई), जो वे बड़ी कुशलतापूर्वक पूरा कर रहे हैं । ये गरीब सदियों तक मूक रहे, पर अब स्वतन्त्रता ने उनको ज़बान दे दी है । वे अब बोल सकते हैं और बोलेंगे (वे अम्बिकादेवी के विचारों को अपने शब्दों में बोल रही थीं), उनके सुधार को हमें प्राथमिकता देनी चाहिए ।” श्री चेट्टियार तालियाँ पीटने लगे । उनकी देखा-देखी और भी तालियाँ बजाने लगे । “मैं अब भी श्री माननीय गवर्नर साहब से प्रार्थना करूँगी कि वे दो-चार शब्द कहें ।” यह कहकर श्रीमती रमा चौधरी ने गवर्नर साहब के गले में एक और मोटी महकती हुई गुलाब के फूलों की माला डाल दी ।

गवर्नर साहब ने कहना शुरू किया, “मैं श्रीमती रमा चौधरी और आप सब लोगों का हार्दिक धन्यवाद करता हूँ, जिन्होंने मुझे यहाँ आने का मौका दिया । मैं श्रीमती रमा चौधरी से पूरी तरह सहमत हूँ कि आपकी आवश्यकताओं को पूरा किया जाना चाहिए ।

“हमारा देश तब तक पूर्ण स्वतंत्र नहीं है जब तक हमारे लोग शिक्षित न हो जायें । एक शिक्षित राष्ट्र ही समृद्ध राष्ट्र हो सकता है । अलावा

इसके एक शिक्षित राष्ट्र ही अच्छी तरह अपना आर्थिक निर्माण कर सकता है। पर यह काम एक दिन में होने वाला नहीं है। हम इस दिशा में भरसक प्रयत्न कर रहे हैं। सरकार कई योजनाओं को कार्यान्वित भी कर रही है।

“आप लोगों को अपने बच्चों को शिक्षा देनी चाहिए।”

इस पर एक मछियारे ने कहा, “पढ़े-लिखे लड़के तो हमारी मदद नहीं करते हैं।”

“हाँ-हाँ,” गवर्नर साहब ने फिर कहना शुरू किया, “ठीक कहते हो। आजकल की पढ़ाई की जरूरत यह कमी है। एक तो यह बहुत महंगी है और दूसरी बात यह कि विद्यार्थी की व्यक्तिगत रुचि पर ध्यान नहीं दिया जाता। बच्चों में यह भावना पैदा कर दी जाती है कि वे बेपढ़े-लिखों से बड़े हैं। यह भावना गलत और भ्रान्तिपूर्ण है, इसलिए हम आधुनिक शिक्षा का ढाँचा ही बदल रहे हैं।

“भारत की दो विकट समस्याएँ हैं— एक गरीबी और दूसरी आबादी। दोनों आपस में सम्बन्धित हैं। हम गरीबी को हटाने का हर प्रयत्न कर रहे हैं। पर यह भी एक-दो दिन में हटाई नहीं जा सकती। समय लगता ही है।

“मुझे आपके कमिश्नर साहब बताते हैं कि आपकी बस्ती का निर्माण होने जा रहा है। आपको वे सब सुविधाएँ जल्द दी जायेंगी जो शहर में अब हैं। नज़दीक ही नये देश के नये-नये मकान बनेंगे। आप लोगों के लिए भी घर बनाए जायेंगे। इसके लिए आवश्यक योजनाएँ बन रही हैं। जरूरत सिर्फ़ इतनी है कि आप थोड़ी देर और सब्र करें,” कॉरपोरेशन के रेवेन्यू ऑफिसर ने ताली बजाई, फिर उनके चपरासी और उनकी देखा-देखी मछियारे भी तालियाँ बजाने लगे। गवर्नर साहब के सेक्रेटरी ने कान में कुछ कहा। गवर्नर साहब की नज़र भी कलाई पर लगी घड़ी पर गई। फिर उन्होंने कहा, “मैं फिर से श्रीमती रमा चौधरी और अन्य सज्जनों का धन्यवाद करता हूँ।”

गवर्नर साहब ने अपनी जवानी कॉलेज के अध्यापक के रूप में काटी थी। पढ़ने-लिखने का व्यसन था। घंटों बोलने की आदत थी। वे जहाँ कहीं भी बोलते तो श्रोताओं को देखकर न बोलते, परन्तु यह सोचकर बोलते कि उनका हर शब्द जैसा-का-तैसा अगले दिन अखबार में आयेगा। इसलिए वे मछियारों के सामने भी ऐसे बातें कर रहे थे जैसे कॉरपोरेशन कौंसिल के सामने हों। वे अपना कार्यक्रम भी भूल जाते। उनके सेक्रेटरी को उन्हें इशारा करना पड़ता।

गवर्नर साहब बहुत भले, सीधे और खानदानी समझे जाते थे। उनकी सहृदयता से सभी परिचित थे। रसिक थे, पर उनके पद ने उन्हें जकड़ रखा था। यद्यपि वे मद्रास के न थे तो भी अपनी सरल प्रकृति के कारण सर्वत्र लोकप्रिय थे। लोग कभी-कभी उनकी सरल प्रकृति का अनुचित फ़ायदा भी उठा लेते थे।

श्रीमती रमा चौधरी गवर्नर साहब को अपने साथ अपने बंगले में ले गईं। वहाँ शहर के प्रतिष्ठित लोग एकत्रित थे। संगीत चल रहा था। लगातार पेय भी बाँटे जा रहे थे।

एक सभा खतम हुई और दूसरी सभा शुरू होने लगी। पर इस सभा के श्रोता शहर के सब बड़े-बड़े लोग थे। मछुए फाटक पर ही रोक दिये गए थे। वे दीवारों से उचक-उचककर देख रहे थे। बंगले के चारों तरफ़ पुलिस का सख्त पहरा था।

श्रीमती रमा चौधरी के बगीचे में एक रंगमंच का भी इन्तज़ाम किया गया था। ज्यों ही श्री गवर्नर साहब अपनी कुर्सी पर बैठे, श्रीमती रमा चौधरी ने रंगमंच पर खड़े होकर अंग्रेज़ी में कहा, “आज हमारा सौभाग्य है कि माननीय गवर्नर कुछ क्षण हमारे लिए दे सके। मैं चाहती हूँ कि आपको मनोरंजन के लिए अधिक इन्तज़ार न करना पड़े। यहाँ आपको मछियारों का एक नृत्य दिखाया जायगा और फिर मशहूर नर्तकी ‘सितारा’ अपनी नृत्य-कला का प्रदर्शन करेंगी।”

पर्दा हटा। मछुओं की एक टोली सिर पर टोक रियाँ रखे बाज़ार

की ओर भागने लगी । वे एक मीठा गाना गा रहे थे । पिछवाड़े से संगीत आ रहा था । दृश्य बहुत सुन्दर था । पर्दे पर मछुओं की एक बस्ती का चित्र था । लगता था रंगमंच पर मानों मछुओं की बस्ती बनाई गई हो । फर्क इतना था कि वहाँ मछुओं के गाँव की बदबू न थी ।

पर यह गान मछुएँ स्वयं नहीं गा रहे थे । अन्तिम क्षण में, सितारा की सलाह पर, श्रीमती रमा चौधरी ने कार्यक्रम बदल दिया था । डगन की भी यह सलाह थी, उनके और मित्रों का भी यही खयाल था । मछियारियों की जगह सितारा की पार्टी के सदस्य ही नाच रहे थे ।

ज्यों ही एक दृश्य समाप्त हुआ, पर्दा नीचे गिरा और अतिथियों में आपस में बातचीत चल पड़ी । अब्राहम लता को लेकर श्रीमती रमा चौधरी के पास गये और उनकी सहायता से लता का गवर्नर साहब से परिचय किया । गवर्नर साहब ने कहा कि यदि समय मिला तो जरूर वे उनके चित्र देखेंगे ।

श्रीमती कृष्णस्वामी अपने पति से कह रही थीं, “यह रमा है बहुत चलती पुरजी ! जैसे-तैसे अपना काम निकाल ही लेती है ।”

“काम निकाल लेना क्या औरत के लिए भी बहुत कठिन है ? बात तो सोचने की यह है कि उसको काम निकालना चाहिए कि नहीं ।” कृष्णस्वामी कह रहे थे ।

श्री डगन किसी अंग्रेज दोस्त से बातचीत कर रहे थे । पर उनकी पत्नी एक कोने में खड़ी होकर ऐसे देख रही थीं, मानों श्रीमती रमा चौधरी ने मैदान मार लिया हो ।

मुदलियार भी अपने दो-चार दोस्तों से बातचीत कर रहे थे और रह-रहकर औरतों के झुण्ड की तरफ़ देख लिया करते थे, कहीं ऐसा न हो कि श्रीमती रमा चौधरी ने उनकी पत्नी को आदमी भिजवाकर बुलवा लिया हो या कमला वहाँ हों ।

ढोल के शब्द के साथ पर्दा फिर उठा । बीच में आग के सामने एक मछुआ ढोल बजा रहा था और बाकी हाथ सँक रहे थे । उनके

पीछे मछियारिनें तालियाँ बजा-बजाकर, गाती-गाती, गोलाकार में नाच रही थीं। यह दृश्य भी देखते बनता था, पर मछुए इसमें भी न थे।

फिर पर्दा गिरा और लोगों में बातचीत शुरू हुई। कॉरपोरेशन के रेवेन्यू ऑफिसर कर रहे थे, “यह औरत भी खूब है ! बंगले का टैक्स सालों से दबाये हुए है, और पार्टियाँ ऐसी देती है कि लोग जीभ चाट-चाटकर उसकी याद करें।”

“पर तुम्हें क्या मालूम, शायद यह भी कमाने का एक तरीका हो ...?” एक और कर्मचारी ने कहा।

“हो सकता है। इन औरतों का कमाने का तरीका भी अजीब है।” रेवेन्यू ऑफिसर ने कहा।

“पर इनके पति क्या करते हैं?” दूसरे ने पूछा।

“क्या करें ? बेचारे अच्छे घराने के हैं, पढ़े-लिखे हैं, इनके फन्दे में ऐसे पड़े हैं कि न अन्दर ही रह सकते हैं, न बाहर ही।”

“सुना है, आजकल डगन साहब को भी उँगलियों पर नचा रही हैं ये...” एक कर्मचारी ने दूसरे कर्मचारी के कानों में कहा, “अरे देखो, फिर शुरू हो गया है।”

बिना किसी संगीत के पर्दा उठ गया था। रंगमंच पर सितारा थी। काली आँखों से मस्ती टपक रही थी। लाल-लाल गाल। बिखरे बालों पर साँप की छोटी-सी मूर्ति। कन्धे नंगे। क्लियोपाट्रा के अन्तिम क्षण का वह नृत्य कर रही थी। सचमुच वह दृश्य बहुत आकर्षक था। भयानक भी।

गवर्नर साहब देखते रहे। जब सितारा का पहला नाच खतम हुआ, उन्होंने श्रीमती रमा चौधरी से कहा, “मुझे और भी काम है। जाना होगा, माफ़ कीजिए।” रमा चौधरी उनको गाड़ी तक छोड़ने गईं। उनके साथ और कर्मचारी भी गये।

फिर यथापूर्व सितारा का नाच दस-साढ़े दस बजे तक चलता रहा। अतिथि गप्पें मारते जाते थे और नाच भी देखते जाते थे। चौधरी साहब

रंगमंच के पास ही मुस्कराते हुए अकेले बैठे रहे। उनके पास अब्राहम की टोली थी। श्री अब्राहम जब कभी किसी पार्टी में जाते, उनके साथ औरतों की एक टोली रहती, पर पत्नी को कहीं भूलकर भी न ले जाते।

साढ़े दस बजे के करीब नाच खतम हुआ और लोग चले गये। श्री डगन और श्रीमती डगन भोजन के लिए भी निमंत्रित थे।

नाच के बाद श्रीमती रमा चौधरी रेडियो का संगीत सुनते-सुनते श्री डगन से गप्पें लगाती रहीं। श्री चौधरी मुस्कराते हुए सब सुनते जाते। कभी श्री डगन से कोई प्रश्न पूछते और चुप बैठ जाते।

साढ़े बारह बजे के करीब डगन दम्पति गया। श्रीमती चौधरी और श्री चौधरी एक-दूसरे को घूरते हुए अपने कमरे में चले गए।

: ६ :

सूरज काफ़ी चढ़ चुका था। नौ बज रहे होंगे। दुनिया का रोज़ाना का काम-काज शुरू हो गया। श्री चौधरी बगीचे में टहल रहे थे।

श्रीमती रमा चौधरी बिस्तर पर हाथ फैलाकर अंगड़ाइयाँ ले रही थीं। उनके चेहरे पर न पाउडर था, न क्रीम ही। आयु की परिचित रूप-रेखाएँ हल्की-हल्की झुर्रियों में साफ़ दिखाई देती थीं। वे अघेड़ लगती थीं—उस वृक्ष की तरह जिसकी बहार कभी की गुज़र चुकी हो।

उनके बिस्तर की बगल में एक तिपाई पर शहर के दैनिक रखे हुए थे। उनके घर तो सदा एक ही पेपर आया करता था। पर आज शहर का कोई ऐसा अख़बार न था, जो उनके लिए पहले ही खरीदकर वहाँ न रख दिया गया हो।

उन्होंने अख़बार उठाया और आँखें खोलते-मीचते आखिरी पृष्ठ देखा, जिसमें अक्सर चित्र छपा करते थे। उनको अपना चित्र न दिखाई दिया। झुंझलाकर अख़बार उन्होंने नीचे कालीन पर, जूतों के पास फेंक दिया। दूसरा अख़बार उठाया। उसमें उनका फोटो था, पर उसके नीचे

केवल गवर्नर साहब का नाम लिखा हुआ था, उनका नाम छोड़ दिया गया था। वे और लाल-पीली होने लगीं।

एक अखबार में उनका फोटो था और नाम भी। वे सम्पादक से स्वयं परिचित थीं। वे उनके क्लब के सदस्य भी थे। श्रीमती रमा चौधरी की पार्टियों की शोभा वे प्रायः बढ़ाया करते थे। उन्होंने अखबार खोलकर अन्दर खबर भी मोटे-मोटे अक्षरों में छपी पाई।

गवर्नर साहब द्वारा मछुओं की

बस्ती का निरीक्षण : बस्ती के निर्माण

की योजना : सरकार का आश्वासन

श्रीमती रमा चौधरी पढ़ती चली गईं। सारी खबर में सरकारी योजना की ही बात कही गई थी। बताया गया था—अच्छे-अच्छे मकानों का निर्माण किया जायगा, जिसमें मछुओं के परिवार को रहने की सुविधा दी जायगी। कॉरपोरेशन की उपनगर योजना पर भी प्रकाश डाला गया था। अन्त में दो पंक्तियों में यह छपा गया था—श्रीमती रमा चौधरी ने भी इस अवसर पर श्री गवर्नर के स्वागत के लिए भाषण दिया। श्रीमती रमा चौधरी सुपरिचित सामाजिक कार्यकर्त्री हैं।

और अखबारों ने तो इतना भी न लिखा था—श्रीमती रमा चौधरी ने एक क्षण सोचा कि फोन में सम्पादक को उल्टी-सीधी बतायें, पर न जाने क्या सोचकर बिस्तर पर, तकिये के सहारे बैठ गईं। वे अखबारों के पन्ने पलटती जाती थीं। उनके चेहरे की झुर्रियाँ कभी सिमटतीं तो कभी फूल जातीं। भौंहें नज़दीक आतीं, फिर आँखें फैल-सी जातीं।

लगभग सभी अखबारों में रिपोर्ट छपी थी। किसीमें एक कालम, किसी में डेढ़। पर उस रिपोर्ट में श्रीमती रमा चौधरी का नाममात्र ही दिया गया था, अथवा एक-दो पंक्तियाँ उनके भाषण की दे दी गई थीं।

श्रीमती रमा चौधरी अखबार वालों को मन-ही-मन आवाारागर्द समझती थीं। उनकी अनुपस्थिति में वे उन पर तेजाब बरसाती थीं। सामने चिकनी-चुपड़ी बातें करती थीं। उनको अपनी हर पार्टी में निमन्त्रित

करतीं, उनसे कभी-कभी मुस्कराकर बातचीत भी करतीं । पर उनको अखबार वालों का कभी 'सहयोग' न मिला । यह उनका कड़ा अनुभव था ।

आजकल अखबार वालों के बारे में और भी जली-कटी कहने लगी थीं । रोज कोई-न-कोई समाचार श्रीमती डगन के बारे में रहता । वे कोई छोटा-सा काम भी करतीं तो अखबारों में उसकी रिपोर्ट बाकायदा छपती । अब्राहम के बारे में भी यही बात थी । उनके कई बार चित्र छप चुके थे, यद्यपि वे न किसी संस्था के संरक्षक थे, न सदस्य ही । रेसेज में जरूर उनकी दिलचस्पी थी ।

वे अभी अखबार वालों को गालियाँ दे ही रही थीं कि उनके फोन की घंटी बजी । वे अखबार नीचे फेंकती हुई, वालों को संवारती हुई उठीं ।

“कौन है ?” उन्होंने पूछा ।

“पहचानो—मुबारकबाद है ।”

“ओह, तुम, डगन, गुड मॉर्निंग ।”

“कांग्रे चुलेश्नस, कल पार्टी बड़ी अच्छी रही ।”

“मैं परसों 'सितारा' का नाच होटल में भी करवा रहा हूँ ।”

“यह सब तुम्हारी मदद का फल है । पर देखो, ये अखबार वाले अन्धे लगते हैं । इनको सिवाय गवर्नर के और कोई दीखा ही नहीं ।”

“हाँ, मैंने भी देखा कि रिपोर्ट अच्छी न थी ।”

“पर ऐसे भी लोग हैं, मेरा मतलब अब्राहम से है, जो छीकें भी तो उनकी खबरें मोटे-मोटे अक्षरों में छपती हैं ।”

“यह तुम्हें मालूम है, अब्राहम के शहर के एक अखबार में कितने शेयर हैं ?”

“नहीं तो ।”

“लगभग बीस फीसदी । तुम दो-चार शेयर खरीद लो, ये अखबार वाले तुम्हारे सामने दुम हिलायेंगे, या इस्तहार का कौर इन्हें दिखाओ, तुम्हारी तरफ जीभ लटकाये आएँगे । आजकल अखबार भी क्या हैं ?

एक चाबी भरता है और दूसरा चलता है। मेरा मतलब इश्तहार देने वाले और सम्पादक से है। आखिर अखबार चलाना भी तो एक कारोबार है। जैसे और कारोबार हैं वैसे ही यह कारोबार है।”

“यानी, यह कारोबार वालों का कारोबार है।”

“खैर, नींद आई?” डगन का यह पूछना था कि श्रीमती रमा चौधरी को रात की घटना याद आ गई। अन्दर संगीत चल रहा था। श्रीमती डगन व उनके मित्र अन्दर बातें कर रहे थे। चाँदनी में श्रीमान् डगन और श्रीमती रमा चौधरी एकान्त में बातचीत कर रहे थे। यह घड़ी श्रीमती रमा चौधरी के जीवन में विचित्र थी। चोरी-चोरी वे मिले—दो प्रेमी-प्रेमिका की तरह, मस्त। आनन्द शायद और भी बढ़ जाता है, यदि वह खतरे से सीमित हो।

“हूँ...” श्रीमती रमा चौधरी कबूतरी की तरह गुटगुटाई, “और सुनाओ क्या बात है?”

“कुछ नहीं, बस तुम्हें मुबारकबाद देने के लिए ही फोन किया था।” श्री डगन ने कहा।

“शुक्रिया।”

“तुम होटल आओगी कि नहीं? मैं अभी वहाँ जा रहा हूँ।”

“इरादा तो नहीं है, आराम लेने की सोच रही हूँ। फिर खरीद-फ़रोख्त भी करनी है। बाल बनवाने हैं।”

“बाल हमारे होटल में भी बनाये जाते हैं—बहुत बढ़िया, एकदम अपटूडेट।”

“अच्छा... शुक्रिया।” श्रीमती रमा चौधरी फोन रखकर, बिस्तर पर बैठ गई—मुस्कराती हुई, भेंपती हुई। हाथ तकिये पर रख, सिर ऊपर किये कुछ याद करती हुई लगती थीं। वे प्रसन्न मालूम होती थीं, थोड़ी देर वैसे ही लेटी रहीं।

फिर चार्ल्स ने आकर तिपाई पर एक सन्तरा, दो-चार डबल रोटी के टुकड़े और कॉफी का भरा कप लाकर रख दिया।

श्रीमती रमा चौधरी ने कॉफी पीते हुए चार्ल्स से पूछा, “मालिक कहाँ हैं ?”

“बगीचे में टहल रहे हैं।”

“उन्होंने अखबार पढ़े कि नहीं ?”

“वे तो शाम का अखबार पढ़ते हैं।”

“आज का भी नहीं पढ़ा ?”

“जी, मुझे मालूम नहीं है।”

कॉफी पीती हुई फिर वे अखबार पढ़ने लगीं—इस बार और गौर से। एक-एक पंक्ति सावधानी से पढ़ती जाती थीं। मछुओं के सरदार की बात पूरी तरह छप गई थी। गवर्नर साहब का लगभग हर वाक्य उसी रूप में प्रकाशित किया गया था, जिस रूप में वह कहा गया था।

“चार्ल्स, जाओ, मछुओं के इस सरदार को बुलाओ।”

“इस वक्त वे मछली पकड़ने गये होंगे।”

“तुम्हारा सिर, क्या सरदार भी मछली पकड़ते हैं ?”

“जिन्दगी का सवाल है मालकिन, सभी पकड़ते हैं।”

“हाँ-हाँ, मुझे मालूम है—पकड़ने वाले भी अब वापस आ गए होंगे। दस बज रहे हैं।”

“हाँ, यह आपने ठीक कहा। जो चार-पाँच बजे निकल जाते हैं, दस-ग्यारह बजे वापस आ जाते हैं।”

“जाओ, उसे बुलाकर लाओ। मैं अभी नहा-धोकर नीचे आई।”

चार्ल्स तुरन्त जाकर सरदार को बुला लाया। वह बेचारा अभी समुद्र से लौटा था। तमेड़ मुश्किल से खींचकर किनारे पर रखी थी कि श्रीमती रमा चौधरी का बुलावा आ गया।

वह भागा-भागा चला आया। सिर पर तिकोनी ऊँची टोपी, नंगा काला बदन, लंगोटी पहने। वह धूप में तपा हुआ था, थका-माँदा, भूखा। वह श्रीमती रमा चौधरी के फाटक पर बैठ गया। वह सोच नहीं पा रहा था कि उसको यकायक क्यों बुलाया जा रहा है।

ग्यारह-बारह बजे के करीब, श्रीमती रमा चौधरी काला चश्मा पहने, सिगरेट पीती-पीती, अपने कुत्तों के साथ, फाटक के पास आई।

उन्होंने आते ही मछियारे को फटकारा, “गढ़ों की बात तुमसे किसने कही थी ?”

“मैं रोज़ देखता हूँ मालकिन, कि हमारे बच्चे उस कूड़े-कंकट में खेलते हैं और घर आकर गन्दा करते हैं, खाँसते हैं। मक्खियों का कहना ही क्या ? दिन में न सोने देती हैं, न बैठने देती हैं।”

“पर कभी मच्छरों का भी सोचा ? और उस गन्दगी के बारे में क्या कहते हो, जो बस्ती वाले दिन-रात फेंकते रहते हैं ?”

“मछुए अक्सर दिन में ही सोते हैं—तड़के उठकर चले जाते हैं—और दोपहर को वापस लौटते हैं।”

“यह मुझे भी मालूम है।” श्रीमती रमा चौधरी ने रीब से कहा।

“वे दिन में ही सोते हैं और मक्खियाँ उन्हें सोने भी नहीं देती।”

“यह बात तुम्हें गवर्नर साहब से कहने की क्या ज़रूरत थी ? मुझसे कहते। हम तुम्हारे लिए इतना कर रहे हैं, क्या उसका अहसान यही है कि तुम एक भद्दे ढंग से गवर्नर साहब के सामने हमारी शिकायत करो ?”

“मालकिन, हमने शिकायत कहाँ की है ?”

“जो तुम्हें लिखकर दिया गया था वह पढ़ना काफी था।”

“मैंने यह बात लिखने को कहा था, पर लिखी न गई। मैंने सोचा, भुला दी गई है। गलती माफ हो।”

“यह गलती क्या है ? यह तो गुस्ताखी है, समझे।”

“माफ़ कीजिए।”

“आखिर किसकी भलाई के लिए गढ़े भरे जा रहे हैं ? तुम्हारे भले के लिए ही तो।”

“आइन्दा ऐसी गलती न होगी।”

“जाओ...” बेचारा मछियारा, नीचा मुँह किये जा रहा था, और

श्रीमती रमा चौधरी गुनगुना रही थीं, “भोपड़ियों में रहने की तमीज़ नहीं और बड़े-बड़े मकानों में रहेंगे ये लोग ? यह सरकार भी पागल है ।”

वे बगीचे में टहलने लगीं । तब तक श्रीमान् चौधरी बरामदे में जाकर बेंत की कुर्सी पर बैठ चुके थे । श्रीमती चौधरी चहलकदमी करती जाती थीं और उनके कुत्ते दुम हिलाते-हिलाते उनके चारों तरफ चलते जाते थे । वे सोच रही थीं ।

उनको यह पसन्द न था कि उनके आलीशान बंगले के आसपास कोई मकान बने । इससे बंगले की शोभा कम होती थी । कहने को मछुओं के लिए मकान बनाए जायेंगे, पर रहेंगे वही क्लर्क । ये मछुए बेचारे किराये कहाँ से देंगे ?

जैसा कहो ये मछुए बेचारे सुन भी लेते हैं । क्लर्क किसी की क्या सुनेंगे ? आसपास दुनिया-भर का शोर करेंगे । छोटे-छोटे मकानों से अच्छी तो ये भोपड़ियाँ ही हैं । भीड़ से भागकर यहाँ मकान बनाया और भीड़ हमारे पीछे ही भागती आती है ।

सोचते-सोचते श्रीमती रमा चौधरी बगीचे के अन्त तक गईं और मछुओं के भोपड़ों की ओर ध्यान से देखने लगी । उनके विचारों ने एक और करवट बदली—

अगर मेरी चेट्टियार आज सुनता है तो इसीलिए ही कि मेरा इन मछुओं पर प्रभाव है । यदि सामाजिक क्षेत्र में पूछताछ होती है तो इसी-लिए क्योंकि लोग समझते हैं कि मैं इन मछुओं के लिए काम करती हूँ । गवर्नर साहब मेरा निमन्त्रण स्वीकार करते हैं तो इसीलिए, क्योंकि मैं एक ‘सामाजिक सेविका’ मानी जाती हूँ और मैं सामाजिक सेविका इन्हीं मछुओं के बूते पर ही हूँ । आजकल इन कांग्रेसियों का ज़माना है । सेवा का ढोंग आवश्यक है, नहीं तो समाज में गिनती ही नहीं होती ।

अगर आज मुझे दस-पाँच नेता जानते हैं तो इसीलिए, क्योंकि मैं इन मछुओं का रोना उनके सामने रोती रहती हूँ । दो-चार कमेटियों में सदस्य हूँ, सो भी इन्हीं के बल पर ही । ये लोग ही मेरी हैसियत के

खम्भे हैं। अगर इन लोगों की बस्ती हटाकर नये घर बनेंगे तो बलकें रहने आयेंगे। फिर मेरी कौन सुनेगा? मेरी हैसियत क्या रहेगी? मैं हिमालय का कोई पक्षी तो हूँ नहीं कि सदियों में एक घोंसला बनाया और गर्मियों में दूसरा। यहाँ सालों से रहती आई हूँ, इस घर को छोड़कर कहाँ जाऊँ? बना-बनाया काम किसी और के हवाले क्यों करूँ?

फिर श्रीमती डगन और श्रीमती कृष्णस्वामी वगैरह तो बगलें बजाएँगी, खुश होंगी कि उन लोगों ने मुझ पर बाजी मार ली है। जिस समाज में मैं हूँ, अगर मैं उसमें रहना चाहती हूँ, तो जरूरी है कि यह मछुओं की बस्ती भी बने रहे।

और यह बनी रहेगी—श्रीमती रमा चौधरी ने अपने हाँठ समेटे, जैसे उन्होंने कोई दृढ़ निश्चय कर लिया हो। वे फिर मकान की तरफ लौटीं जल्दी-जल्दी, मानों बहुत ही जरूरी काम हो।

बरामदे में पति के पास वे यकायक आकर रुक गईं। कुर्सी खींचते हुए पूछा, “प्रातराश तो कर लिया है?”

“हाँ...”

“रात की पार्टी कैसी लगी?”

“अच्छी थी, मैं अय्यर से उसके हिसाब के बारे में पूछ रहा था। वह कहता है कि एक पाई भी नहीं खरची गई। हमारे घर में पार्टी हो और खर्च कुछ भी न हो, यह कैसे हो सकता है?”

“यह पार्टी घर में हुई, पर घरवालों के लिए तो नहीं हुई। यह सामाजिक कार्य है। समाज को ही खर्च करना चाहिए, भला हम क्यों खर्च करें? हमने जगह दे दी, यह काफी है।”

“आखिर किसका खर्च था?”

“चेट्टियार का।”

“सिर्फ चेट्टियार का?”

“हाँ-हाँ, करीब-करीब सारा।”

“मुझे ऐसी पार्टियाँ पसन्द नहीं हैं, रमा! सामाजिक कार्य है तो

और जगह भी किया जा सकता है, हमारे घर में ही क्यों किया जाय ? खैर," चौधरी साहब ने आज शायद पहली बार अपनी नापसन्दगी प्रकट की थी । अगर श्रीमती रमा चौधरी का मन किसी और पेचीदा बात पर न उलझा हुआ होता तो शायद वे एक पानीपत ही छोड़ देतीं । पर अब उन्होंने अनसुनी-सी कर दी ।

"जानते हो, यहाँ मछुओं के लिए सरकार की तरफ से मकान बन-वाए जा रहे हैं ?"

"अच्छा ही है । बेचारे गरीबों को धूप-पानी से बचने के लिए कोई पक्की जगह तो मिलेगी ।"

"क्या मछुए मकान का किराया दे सकेंगे ? उनकी जगह पर कलम घिसने वाले, ँंटे हुए ये क्लर्क आ मरेंगे ।"

"आखिर वे भी तो ग़रीब हैं । उन्हीं का भला होता है तो क्या हर्ज है—मछियारे कहीं और जाकर अपनी बस्ती बना लेंगे ।"

"तब हमारे बंगले की सारी शान मारी जायगी ।"

"कोई बात नहीं । बंगले की शान क्या इसमें है कि चारों तरफ़ सुनसान जगह हो ? किसीका तो फायदा हो ? मछुए नहीं तो क्लर्क सही । वे बेचारे हमारा क्या बिगाड़ेंगे ? उनको भी तो कहीं-न-कहीं मकान चाहिए । अगर उनको भी घर यहीं मिलते हैं तो हम क्यों ऐतराज करें ? करना भी नहीं चाहिए, न कर सकते हैं ।"

"आपको पादरी होना चाहिए था, नहीं-नहीं उपदेशक," कहती हुई रमा चौधरी अपने कमरे में चली गईं । वे अपने मन के विचारों को उस हालत में अपने पति को नहीं बतानी चाहती थीं ।

दस-पन्द्रह मिनट वे घर में टैक्सी का इन्तज़ार करती रहीं, फिर श्री डगन के होटल में बाल कटवाने के लिए चली गईं । बाज़ार में घूम-घामकर, खरीद-फरोख्त कर रात को नौ बजे के करीब आईं । तब उनके पति डाइनिंग रूम में अमेरिकी पत्रिकाओं के पन्ने पलट रहे थे ।

श्रीमती रमा चौधरी चेट्टियार के घर बैठी हुई थीं। वे कुछ व्याकुल और चिन्तित लग रही थीं। उनके हाव-भाव में एक उतावलापन-सा था। चेट्टियार से वे प्रायः इस तरह बातें करती थीं, मानों वे उनसे दस सीढ़ी ऊपर हों। पर आज उनकी आवाज में विचित्र विनय था।

शाम के चार बज रहे होंगे। चाय के प्याले सामने रखे हुए थे। श्रीमती रमा सिगरेट के साथ चाय पीती जाती थीं। चेट्टियार भी कमरे में आये और चाय पीते-पीते किसी उलझी समस्या के बारे में सोचने लगे।

चेट्टियार से श्रीमती रमा चौधरी कह रह थीं, “आपने सुना कल गवर्नर साहब का भाषण ? इनको बुलाकर हमने अच्छी आफत मोल ली।”

“इन गवर्नर साहब की ज़रा बुरी आदत है—इस बात की कोई तमीज़ नहीं कि किस चीज़ को कहाँ बोला जाय।”

“मछुओं की बस्ती वहाँ से हटा दी गई और उनके लिए नये मकानात बन गए, तो मालूम है क्या होगा ?—मछुए जाकर अपनी नई वस्ती बना लेंगे और नये मकानों में क्लर्क आ जायेंगे। सरकार नये मकान बना सकती है, पर बिना किराये के किसीको रहने थोड़े दे सकती है ? मछुए किराया कहाँ से लायेंगे ?”

“आपने बिलकुल ठीक अनुमान लगाया है। अगर क्लर्क उस जगह आकर रहने लगे तो समझ लीजियेगा, एक मत नहीं मिलेगा। पढ़े-लिखे ही साम्यवाद के शिकार होते हैं। बेचारे मछुए क्या जानें—जिसने दो पैसे दिये उसीकी हाँ-हाँ करने लगते हैं। सोचने की बात दरअसल यह है—यानी मैं तब की बात कर रही हूँ अगर आप राजनीति में रहने का निश्चय करें।”

“जब इसमें घुसे हैं तो कुछ करके जायेंगे, वरना क्या फ़ायदा ? राजनीति भी व्यापार है। घाटा-फ़ायदा तुरन्त नहीं मालूम हो जाता।

वक्त लगता है ।”

“आप ठीक कहते हैं । आपको यह जगह नहीं छोड़नी चाहिए, इससे अच्छी जगह आपको शहर में कहीं न मिलेगी । मगर यह तभी तक अच्छी है जब तक यहाँ मछुए रहते हैं; वलकं आये कि हमें मैदान छोड़कर भागना पड़ेगा ।”

“तब क्या किया जाय ?”

“आप ही बताइए ।”

“कुछ सूख नहीं रहा है ।” सिगरेट पीते-पीते श्री चेट्टियार इधर-उधर चहलकदमी करने लगे । व्यापार में उन्होंने बहुत उतार-चढ़ाव देखे थे । लाखों का व्यापार करते आए थे । रोज़ दसियों से वास्ता रहता था । व्यापारियों में चलते-पुर्जे समझे जाते थे । पर राजनीति में नौसिखिये थे । हाल ही में वे राजनीति की ओर आकर्षित हुए थे । जब वे व्यापारी मण्डल के अध्यक्ष निर्वाचित हुए तो उनको राजनीति का चस्का ऐसा लगा जैसे आदमखोर शेर को आदमी के खून का चस्का लगता है ।

घर में उन्हीं की चलती थी । पत्नी ने कई बार कहा कि राजनीति में उतरना मगर के मुख में पैर रखना है, रुपया बरबाद करना है । चार दिन की चाँदनी के लिए घर स्वाहो कर देना अक्लमन्दी नहीं है । इस सिलसिले में उनकी माँ ने यहाँ तक कहा था कि चाँदनी भी कहाँ है । चार दिन की आतिशबाजी है । क्या विवाह का जोर-जलसा ज़िन्दगी भर चलता है ?

“इसलिए क्या आदमी विवाह किये बगैर रहता है ?” चेट्टियार ने कहा था । वे अपनी मनमानी करते आ रहे थे । हजारों रुपया खराब कर दिया था । व्यापार-मण्डल के वातावरण से उठकर वे अब सामाजिक क्षेत्र में आ गए थे और अब सत्ता की सीढ़ी के इर्द-गिर्द मौके की फ़िराक में पैतरे खेल रहे थे । उनका अनुभव काफी बढ़ गया था, पर राजनीतिक पैतरेबाजी में वे कच्चे थे । फिर न जाने क्यों, वे रमा

चौधरी के जादू में आये हुए थे ।

“बताओ, तब क्या किया जाय ? मैं राजनीति से अलग नहीं होना चाहता । अभी कांग्रेस का सिक्का चल ही रहा है और कई दिन चलेगा भी । जब तक चलता है, मैं कभी-कभी सोचता हूँ, क्यों न कांग्रेस का सदस्य हो जाऊँ । स्वतन्त्र उम्मीदवार तो बेपटरी के रेल के डिब्बे हैं ।”

“पर कांग्रेस में शामिल होते ही कौन आपको असंबली का सदस्य बना देगा ? वहाँ सैकड़ों सालों से सदस्य होने के लिए लोग ज़मीन-आसमान एक कर रहे हैं । हो सकता है, पैसे के बल में दो-चार कदम आप उनसे आगे रह सकते हैं, मगर फिर भी...”

“हाँ, हाँ, आप ठीक कहती हैं ।” चेट्टियार ने मुस्कराते हुए कहा ।

“अगर आप स्वतन्त्र टिकट पर चुन लिये गए तो आप अपना भाव-ताव कर सकते हैं । फिर आजकल कांग्रेस में भी उन्हीं की पूछ हो रही है, जो पहले कांग्रेस पर चाँदमारी किया करते थे । अंग्रेजों के ज़माने में अंग्रेजों का नमक खाया, अब कांग्रेस का ज़माना है, इसलिए कांग्रेस का खा रहे हैं । खाउओं को खाना मिल ही जाता है । कौए कहीं भूखे मरते हैं ?”

“तो बताइए अब क्या किया जाय ?”

“आपने अब चुनाव के लिए जगह चुन ली है । अब ज़रूरी है कि आप मोर्चाबन्दी करें और मोर्चाबन्दी की पहली चाल यह होनी चाहिए कि सरकार या कॉरपोरेशन की अपनी योजना कार्यान्वित न हो, वरना किया-कराया काम सब चौपट हो जायगा ।

“यह योजना है किसकी ?”

“शायद कॉरपोरेशन की है ?”

“आप ही बताइए क्या किया जाय ?” श्री चेट्टियार अभी समस्या सुलझा नहीं पाये थे । श्रीमती रमा चौधरी के लिए अब यह समस्या नहीं रह गई थी । उन्होंने इसके हल करने का अपना रास्ता निश्चित कर लिया था । पर वे चाहती थीं कि चेट्टियार भी अपने-आप वही

सोचे, जो उन्होंने सोच रखा था। ऐसा करने से वे अधिक उत्साह दिखायेंगे, उनके सहयोग से काम जल्दी बन जायगा और वे बदनाम भी न होंगी। वे इसलिए आवश्यक वातावरण तैयार कर रही थीं।

“कॉरपोरेशन में तो आप बहुत लोगों को जानते होंगे?” श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा।

“जानता क्यों नहीं हूँ? मेरे अपने रिश्तेदार हैं। कौंसिल में दो-चार सदस्य अच्छे दोस्त हैं। मुदलियार के भाई भी कौंसिल के सदस्य हैं। काम बन सकता है। यह पहले मुझे क्यों न सूझा? फालतू माथा-पच्ची कर रहा था।” चेट्टियार ने यकायक रुककर जोर से हाथ उठाकर कहा।

“अब्राहम के भाई डिप्टी कमिश्नर हैं। मैं अब्राहम से इस विषय में बातचीत कर लूँगी।”

“तब तो काम बन गया। आइए, मेयर से बातचीत कर आएँ।”

“मैं अच्छी तरह मेयर को जानती नहीं हूँ। फिर भला ऐसी स्त्रियों की कौन सुनेगा? हमें काम करना है। आप करें या मैं कहूँ, इसमें क्या रखा है? मेरे सामने हो सकता है, मेयर आपसे बातचीत करने में भेंपे।” रमा चौधरी ने टालते हुए कहा।

“अच्छा आप मुदलियार से भी बातचीत कर लीजिए।”

“हाँ-हाँ, जरूर। मगर यह काम नाजुक है। फूँक-फूँककर कदम रखना होगा। मैं फिर भी कोशिश करूँगी।”

“जैसी आपकी मर्जी। आइए, चलें। आप कहाँ जायेंगी? आपकी कार बाहर है न?” चेट्टियार ने पूछा।

“ज़रा टैक्सी के लिए फोन करने दीजिए।”

“टैक्सी-वैक्सी की क्या जरूरत है? आइए, हमारी कार है ही। आप जहाँ चाहें वहाँ मैं आपको उतार आऊँगी।”

कार में बैठने के बाद श्रीमती रमा चौधरी ने कहा, “ज़रा सँभलकर आपको काम करना होगा। चुनाव नज़दीक आ गया है। अगर यह

बात कम्युनिस्टों को मालूम हो गई तो चिल्लाते-चिल्लाते नाक में दम कर देंगे ।”

“अम्बिकादेवी क्या अब भी कुछ काम कर रही है कि नहीं ?”

“सरकार ने उस पर बिना इजाजत के मीटिंग बुलाने के लिए जुर्माना थोपा था । पार्टी ने जुर्माना दे दिया । अब फिर पहले की तरह काम कर रही है, पर उसकी कोई नहीं सुनता ।”

“इन लोगों के पास रुपया आता कहाँ से है ? रईस कोई देता नहीं । गरीबों के पास देने के लिए कुछ है ही नहीं । मगर फिर भी वे सैंकड़ों चीजें करते हैं—अखबार चलाते हैं, किताबें छापते हैं और न जाने क्या-क्या करते हैं ? रुपया आता कहाँ से है ?”

“शायद रूस से ।”

“पर उसका सबूत ?”

“कोई देश क्या दूसरे देश को इस तरह से पैसा देता है ताकि दूसरे जान जायें ?”

“फिर यकीन कैसे किया जाय ?”

“यकीन करने और कराने में ही हमारा काम बनता है । इस-लिए यकीन कीजिए, सबूत हों या न हों । कम्युनिस्ट पार्टी को बुरी तरह बदनाम कीजिए, फिर हमारा मैदान साफ़ है ।”

“आपका क्या खयाल है—मैं चुनाव जीतूँगा कि नहीं ?”

“जीतेंगे क्यों नहीं ? हम इतने दिनों से मेहनत जो कर रहे हैं । पूरे तीन महीने से खून-पसीना एक कर रहे हैं ।”

“देखा जायगा—भगवान् चाहेंगे तो बाजी जीतेंगे ही ।”

“हूँ—”

दोनों थोड़ी देर चुप रहे । कार टेढ़ी-मेढ़ी गलियों से होती हुई समुद्र-तट पर पहुँच गई थी और सर्राटे से दौड़ रही थी । श्रीमती रमा चौधरी का मकान पास आ गया था ।

“आपके जौहरी के पास मैंने दो-चार दिन पहले आपके बिल के

रुपये भेज दिए थे, उन लोगों ने आपको लिखा कि नहीं ?” चेट्टियार ने कुछ हिचकते हुए पूछा ।

“हाँ-हाँ, लिखा था । बहुत-बहुत धन्यवाद !”

“रसीद भेजी कि नहीं ? दो-तीन हजार की रकम थी ।”

“हाँ-हाँ भेजी थी, खैर । आप मेयर साहब से मिलिए । आप तुरन्त मुझे फोन कीजिए, मैं घर पर ही इन्तज़ार करूँगी, फिर क्लब चली जाऊँगी । सारी बातें मालूम कीजिए ।”

“हाँ-हाँ, मुझे अब भी ऐसा लग रहा है जैसे आधा काम हो गया हो । चौधरी साहब कैसे हैं ? आजकल कहीं दिखाई नहीं देते ?”

“अच्छे हैं ।”

“सुना है राव के साथ साभे में कोई व्यापार करने जा रहे हैं ।”

“हम भला क्या व्यापार करेंगे ? वह सब काम हमने आप लोगों को छोड़ रखा है ।” श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराकर चिढ़ाते हुए कहा ।

श्रीमती रमा चौधरी का मकान आ गया था । वे कार से जब उतरीं तो चेट्टियार ने कहा, “अब्राहम और मुदलियार के बारे में मत भूलिए, ज़रूर बातचीत कीजिए ।”

श्रीमती रमा चौधरी ने घर के अन्दर जाते-जाते यह बात अनसुनी-सी कर दी । वे मन-ही-मन खुश हो रही थीं । किसी अंग्रेजी गाने की धुन धीमे-धीमे गुनगुना रही थीं । वे सोच रही थी—अच्छा हुआ, इस चेट्टियार से पिंड छूटा । काम हमारा होगा, बदनाम वह होगा ।

वे बैठक में ही नीचे बैठ गईं । पत्र-पत्रिकाएँ उठाकर पढ़ने लगीं । श्रीमती रमा चौधरी का समय आसानी से कट जाता था । सिगरेट और समय का न जाने क्या रिश्ता है, मुख में सिगरेट रखी नहीं कि समय चौकड़ियाँ भरने लगता है—कम-से-कम श्रीमती रमा चौधरी यही अनुभव करती थीं ।

फिर उन्होंने चार्ल्स को पुकारकर पूछा, “डाक आई है कि नहीं ?

शाम की डाक ।”

“मालकिन, आ चुकी है ।” चार्ल्स ने डाक लाकर दे दी । दो-चार चिट्ठियाँ थीं । एक कपड़े की दुकान से थी । पैसे का तकाज़ा कर रहे थे । दो पत्र जुवेनाइल कोर्ट से थे । एक चिट्ठी बंगलौर से कमला की थी । उसके बच्चा पैदा हुआ था ।

श्रीमती रमा चौधरी ने भट अपना लेटरपेड मँगाकर कमला को मुबारकबाद लिखकर भेजे ।

“मालिक घर में हैं कि नहीं ?” श्रीमती रमा चौधरी ने चार्ल्स से पूछा ।

“जी, नहीं है, राव साहब आये थे, उनके साथ चले गये हैं ।”

“क्यों ?”

“जी, यह तो नहीं मालूम । उन्होंने सिर्फ इतना बताया कि वे रात को भोजन के लिए घर ही आएँगे ।”

तब श्रीमती रमा चौधरी ने अपने माँ-बाप को मद्रास आने के लिए चिट्ठी लिखी ।

जब से श्री चौधरी जी घर आये थे, श्रीमती रमा चौधरी को लग रहा था, जैसे उनकी स्वतन्त्रता में कोई बाधा आ गई हो, हालांकि उनकी बातों में श्री चौधरी कतई दखल न देते थे । श्रीमती रमा चौधरी उनकी अनुपस्थिति में ही ज्यादा प्रसन्न रहती थीं । तब डगन से उनकी इतनी घनिष्ठता भी न थी । कभी-न-कभी तो धुआँ दिखाई ही देगा । न धुआँ छिपाया जा सकता है, न प्रेम ही ।

फिर मछुओं का भी सवाल था । श्रीमती रमा चौधरी नहीं चाहती थीं कि पति को उनकी तिकड़मबाजी का भान हो । अगर उनको मालूम हो गया तो राव को मालूम हो जायगा और राव से सारा शहर जान जायगा ।

वे चाहती थीं कि चौधरी साहब फिर अपने घर चले जायें । सीधी तरह कह न पाती थीं और श्री चौधरी का मद्रास छोड़कर फिलहाल

बाहर जाने का कोई इरादा न था। वे यद्यपि श्रीमती रमा चौधरी को घर लिवा लेने के लिए आये थे, पर स्वयं मद्रास में रह गए थे। वे अब भी अपनी पत्नी को छोड़कर न रह पाते थे।

श्रीमती रमा के माँ-बाप बहुत दिन तक उन्हीं के घर रह चुके थे तो भी श्री चौधरी को वे पसन्द न आते थे। वे उनसे खिन्ने रहते—नाराज़। खर्च की बात अलग, उनको उनका व्यवहार, रहन-सहन भी बिल्कुल पसन्द न था। जितने दिन वे यहाँ रहे, वे किसी-न-किसी बहाने घर से बाहर रहते, सिर्फ़ रात को घर सोने आते। कभी-कभी शहर छोड़कर भी चले जाते।

श्रीमती रमा चौधरी का विश्वास था कि अगर उनके माँ-बाप मद्रास आ गए तो ज़रूर कुछ-न-कुछ दिनों के लिए चौधरी साहब शहर छोड़कर चले जायेंगे। यही श्रीमती रमा चौधरी चाहती थीं। माँ-बाप के सामने उन्हें कोई डर न था। चौधरी साहब से अगर वे इस विषय में बातचीत करतीं तो भी वे प्रकट रूप से कोई आपत्ति न करते। 'न' करना उनके स्वभाव में ही न था।

चिट्ठियाँ लिखकर उन्होंने चार्ल्स के हाथ डाकखाने भिजवा दीं। स्वयं रेडियो का संगीत सुनने लगीं। उन्होंने दो-चार बार फोन कर अपने को व्यस्त करना चाहा, पर वे अपनी जगह से न उठीं। वे बड़ी मुश्किल से डगन को फोन करने का लालच संवरण कर पाईं।

वे काफ़ी देर तक चेट्टिट्यार के फोन का इन्तज़ार करती रहीं, पर फोन न आया। वे कुछ बेचैन-सी होने लगीं।

अट्यर को बुलाकर कहा, "मेरे लिए चेट्टिट्यार फोन करें तो कहना, मैंने बहुत देर इन्तज़ार किया। बता देना कि मैं क्लब में हूँ। वहीं फोन करें। एक टैक्सी के लिए फोन करो।"

चार-पाँच मिनट बाद टैक्सी आई और श्रीमती रमा चौधरी उस पर सवार हो क्लब चली गईं।

“हलो, मैं रमा चौधरी हूँ।” श्रीमती रमा चौधरी क्लब के फोन वाले कमरे में अकेली बैठी हुई, चेट्टियार से बातचीत कर रही थीं। समय कोई सात-साढ़े सात का था।

“मैंने मेयर साहब से बातचीत कर ली है,” श्री चेट्टियार ने दूसरी ओर से कहा।

“अच्छा हुआ,” रमा चौधरी ने जवाब दिया।

“बहुत-कुछ बातें करनी हैं। मामला उतना उलझा हुआ नहीं है, जितना आप समझा रही थीं।”

“ऐसी बात है तो क्लब चले आइये, मैं आपकी प्रतीक्षा करूँगी।” श्रीमती रमा चौधरी ने फोन रख दिया और वे पास के गुसलखाने में चली गईं। चेहरे पर पाउडर की एक और गहरी परत लगा ली। तरो-ताजा होकर, वे लॉन पर जाकर बैठ गईं।

उनके पास अब्राहम बैठे हुए थे। मुदलियार शायद क्लब में नहीं आये थे। लॉन पर और भी कई लोग थे, फिर भी जगह शान्त थी। क्लब के अन्दर से संगीत ज़रूर आ रहा था। कोई अखबार पढ़ रहा था, कोई चाय-पानी पी रहा था, बड़े लोगों की क्लब थी। दिल-बहलाव के और कई साज-सामान थे। महज बातचीत से क्या फायदा?

“आज हमें आपसे काम पड़ गया है,” रमा चौधरी ने अब्राहम की पीठ थपथपाते हुए कहा।

“पर जानती हो रमा, यह क्लब है, ऑफिस नहीं है,” अब्राहम ने मजाक में मुस्कराते हुए कहा।

“पर सुना है, आप जैसे लोग क्लब में ही आधा काम बना लेते हैं। बातचीत यहाँ हो जाती है और दस्तखत दफ्तर में।” रमा चौधरी ने मुँहतोड़ जवाब दिया।

“खैर, मैं आधा ही करता हूँ, तुम तो क्लब में ही पूरा काम कर

लेती हो ।”

अब्राहम भी बातचीत में कुशल व्यक्ति थे । जब वे ट्रावनकोर से आये थे, सिवाय बी० ए० डिग्री के उनके पास कुछ न था । पूँजी के नाम पर दो-तीन फटे-पुराने कुरते और पतलून थी । पर वह पन्चीस साल पहले की बात है । अब तो उनकी पाँचों अँगुलियाँ घी में हैं ।

एक अंग्रेज के खराब व्यसन के कारण उनके भाग्य चमक उठे थे । अब्राहम की नैतिक मान्यताएँ कुछ भिन्न थीं । वे अंग्रेज आफ़ीसर को खुश करने के लिए हिन्दुस्तानी बाज़ारू स्त्रियों को उसके घर भेजा करते और जब अंग्रेज मरा तो कम्पनी के शेयर्स अब्राहम को सौंप गया । ऐसी बातें अक्सर देखने में नहीं आती, पर अब्राहम के भाग्य खुल गए । वे एक मामूली आफ़ीसर से कम्पनी के डायरेक्टर बन गए । अगर ईंट-पत्थर मिल जाय तो मकान बनते कितनी देर लगती है ! बैंक अकाउण्ट बढ़ने लगा । पूँजी ने अपना गुल दिखाया । दसियों कम्पनियों में वे डायरेक्टर बन गए ।

दुनिया देखी थी, बातों-बातों में उन्होंने अपनी एक सम्पन्न सत्ता बना ली थी । वे भी रमा चौधरी की तरह एक प्रकार के निम्न स्तर से टेढ़े-मेढ़े रास्तों पर भटकते-भटकते एक गम्य स्थान पर पहुँच गए थे, जहाँ उनको अपने सपने पूरे होते दीखते थे ।

अब्राहम ने अपनी कुर्सी और नज़दीक खींची और श्रीमती रमा चौधरी का हाथ पकड़कर खिलखिलाकर हँसने लगे । वे शायद श्रीमती रमा चौधरी की बात टालना चाहते थे—इस डर से कि कहीं वे चन्दा न माँग बैठें । अब्राहम पैसे वाले थे, पर एक-एक पैसे को गिन-गिनकर जमा करने वाले भी थे । जहाँ दूसरों पर खरचने की बात आती तो वे अव्वल दर्जे के खुदगर्ज और कंजूस हो जाते थे ।

श्रीमती रमा चौधरी से उनका कभी घनिष्ठ परिचय था, परन्तु उनके जीवन में नई-नई बहारें आईं और उन बहारों के साथ-साथ उनका जीवन भी बदलता गया । उनकी कृपा आज किसी पर रहती,

कल किसी पर। उनका दिल पारे की तरह था, जो न स्थिर रहता था, न ठीक तरह बह ही पाता था। अद्भुत व्यक्ति थे।

“खैर, ... ये बातें हमारे सामने नहीं चलेंगी। यह काम करवाना ही होगा।” श्रीमती रमा चौधरी ने थोड़ी देर ठहरकर कहा।

“सुना है, चौधरी साहब आजकल रोज़ाना क्लब आ रहे हैं—और तुमको शायद क्लब आने की फुर्सत नहीं मिलती। क्यों रमा?”

“आज भी आये थे क्या वे?”

“आये थे, राव के साथ अभी-अभी कहीं बाहर गये हैं। इन दोनों की खूब गहरी छन रही है। राव को तुम जानती ही हो, पहुँचा हुआ आदमी है। कहीं चौधरी साहब उसकी सोहबत में खराब तो नहीं हो रहे हैं?”

“हटाओ भी यह बात। ज़रूरी काम आ पड़ा है, तुम्हारी मदद की ज़रूरत है। बात यों है—”

“अच्छा तो तुम सुनाकर ही रहोगी?”

“तुमने कल गवर्नर साहब का भाषण सुना ही होगा?”

“हाँ-हाँ, सुना था। उसमें था क्या सिवाय भाग के?”

“उन्होंने कहा था कि मछुओं के लिए हमारे बंगले के पास नये मकानों के बनवाने की योजना बन रही है। मैं नहीं चाहती कि वहाँ कोई मकान बने।”

“हाँ-हाँ, फिर तुम्हारे बंगले की शान ही क्या रह जायगी?”

“सुना है कॉरपोरेशन इस योजना को अमल में ला रही है, गवर्नर साहब ने कहा था।”

“और तुम घबरा उठी। आजकल योजनाओं का ज़माना है—योजनाएँ ऐसी बन रही हैं जैसे वे कोई साबुन के बुलबुले हों। कई बनकर फूट जाती हैं, कई बनते-बनते ही।”

“फिर भी गवर्नर साहब ने कहा है।”

“कहा होगा, मगर योजनाएँ बनती अधिक हैं और अमल में कम आती हैं।”

“अगर यह योजना अमल में आ गई तो ?”

“खैर, अच्छा, बताओ मुझे क्या करने के लिए कहती हो ?”

“आप अपने भाई से कहना कि योजना को अपनी जगह पहुँचा दें, यानी रही की टोकरी में ।”

“वह अपने-आप ही चली जायगी, घबराती क्यों हो ? फिर भी तुम पूछ रही हो, इसलिए मैं उसे कल घर बुला लूँगा, तुम ही बातचीत कर लेना ।” इतने में अब्राहम को कोई परिचित स्त्री दिखाई दी । वे उठकर चल दिए । “अच्छा, कल की बात पक्की रही । शाम को ।” वे आँखें टेढ़ी कर एक बार मुस्कराए ।

श्रीमती रमा चौधरी बैठी-बैठी कुछ सोचती जाती थीं । उनमें एक आदत थी—शायद सभी स्त्रियों में वह होती है—जब किसी चीज़ की धुन सवार होती तो उसको पूरी करके छोड़तीं । अब मन-ही-मन वे सोच रही थीं कि कैसे डिप्टी कमिश्नर से बातचीत की जाय ।

सोचने का भी उनका अपना तरीका था । बिना सिगरेट और कुछ पीने के वे सोच भी न पाती थीं ।

चेट्टियार जब आये तो उनके चेहरे पर प्रसन्नता थी । वे आते ही बड़ी खुशी-खुशी श्रीमती रमा चौधरी से बातचीत करने लगे । “यह बात सच है कि कॉरपोरेशन ने मछुओं के लिए मकान बनवाने की एक योजना तैयार कर रखी है । अभी वह सिर्फ कागज़ पर ही है । कोई निश्चित कार्यवाही नहीं की गई है । कमेटी के सामने भी नहीं गई है । इसके लिए सरकार से उधार माँगा गया है । इसी वजह से गवर्नर को इस बारे में बताया गया था, ताकि सरकार आसानी से उधार दे दे ।

“मेयर साहब का तो यहाँ तक कहना है कि अगर उधार मिल गया तो यह जरूरी नहीं कि वह रुपया इन मकानों पर ही खर्च किया जाय ।”

“पर मेयर साहब ने हमारी बात पर क्या कहा ?”

“उन्होंने कहा कि उन्हें तो यकीन नहीं है कि मछुओं को बस्ती पर कोई खर्चा होगा । योजना कमेटी नुक्ताचीनी करेगी ही । कमेटी पास

ही न करेगी। कॉरपोरेशन के पास इन फालतू चीजों के लिए पैसा ही कहाँ है ?”

“और.....”

“इतना कहकर भी उन्होंने बताया कि कम्युनिस्ट इस योजना को कार्यान्वित करने के लिए जोर लगा रहे हैं। उनके हिमायती भी कमेटी में हैं। अगर कुछ कमेटी ने ढील-ढाल दिखाई तो वे हो-हल्ला करेंगे। फालतू बदनामी। इसलिए मेयर साहब ने कहा कि ज़रा सँभलकर चलो।”

“मैं भी यही कह रही हूँ। मुझे अब भी ऐसा अनुभव हो रहा है कि यह योजना कम-से-कम जरूर कार्यान्वित होगी। शायद यह चाहते हैं कि हम लोग इस बारे में कुछ न करें या कहें और आसानी से काम हो जाय और बाद में उन्हें कहने का मौका मिल जाय कि किसीने कोई विरोध किया नहीं, इसलिए योजना के अनुसार काम कर दिया गया। मुझे दाल में कुछ काला लगता है।”

“हूँ-हूँ..... तुम्हारा कहना ठीक-सा लगता है। मेयर साहब ने कहा था कि गवर्नर साहब सीधे आदमी हैं। जो कुछ कहते हैं उसमें पूरी दिलचस्पी दिखाते हैं। अगर ज़िद पकड़ ली तो फिर कहना मुश्किल।” श्री चेट्टियार ने ज़िन्दगी में बहुत-कुछ देखा था, पर इन राजनीतिज्ञों की बातों को वे अभी तक छानकर परख नहीं पाते थे।

“मैं भी तो यह कह रही हूँ। योजना के बारे में सब जगह रिपोर्ट छप गई है। अगर कल काम न किया गया तो अखबार वाले ही धूल उछालने लगेंगे और जहाँ अखबार में शोर हुआ कि ये कांग्रेसी चौकन्ने हो जायेंगे।”

“आपने मुदलियार से बातचीत नहीं की ? अब्राहम से जरूर मैंने बातचीत की। कल डिप्टी कमिशनर से बातचीत करूँगी। हो सकता है मेयर साहब को पूरी जानकारी न हो।”

“हाँ-हाँ, वे साफ़ ही कह रहे थे कि उनको पूरी जानकारी न थी।

उन्होंने सिर्फ अपनी निजी राय ज़ाहिर की।”

“मेरा भी यही खयाल है।”

“तो चलिए मुदलियार से भी मिल आएँ।”

“वे हैं कहाँ ? ज़रा उनके घर पर फोन करके देखिए—अगर हों तो उनको कहिए कि यूनिवर्सिटी के पास, समुद्र-तट पर हम उनका इन्तज़ार करेंगे।”

श्री चेट्टियार फोन करने चले गए और रमा चौधरी चिन्तित-सी दूर देखने लगीं। उनके होंठ भिचे हुए थे। लगता था, जैसे उन्होंने कोई निश्चय कर लिया हो।

वे दोनों कार में समुद्र-तट पर गये। समुद्र के उस प्रान्त में अक्सर भीड़ नहीं रहती है। पाँच-दस बड़े-बूढ़े बुजुर्ग बेंचों पर बैठकर समुद्र की हवा खाते हैं। मद्रास का समुद्र-तट अजीब है। यह आर्थिक जाति-पाँति का चित्र-सा है। धनी, कारवाले इसके एक भाग में जाते हैं, दफ्तरों में काम करने वाले दूसरी तरफ, छोटे-बड़े वेतन वाले एक भाग में। यूनिवर्सिटी के सामने का समुद्र-तट किसी भाग में भी नहीं आता है, इसलिए प्रायः सुनसान रहता है। सड़क के पास दो-चार घने पेड़ों का झुंमुट है। बाद में एक छोटा-सा गोल सीमेण्ट का चबूतरा है, फिर रेती, रेती के बाद विशाल नीला समुद्र।

श्रीमती रमा चौधरी और चेट्टियार टहलते-टहलते पेड़ों के नीचे चले गए। चेट्टियार श्रीमती रमा को बहुत दिनों से जानते थे, पर न उनमें अब्राहम की हिम्मत थी, न मुदलियार की ‘शिष्टता’ ही। वे भौंपे हुए-से उनके साथ फिरते। रमा चौधरी का परिचय वे अपनी प्रतिष्ठा का एक अंग समझते थे। पर ज्यों-ज्यों उनका परिचय बढ़ता जाता था, उनके विचार भी बदलते जाते थे। वे ऐसे प्रशंसक थे जो ‘प्रेमी’ में बदलते जा रहे थे।

“सुना है आजकल मुदलियार की हालत अच्छी नहीं है। बाप-दादाओं की सम्पत्ति खराब कर रहा है। घर वालों के गहने भी बिक रहे हैं।”

“क्यों ?”

“सुनते हैं ऐश ज्यादा हो गए हैं । बंगलौर और मद्रास के बीच चक्कर लगाते फिरते हैं । पहले बड़ा सीधा-सादा था, अब पूरा सियार बना हुआ है ।”

“वे बंगलौर क्यों जाते हैं ?”

“आप बुरा न मानें तो कहूँ ? मुझे यह भी नहीं मालूम कि कहना चाहिए कि नहीं, पर आप पढ़ी-लिखी हैं । मैं न बताऊँगा तो कोई और बता देगा । वह कहता फिरता है कि आपसे मिलने गया था ।”

हो सकता है, चेट्टियार में भी ‘प्रेमी’ की सहज ईर्ष्या उपजने लगी हो । रमा चौधरी को एकान्त में पा उन्हें यह शायद कहने की हिम्मत भी हो गई हो ।

“सरासर भूठ है ! यह मुझे बदनाम करता फिरता है । मुझे बंगलौर गये अर्सा हो गया । मुझे मालूम है वह कहाँ जाता है, एक दिन सारी दुनिया जान जायगी उसकी करतूत ।”

“मैंने यह लोगों से कहा ।”

श्रीमती रमा थोड़ी देर के लिए तिलमिला उठीं, फिर संभल गईं । होंठ चपटे कर मुँह नीचा किये मुस्कराने लगीं । अब मुदलियार से उनको काम जो आ पड़ा था ।

“कहने की जरूरत ही क्या है ? आखिर ये बगुले भगत कब तक छिपे रहेंगे ? वक्त क्या हुआ है ? अब तक उन्हें आ जाना चाहिए था ।”

“आते ही होंगे,” दोनों चुपचाप रेती से समुद्र-तट पर चले गए । वे मुदलियार की प्रतीक्षा करने लगे ।

थोड़ी देर बाद मुदलियार मुस्कराते-मुस्कराते आये और श्रीमती रमा के बगल में बैठ गए । क्षण-भर पहले की झुंझलाहट अब श्रीमती रमा के मुँह पर न थी । वे प्रसन्नता का अभिनय कर रही थीं ।

“आजकल तुम दूज काँ चाँद हो रही हो,” मुदलियार ने कहा ।

“जान गई कि तुम्हें मुहावरा आता है,” श्रीमती रमा खिलखिलाकर हँसने लगीं ।

“पर तुम भी तो नहीं दिखाई देते, सुना है बंगलौर ही रहते हो ।”

“लोगों का क्या कहना ? जिसके दिल में जो आया कह दिया । मैं मद्रास में ही था । काम ज़रा ज्यादा था ।” मुदलियार कहते जाते थे, पर श्रीमती रमा ने और नज़दीक आकर कहा, “इतना भी क्या काम कि हमसे मिलने की फुसंत भी न मिली ?”

बातचीत का रुख बदलते हुए श्री मुदलियार ने चेट्टियार से पूछा, “कैसे चल रहा है चुनाव का काम ?”

“चल रहा है । अगर तुम्हारी मदद मिली तो हमेशा के लिए मैं इस इलाके से चुना जाता रहूँगा ।”

“सब तुम पर दारमदार है,” श्रीमती रमा ने कहा ।

“मैं ज़रूर आपकी मदद करूँगा, जो कुछ बन सका । कहिए क्या बात है ?”

“कल तुमने गवर्नर का भाषण तो सुना होगा ही । हमारे बंगले के पास कॉरपोरेशन मछुओं की बस्ती की जगह नये मकान बनवाना चाहती है । कॉरपोरेशन ने, सुना है, कोई योजना बनाई है । मैं इसके बारे में पूरी जानकारी चाहती हूँ । तुम्हारे कई दास्त कौंसिल में हैं । अफसरों में भी तुम्हारी पूछ है । हमें जानकारी दिलवा दो ।”

“यह ऐसी खास बड़ी बात नहीं है । यह तो फोन पर भी मालूम की जा सकती है ।”

“मालूम तो कर सकती हूँ, पर मुझे डर है कि वे सही जानकारी देंगे कि नहीं ।”

श्रीमती रमा ऐसे मुस्कराई, जैसे झूठ बोलने का सफल अभिनय कर लिया हो ।

“मैं कल ही आपको दिलवा दूँगा,” मुदलियार ने कहा ।

श्रीमती रमा ने योजना के बारे में अपने विचार मुदलियार के

सामने रखे ।

वे तीनों बहुत देर तक वहीं बैठे रहे, समुद्र के गर्भ से चन्द्रमा का उदय देखते रहे । एक-एक इञ्च करके वह शान से निकल रहा था । तारे निकल चुके थे । रमा चौधरी सन्तुष्ट थीं । काम भले ही पूरा न हुआ हो, पर काम होने की आशा उनमें जग गई थी ।

वापस जाते समय श्री चेट्टियार ने श्रीमती रमा को माउण्ट रोड पर छोड़ दिया । वे वहाँ से टैक्सी में घर चली गईं ।

: ६ :

चाँदनी थी । राव और चौधरी खुली कार में सैर करने निकल गए । माउण्ट रोड पर चले जाते थे । जब गिण्डी पहुँचे तो हवाई जहाज़ के अड्डे पर जाने की मर्जी हुई । काम था नहीं । घर वापस जाने की जल्दी भी न थी ।

हवाई अड्डे के रेस्तराँ में सेण्डविच वगैरह खाए । हवाई जहाज़ों के आने-जाने का समय न था, इसलिए रेस्तराँ खाली था । राव और चौधरी के सिवाय एक-दो वायुयान-चालक थकान दूर कर रहे थे ।

श्री राव ने खिड़की से बाहर विशाल मैदान की ओर देखते हुए कहा, “आज चाँदनी ग़ज़ब ढा रही है, देखो तो !”

“सचमुच चाँदनी खूब छिटक रही है,” चौधरी जी ने कहा ।

“हम लोगों की शहर की ज़िन्दगी भी क्या है, दिन-रात का वही चक्कर ! दिन दफ़्तर में कट जाता है, शाम क्लब में—वही जगह, वही चेहरे, वही बातें, और रात घर में । मनुष्य ने प्रकृति से अपनी इतनी रक्षा की कि प्रकृति की अच्छी चीज़ों से भी उसने मुँह मोड़ लिया ।”

“आज तुम भी कवि बन रहे हो ।”

“कभी-न-कभी तो दिल की आवाज़ सभ्यता के ढेर के नीचे से उठेगी ही । सभ्यता भी क्या है ! हर आदमी दूसरे आदमी की तरह होना चाहता है, अनुकरण करता है । वह अपनी अभिरुचियाँ भूल

जाता है, दूसरों के साथ बहना शुरू कर देता है। हम लोग डरपोक हैं। हम जीना नहीं जानते, नकल करना जानते हैं।”

“शायद नकल करना ही जीना है। बच्चा भी तो बाप की नकल कर बड़ा होता है। इस ज़िन्दगी में जब बहना बड़ा है तो पाँच-दस के साथ ही क्यों न बहा जाय।”

“खैर, जाने दो। अब यह चाँदनी ही देखो। बिजली की रोशनी में गुम-सी हो जाती है। सभ्यता बिजली की रोशनी-सी है जिसमें दिल की बात खोई-खोई-सी फिरती है। अगर हम बाप की ही नकल करते आते तो हम भी वैसे नंग-धड़ंग रहते जैसे लोग आदम के ज़माने में थे। मनुष्य ने व्यक्तिगत रूप से रहने का साहस दिखाया और परिणाम यह हुआ कि सामाजिक उन्नति हुई। अब उन्नति इतनी हो गई है कि आदमी या तो निष्क्रिय हो गया है, नहीं तो साहसहीन। हम नकल से ही तसल्ली कर लेते हैं।”

“लगता है तुम पर भी चाँदनी गुल खेल रही है। देखना कहीं साइकेट्रियस्ट के पास जाने की नौबत न आ जाय।” श्री चौधरी कॉफी पीते जाते थे और श्री राव सिगरेट सुलगाये बाहर चाँदनी निहार रहे थे। वे यद्यपि व्यापारी हो गए थे, पर उनमें पुराना रसिक अब भी कभी-कभी जाग उठता था। वे पुस्तकों के व्यसनी थे। यूरोप के सब मशहूर लेखकों की किताबें उन्होंने पचा रखी थीं। उनकी अभिरुचियाँ भी बहुत परिष्कृत थीं।

शायद यही कारण था कि वे जमींदारों के गुट में खप न पाते थे। ताश, कार और सिनेमा के बारे में घंटों बातें करना उनको बुरा मालूम होता था। उनकी आदतें और दृष्टिकोण ऐसे थे कि वे मामूली आदमियों से भी मिल-जुल न पाते थे। लाचार हो अपने तंग खानदानी दायरे में घूट-घुटकर भँवरें खाते रहते। कभी दिल खोलकर चौधरी साहब से बातें कर लेते। बचपन की दोस्ती थी।

“चाँदनी ही देखना थी तो समुद्र-तट पर चलना चाहिए था,”

श्री चौधरी ने कुछ देर ठहरकर कहा ।

“यह बात कही । पर समुद्र-तट पर इतनी भीड़ रहती है कि आदमी भीड़ देखने लगता है और चाँदनी को भूल जाता है । चलो चलें महाबलिपुरं । पैंतीस मील ही तो है । दो-तीन घंटे में हो आयेंगे ।”

“पर....” चौधरी बोल रहे थे कि राव ने कहा, “पर-वर कुछ नहीं किवाड़ बन्द कर घर में सोने के लिए थोड़े ही चाँदनी खिलती है ! घर फोन कर दो ।”

जब चौधरी साहब ने फोन किया तो उनकी पत्नी घर पर न थीं । उन्होंने अपने नौकरों से कुछ न कहना चाहा ।

“क्या हो गया, अगर एक दिन घर में सोने के लिए वक्त पर न पहुँचे ?” राव बाँह पकड़कर चौधरी साहब को बाहर ले आए और कार में बिठा दिया । राव कार चलाने लगे ।

सड़क सुनसान थी । खुली कार साठ मील की रफ्तार से हवा से बातें करने लगी । देखते-देखते चैंगलपेट आया । वहाँ उन्होंने दो-चार खाने की चीजें खरीदीं और महाबलिपुरं चले गए ।

महाबलिपुरं की मूर्तियाँ चाँदनी में बोलती-सी लगती हैं । नारियल के पेड़ मस्त झूमते हैं । हवा होड़ करती-सी चलती है । छोटी-छोटी पहाड़ियाँ ध्यान-मग्न हो समुद्र का संगीत सुनती-सी मालूम होती हैं । रेती पर भी चाँदी की-सी परत लग जाती है । पुराना इतिहास करवटें लेता-सा लगता है ।

राव और चौधरी सीधे समुद्र के किनारे चले गए । समुद्र फूला न समाता था । फूला-फूला वह ऊपर उठता और निराश हो नीचे झुक जाता । फिर उठता, फिर गिरता प्रयत्न जारी रहता ।

पास का मन्दिर उसे चिढ़ाता-सा लगता, इसलिए वह उसे जोर-जोर से थपेड़े मारता । दृश्य देखते ही बनता था ।

रेती पर बैठते हुए राव ने कहा, “यह दृश्य भला तुम्हें मद्रास में कहीं देखने को मिलेगा ? दूर-दूर तक मकानों का जंगल है । आदमी

भटके-भटके फिरते हैं ।”

“अरे भाई ज़रा सँभलकर, आस-पास यहाँ कोई डॉक्टर भी नहीं है । चाँदनी की तुम्हें बीमारी हो रही है ।” श्री चौधरी ने मुस्कराते हुए कहा ।

“आदमियों में रहते-रहते दिल ऊब जाता है । कभी-कभी मस्त हो इस चाँदनी में लेटना भी अच्छा है । घबराओ मत, डॉक्टर की ज़रूरत ही न होगी ।”

राव वहीं रेती पर लेट गए और चौधरी साहब रेती पर टहलने निकल गए । वे घबराये हुए लगते थे । वे यद्यपि स्वतन्त्र खयालात के आदमी थे, पर न जाने क्यों बिना सूचना दिये वे घर से कभी बाहर निकलना न चाहते थे । जब कभी जाते तो भी उनका मन घर पर ही रहता । वे अपनी श्रीमती से इन चीज़ों के बारे में लड़ाई-भगड़ा न चाहते थे ।

चौधरी साहब ने राव के मजे में दखल न देना चाहा । मुश्किल से उन्हें कभी एकान्त मिलता था । मनचाहा साथी कोई मद्रास में था नहीं और शिष्टता के नाते ऐरा-गैरा, नत्थू-खैरा सबसे बातचीत करनी पड़ती थी । इसलिए जब कभी उन्हें एकान्त मिलता तो आराम से लेट जाते ।

चौधरी साहब के लिए अंधियारी और चाँदनी लगभग सब बराबर थीं । वे रसिक प्रकृति के थे, पर न जाने उनके पारिवारिक जीवन ने उन्हें क्यों पंगु बना दिया था । वे सिवाय अपने घर और घरबार के आजकल कुछ न सोच पाते थे ।

घर पर माँ-बाप से यह कहकर आये थे कि पत्नी को साथ ले आएँगे, उन्हें गाँव में रखेंगे । पिताजी ने साफ कह दिया था, “तुम्हारी पत्नी तुमसे प्रेम नहीं करती है, अगर करती है तो तुम्हारे साथ गाँव में रहने के लिए क्यों नहीं आती ?” तब श्री चौधरी ने कहा था, “मेरी पत्नी भी मुझसे उतना ही प्रेम करती है जितना कि और पढ़ी-लिखी औरतें अपने पतियों से करती हैं ।” पिता ने चुनौती की आवाज़ में

कहा था, “करता है तो बुला लाओ।”

चौधरी साहब आये, पत्नी को अपने ढंग से समझाया, पर पत्नी ने गाँव जाने के लिए इच्छा न प्रकट की। अब बिना पत्नी को साथ लिये वे घर कैसे जायें ? घर जाये बगैर गुजारा कैसे हो ?

जब कभी वे अकेले होते तो उनके सामने यही समस्याएँ रह-रह-
।। तीं, उन्हें सतातीं ।

उन्हें समुद्र कराहता-सा लगता। न चाँदनी ही भाती थी, उन्हें तड़पाती-सी लगती। वे अपनी समस्याओं में उलझे हुए रेती पर चहल-कदमी करते जाते थे। क्या किया जाय ? वे सोच रहे थे। कहीं नौकरी क्यों न की जाय ? पर जिस शहर में एक रईस की तरह रहे हों वहाँ कैसे एक तुलबगार होकर दर-दर भटकें ? नौकरी के लिए उनके पास डिग्री भी तो नहीं है। कोई और शहर क्यों न जाया जाय ? जब अपने शहर में, जहाँ पाँच-दस आदमियों से जान-पहचान है, कुछ न बन पाया तो भला पराये शहर में कौन पूछेगा ? व्यापार ? एक बार करके देखा और हाथ जला बैठे। फिर पूँजी चाहिए। पूँजी कहाँ से लाई जाय ? बिना कुछ गिरवी रखे अब उधार मिलना भी मुश्किल है। पिताजी से किस मुँह से माँगूँ ? कैसे जाऊँ ?

राव से साझा क्यों न कर लूँ ? पर क्या वह तैयार होगा ? अगर वह स्वयं भी तैयार हो जाय तो क्या उसका परिवार उसका साथ देगा ? फिर बिना पूँजी के साझा कैसे ? क्या मैं उसके नीचे काम कर सकूँगा ? बचपन का साथ है और नौकरी के हेर-फेर में दोस्ती भी हलाल हो जायगी। नहीं, यह नहीं हो सकता। क्या किया जाय ?

फिर बढ़ता हुआ यह कर्ज ? कर्ज तो बढ़ ही रहा है और कर्ज के साथ-साथ ब्याज भी। कैसे चुकाया जाय ? चुकाये बगैर कैसे रहा जाय ? पिता के पास जाऊँ या पत्नी के लिए मद्रास में ही रहता रहूँ ? पर रहूँ कैसे ? कोई खास आमदनी तो हो। मुमकिन है जो थोड़ा-बहुत पिताजी अब भेज रहे हैं वे भी न भेजें। वे ज़िद्दी आदमी हैं। अच्छी आफत है।

क्या सब छोड़कर भाग जाऊँ ? पार्वतीपुर के जमींदार भी तो कर्ज के मारे घर छोड़कर भाग गए थे । वे तो भाग गए, पर उनका लड़का कर्ज चुकाते-चुकाते कंगाल हो गया । न जाने वाले को फ़ायदा है, न पीछे रहने वालों को ही । भाग जाना कायरता है । रमा का क्या होगा ? पत्नी के भरण-पोषण का भार पति पर है, मुझे कुछ-न-कुछ करना पड़ेगा । पर क्या करूँ ?

चौधरी साहब सिर नीचा किये रेती पर चक्कर काटने लगे । उनके मन में विचारों का उबाल-सा आ रहा था । उन्हें सूझ नहीं रहा था कि क्या करें । उनको अकेलापन नोचने लगा । वे अपने से ही भागने की कोशिश करने लगे । राव की तरफ गये ।

“लगता है तुमने यहीं रात काटने की सोच रखी है ? मालूम है, कितना वक्त हुआ है ?” चौधरी साहब ने राव से पूछा ।

“कितना वक्त हुआ है ?”

“बारह बज चुके हैं ।”

“अरे फेंको घड़ी इस समुद्र में । कल छुट्टी है । एक रात घर न सोये तो क्या हा गया ?”

“तुम्हारा तो कुछ न होगा, पर घर वाले परेशान हो जायेंगे ।”

“यार तुम घरवाला से डरते लगते हो ।”

“भला घरवाली से कौन नहीं डरता ? दुनिया न डरने का सिर्फ ढोंग करती है । डर-वर तो क्या, आखिर हमें औरतों का भी तो खयाल रखना चाहिए ।”

“खैर, मैं नहीं चाहता कि तुम्हारे घर चिमटे बजें । चलो, चलें ।” राव अपना कोट कन्धे पर रख एक पियक्कड़ की तरह उठे और लड़-खड़ाते हुए कार में जा बैठे ।

दूर तक उन्हीं की कार की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती थी । निःशब्द रात्रि । राव और चौधरी साहब आपस में बातचीत करते जाते थे । इधर-उधर की गप्पें लग रही थीं । कभी राव इस लेखक के बारे में

बातें करते, कभी उस लेखक के बारे में। चौधरी मीन हो सुनते रहते, अथवा कभी-कभी कोई प्रश्न पूछ बैठते।

जब राब ने अपनी बात बन्द की तो चौधरी साहब ने पूछा, “यार, तुम्हें सरकार की तरफ से जमींदारी का हरजाना मिल रहा है कि नहीं?”

“मिल रहा है, पर बहुत लम्बी-चौड़ी चिट्ठी-पत्री के बाद। कड़्यों को तो वह भी नहीं मिल रहा है। दुनिया-भर की मुकदमेवाजी चल रही है। तुम्हें मिल रहा है कि नहीं?”

“मालूम नहीं। वह काम पिताजी देख लेते हैं। पर अब दिन बदल गए हैं। पहले जैसी बेफिक्री नहीं है।”

“सुनते हैं, तुम्हें पैसे की तंगी रहती है?”

“क्या लोग कानाफूसी करने लगे हैं?”

“करते ही हैं।”

“हूँ-हूँ, क्या लोग कानाफूसी करते हैं?” हैरानी में श्री चौधरी ने पूछा।

“हाँ-हाँ।”

श्री चौधरी चुप बैठ गए। कार चैंगलपेट की सड़क से गुजर रही थी। सारा शहर सो रहा था। चाँदनी की वजह से शहर की बत्तियाँ बुझा दी गई थीं। सड़क के दोनों ओर भिखमंगे, गाड़ी वाले, रिक्शा-वाले सोये पड़े थे। राब ने कार धीमी कर दी। कार के शोर से वे बेचारे कहीं उठ न जायें।

जब चैंगलपेट पार कर कार चली तो चौधरी साहब ने कहा, “सोच रहा हूँ कि व्यापार कलूँ।”

“आजकल व्यापार भी ठप्प है। खर्च अधिक है और फायदा कम।”

“हूँ...” चौधरी साहब ठुड्डी पर अंगुलियाँ रखकर सोचते रहे।

“आजकल अवलमन्दी इसीमें है कि जो कुछ भगवान् ने दे रखा है उसीमें आराम से गुज़ारा चलाते रहो,” राब ने सुझाया।

“पर पुरानी आदतें आसानी से थोड़ी ही छूटती हैं ?”

“मजबूरी है। तुम्हारी पत्नी ने फिर पार्टियाँ देनी शुरू कर दी हैं। फालतू, बेकार का खर्च है।”

“पुरानी आदत है।”

“यार अब तो सँभल जाओ। पत्नी पर नज़र रखा करो। क्लब में लोग अनाप-शनाप बकते रहते हैं। मुझे सामाजिक कार्य का ढोंग-ढको-सला बिलकुल नहीं भाता। बहाना है। खैर, यह तुम्हारी निजी बात है। माफ करना।”

“कोई बात नहीं.....क्लब में लोग क्या कह रहे हैं ?”

“क्या सुनाऊँ ? सुनकर करोगे भी क्या ? जाने दो। इस चाँदनी में क्यों पूछते हो ? क्या और कोई बात नहीं है ?”

राव ने कई बार नई-नई बातें छेड़ीं, पर चौधरी साहब चुप थे। मूँछें ऐंठते हुए बैठे रहे। वे अन्दर-ही-अन्दर आग हो रहे थे। क्या कहते ? उनकी हालत ठीक वैसी ही थी—शायद और बिगड़ी हुई, जैसे कि उस दिन थी, जब वे घर वापस आये थे।

एक बजे के करीब घर पहुँचे। घर में रोशनी न थी। नौकर सब सो चुके थे। चार्ल्स आँखें मलता हुआ उठा, पर इससे पहले कि वह कुछ कह सके, श्री चौधरी अपने कमरे में चले गए।

: १० :

जब रमा चौधरी घर से निकलीं तो श्री चौधरी अपने कमरे में सो रहे थे। वक्त नौ का होगा। जब कभी श्रीमती रमा और उनके पति में कोई खटपट हो जाती तो वे अपने अलग-अलग कमरे में सोते थे।

टैक्सी में श्रीमती रमा मुदलियार से मिलने के लिए क्लब चली गईं। वे उनके घर नहीं जाती थीं। कभी काम पड़ता तो फोन पर ही बातचीत कर लेती थीं।

मुदलियार ने रात में अपने दोस्तों से बातचीत कर ली थी। आव-

इयक जानकारी के साथ वे क्लब में श्रीमती रमा चौधरी की प्रतीक्षा कर रहे थे ।

श्रीमती रमा चिन्तित-सी मालूम होती थीं । क्लब में वे अक्सर मुस्कराती हुई घुसती थीं । पर आज उनके चेहरे पर न मुस्कराहट थी, न रौनक ही ।

श्री मुदलियार अलग कमरे में श्रीमती रमा चौधरी से बातचीत करने लगे । उनके सामने टेबल पर सिगरेट के डिब्बे और आर्रैञ्ज ज्यूस के गिलास रखे हुए थे ।

“क्यों, क्या मालूम हुआ ?” श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा ।

“यह सच है कि कॉरपोरेशन ने तुम्हारे... (श्री मुदलियार एकान्त में अक्सर रमा चौधरी को ‘तुम’ कहकर ही सम्बोधित करते थे) बंगले के पास मछुओं के लिए मकान बनाने की योजना तैयार कर रखी है । वह थोड़े ही दिनों में कमेटी के पास भेजी जायगी ।”

“फिर तुम किसी कमेटी वाले से मिले कि नहीं ?”

“यह कभी हो सकता है कि तुम एक काम कहो और मैं न करूँ ?” मुदलियार ने अपनी कुर्सी नज़दीक खींच ली ।

“क्या हुआ ?”

“कमेटी से बाहर न जा पायेगी यह योजना । कड़ी नुक्ताचीनी की जायगी । अगर गई भी तो जाने में सालों लग जायेंगे और तब तक दुनिया में कुछ-का-कुछ हो जायगा । कौन जाने कि तुम उस बंगले में रहोगी कि नहीं,” श्रीमती रमा को भौंहें सिकोड़ते देख, “हो सकता है किसी और अच्छी जगह पर और अच्छा बंगला बनवा लो ।”

मुदलियार श्रीमती रमा चौधरी की असली हालत जानते थे, कभी-कभी ताना भी मार लेते थे ।

“यानी तुम्हारा मतलब है कि फ़िलहाल कुछ नहीं होगा ?” श्रीमती रमा चौधरी ने निश्चिन्त होकर पूछा ।

“होने नहीं दिया जायगा, सब अपने ही आदमी हैं । तुम फ़ालतू

अपना दिमाग खराब कर रही हो ।”

“अच्छा.....और सुनाओ क्या हाल-चाल है ? कमला से मिलते-जुलते हो कि नहीं ?”

“तुमसे क्या छिपाया जाय, जब कभी बंगलौर जाता हूँ तो देख ही आता हूँ ।” वही मुदलियार जो पहले बहुत शर्मीले और डरपोक थे, अब बेधड़क अपनी निजी बातें कह दिया करते थे । वे श्रीमती रमा चौधरी को पहचान गए थे । अगर वे उनकी कमजोरी को जानती थीं तो वे भी उनका भण्डाफोड़ कर सकते थे । उनके साहस का यही कारण था ।

“सुना है, आजकल तुम बंगलौर खूब जाने लगे हो ?”

“हूँ, क्या किया जाय ? जब तुम्हारी कृपादृष्टि हम पर न हो ।” मुदलियार ने अपना कुर्सी और नज़दीक कर ली ।

“दूर ही रहो, अकेली समझकर छेड़-छाड़ करना चाहते हो ?” श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए कहा ।

“छेड़-छाड़ की क्या बात है ? तुम कोई अजनबी थोड़े ही हो ? तुम भी क्या छेड़-छाड़ मानती हो ?”

रमा चौधरी मुस्कराती जाती थीं । मुदलियार उनके हाथ मलते जाते थे । थोड़ी देर वे एक-दूसरे को देखते हुए बैठे रहे ।

“तुम्हें हो क्या गया है ? पिये तो नहीं हो ? दिन को भी रात समझ रहे हो ?”

“रात-दिन का फर्क तो उनके लिए है, जो दिन में मेहनत करते हों और रात को आराम करते हों । जो चौबीस घंटे ही आराम करें उनके लिए सूरज-चाँद सब बराबर हैं ।”

“अक्ल ज्यादा हो गई है । दलीलें बाद में देना, अभी मुझे काम है । जाना है ।”

“काम मैंने कर ही दिया है, काहे को जाती हो ?”

“क्या इरादा है तुम्हारा ? जानते हो यह क्लब है, पाँच-दस आदमी हमेशा रहते हैं ।” श्रीमती रमा चौधरी उठीं और क्लब के बड़े हॉल में

जाकर बैठ गईं । मुदलियार कमरे में इधर-उधर ताकते रहे ।

थोड़ी देर बाद टैक्सी में श्रीमती रमा चौधरी श्री डगन के होटल में चली गईं, पर डगन वहाँ नहीं थे । थोड़ी देर इन्तज़ार किया, पर उनके न आने पर वे माउण्ट रोड पर टहलने लगीं । दो-चार किताबें खरीदीं । फिर एक दुकान से रंग-बिरंगी मछलियों का पानी भरा बक्सा घर भिजवाने के लिए कहा । कपड़े की दुकान में काफी वक्त काटा ।

जब वे श्री डगन के होटल में फिर गईं तो एक बज चुका था और श्री डगन अपने कमरे में उपस्थित थे ।

श्रीमती रमा चौधरी ने श्री डगन के साथ ही भोजन किया । श्री डगन के साथ भोजन करना उनके लिए आदत-सी हो गई थी । दोनों की घनिष्ठता बहुत दूर पहुँच चुकी थी ।

“ऐसा लग रहा है कि मैं हिन्दुस्तान छोड़कर चला जाऊँ,” डगन ने कहा ।

“क्यों ?”

“अब न पैसे की पूछ है, न किसी और चीज़ की । पूछ है तो बस इन गांधी टोपी वालों की, जिनको न तालीम है न तहज़ीब है । अभी मैं एक मन्त्री से मिलने गया । वह ऐसे नाक-भौं चढ़ा रहे थे जैसे हमें वक्त देकर बड़ी मेहरबानी की हो । व्यापार का काम था, नहीं तो उनका मुँह भी न देखता ।”

“सचमुच, भारत में रहना अब मुश्किल हो रहा है । मैं खुद जानती हूँ कि कई बंगलौर के एंग्लो-इण्डियन परिवार आस्ट्रेलिया और अफ्रीका में बसने चले गए हैं । ईसाइयों की बुरी हालत है । पारसी न जाने क्या सोचते होंगे ?”

“हम लोग भी यहूदियों की तरह हैं, हमारा कोई देश नहीं है । जहाँ हमारा व्यापार है, वहीं हमारा देश है ।”

“कहाँ जाने का इरादा है ?”

“ब्राज़ील, हमारा वहाँ भी कॉफ़ी का व्यापार है । हिन्दुस्तान से

मन ऊब गया है।”

“अकेले जाओगे क्या, हमें छोड़कर ?”

“तुम भी आना चाहती हो, आ जाना।”

“फिर आपकी श्रीमती जी.....”

“उनको हमारी ज़रूरत ही नहीं.....वे अपने ‘सामाजिक कार्य’ में मशगूल हैं। दिन-रात की चख-चख मुझे पसन्द नहीं है। मर्जी होती है कि कहीं जाकर फिर से अपनी जिन्दगी शुरू करूँ।”

“आप यह क्या कह रहे हैं ?”

“दिन-रात का शक। औरतें भी खूब हैं। इनके साथ रहना मुश्किल, इनके बगैर रहना और भी मुश्किल।”

श्रीमती रमा चौधरी ठहाका मारकर हँसीं। श्री डगन भी थोड़ी देर चुप रहे।

“आखिर कब जाने का इरादा है ?”

“अभी कुछ नहीं सोचा है। पर यह साफ़ है कि मैं ज्यादा दिन हिन्दुस्तान में न रहूँगा। अंग्रेज चले गए और हमारे होटलों में आने-जाने वाले भी कम हो गए। व्यापार नहीं चल रहा है और इन होटलों में हम दाल-चावल नहीं बेच सकते हैं। इन नंग-घड़ंग आदमियों को होटल में रहने देने से अच्छा है कि होटल के दरवाजे ही बन्द कर दूँ। इतना बड़ा होटल भला खरीदेगा कौन ? खरीदार भी नहीं मिल रहे हैं। जाना ही होगा।”

“जाते वक्त हमें न भूल जाना।”

“गनीमत होगी, अगर तुम हमें न भूलो। जब तक पैसा है.....”

“आपका क्या इशारा है ? मैं नहीं जानती थी कि आप मुझे इतनी नीची समझते हैं। आपने मुझे समझ क्या रखा है ?” श्रीमती रमा लाल-पीली होने लगीं।

श्री डगन समझाने लगे, “मैं यों ही कह रहा था और तुम बुरा मान गईं। तुम इतनी छुई-मुई कब से हो गई हो ?”

“खैर जाने दो,” श्रीमती रमा चौधरी फिर मुस्कराने लगीं । थोड़ी देर वे बैठे-बैठे इधर-उधर की गप्पें मारते रहे, पर श्री डगन को अन्य-मनस्क और व्यस्त देख श्रीमती रमा चौधरी घर आराम करने चली गईं ।

घर में श्री चौधरी न थे । वे खा-पीकर कहीं बाहर चले गए थे । शायद श्रीमती रमा चौधरी को न मालूम था कि श्री चौधरी उन्हीं का पीछा कर रहे थे । वे इस समय क्लब में थे । वे क्लब में यह न जान पाए थे कि रमा कहाँ गई थीं । किसीसे पूछ भी न पाते थे कि पत्नी-कहाँ गई थीं । जब तक कुछ सबूत न मिल जाय, वे पत्नी से निपट भी न सकते थे । एकान्त उनको काटता था, इसलिए उन्होंने घर वापस न जाना चाहा । क्लब में ही दोस्तों से बातचीत करते-करते वक्त काटने लगे ।

क्लब के कई सदस्यों को चौधरी को उस वक्त वहाँ देखकर आश्चर्य हुआ । उनको दुपहरी में वहाँ पाकर तरह-तरह की कानाफूसी होने लगी ।

अब्राहम का घर उत्तरी मद्रास में था । वहीं मिल, कल-कारखाने वगैरह हैं । आसपास मिल-मजदूरों का मुहल्ला है । शहर के रईस, धनी-मानी अक्सर या तो मध्य मद्रास में रहते हैं अथवा दक्षिणी मद्रास में ।

उनका घर बड़ा न था । चारों ओर बगीचा भी न था । रेल की पटरी समीप थी । दिन-रात कुछ-न-कुछ शोर-शराबा रहता । अब्राहम के कई मकान थे, पर उनके मनपसन्द का कोई न था । लाचार उसी घर में रहते थे ।

शाम का समय था । उनके डिप्टी कमिश्नर भाई घर में चाय के लिए आ गए थे । वे रमा चौधरी के इन्तज़ार में थे ।

“क्या सच है कि तुम इस चौधरी के बंगले के पास मछुओं के लिए पक्के घर बनवा रहे हो ?” अब्राहम ने पूछा ।

“एक योजना जरूर थी, पर इसमें शक है कि कभी वह कार्यान्वित होगी कि नहीं। योजनाओं के क्या कहने? कॉरपोरेशन में उनका हमेशा ढेर-का-ढेर लगा रहता है।” उनके भाई ने कहा।

“हूँ.....पर हमारी एक सुनो। यह जुम रमा से न कहना। ज़मीन-आसमान एक कर रही है कि योजना कार्यान्वित न हो। यह बात नहीं कि उसको बंगले से खास प्यार है—यह भी हो सकता है कि हो, पर मछुओं की सेवा के ढोंग से उसने समाज में कुछ नाम कमा रखा है। वह नहीं चाहती कि इसलिए वहाँ से मछुए उठाए जायें।” अब्राहम कह रहे थे।

“यह औरत भी खूब है !”

“ऐसी औरतें अक्सर होती नहीं हैं, जो बिरली होती हैं वे पहुँचे हुए आदमियों को भी मात कर देती हैं। अगर हमने यह कहा कि योजना के अमल में आने की कोई सम्भावना नहीं है, वह निश्चिन्त होकर बैठ जायगी। अगर कहा कि अमल में लाई जायगी तो वह दौड़-धूप करती रहेगी। पर उसका नाम इस सम्बन्ध में बाहर हुआ कि नहीं, वह बुरी तरह बदनाम हो जायगी, मछुए भी उसका मुँह न देखेंगे, छिप-छिपकर काम करेगी। कामयाबी और नाकामयाबी का सवाल ही नहीं उठता। इसलिए मैं चाहता हूँ कि तुम उससे कहो कि योजना शीघ्र ही कार्यान्वित होगी। दफ्तर में भी यही कहला देना। वह घबरा उठेगी और कहीं चली जायगी।”

“पर इससे हमारा क्या फायदा ?”

“तुम देख ही रहे हो मेरा मकान। साथी दोस्तों से दूर पड़ा रहता हूँ। मैं समुद्र-तट पर एक मकान चाहता हूँ। रमा का मकान तो तुमने देखा है। बहुत बढ़िया है। मेरी नज़र उस पर है। जहाँ इसने खाली किया कि मैं उसे खरीद लेना चाहता हूँ !”

“ओह, यह बात है !”

“यों तो अब उसके पास पैसे नहीं हैं, पिछले दिनों फर्नीचर भी

बेच दिया था। पर औरत है बहुत चालाक, जैसे-तैसे पैसे बना ही लेती है। दो-चार को पकड़ रखा है। डगन भी पंजे में है। चौधरी बरबाद हो चुका है। पर किसी-न-किसी दिन आँखें खोलेगा ही। ऐसी बातें छिपती कब तक हैं? बोरिया-बिस्तर बाँधकर गाँव चले जायेंगे।”

“इन पर कॉरपोरेशन का भी बहुत बकाया है।”

“कॉरपोरेशन तो क्या, सब जगह उधार कर रखा है। पर औरत जिद्दी है, एकदम लोमड़ी। कहीं-न-कहीं रास्ता निकाल ही लेगी। अब वक्त हो गया है। आती ही होगी। कहना कि मैंने तुमसे कहा था कि योजना कार्यान्वित न करो।” अब्राहम ने कहा। उन्होंने इन्हीं कामों में बाल पकाए थे। लाखों रुपया कमाया था।

श्रीमती रमा चौधरी ठीक समय पर अब्राहम के बंगले पर टैक्सी में आईं। वह खूब सजी-धजी थीं। पाउडर भी खूब पोत रखा था। गालों पर ‘जवानी’ की लाली थी।

अब्राहम ने भाई का परिचय कराया। रमा चौधरी से उन्होंने कहा, “मैंने इससे बहुत कहा कि योजना को कूड़ा-कर्कट में डाल दे, पर यह नहीं सुन रहा है। अगर मेरा भाई है तो वह कॉरपोरेशन का कर्मचारी भी तो है। लाचारी है। तुम्हीं बातचीत कर लो। क्लब चल रही हो न? मैं अभी कपड़े बदलकर आया। साथ चले चलेंगे।”

“आपसे मिलकर बड़ी खुशी हुई। बहुत दिनों से सोच रही थी कि मिलूँ, पर मौका ही न मिला।” श्रीमती रमा चौधरी ने डिप्टी कमिश्नर से कहा।

“मुझे भी बड़ी खुशी हुई आपसे मिलकर,” डिप्टी कमिश्नर ने शिष्टता का अभिनय किया।

“अब अब्राहम ने यह बात छेड़ दी है, वरना मैं कभी आपसे यह बात न करती।”

“योजना कार्यान्वित होकर रहेगी। सरकार जोर दे रही है। अब गवर्नर साहब भी दिलचस्पी ले रहे हैं।”

“क्या इस योजना को रद्दी करने की कोई गुञ्जाइश नहीं है ?”

“मैंने बहुत सोचा कि इसको रद्द करवा दूँ.....पर आप जानती ही हैं, जब सरकार निश्चय कर लेती है तो उसका निश्चय बदलना मुश्किल है।”

“पर मुझे कई मित्र बताते हैं, उनमें कई कौंसिल में भी हैं कि यह योजना कार्यान्वित ही नहीं होगी।”

“उनको शायद ठीक मालूम नहीं है। क्या वे यह कह सकते हैं कि मछुओं के लिए मकान न बनें ? बदनाम हो जायेंगे। लोग बिगड़ उठेंगे, एक वोट नहीं मिलेगा। तिकड़मबाजी से काम न चलेगा।”

“ऐसी बात है !” श्रीमती रमा चौधरी ने आश्चर्य प्रकट किया।

“अब अच्छा यही है कि आप अपना बंगला बेच दें और कहीं अच्छी जगह ढूँढ़ लें। भोंपड़ियों में रहने वाले मछुए फिर भी अच्छे हैं। दिन-रात बाहर रहते हैं, रात को सो जाते हैं...नाम इनका है पर रहेंगे क्लर्क ही। उनके शोर-शराबे से आप दुखी हो जायेंगे।”

“तो आप भी यह मानते हैं कि इन मकानों में क्लर्क ही रहेंगे ?”

“हाँ-हाँ, बेचारे मछुए किराया कहाँ से देंगे ?”

“तो यानी बात पक्की है।” श्रीमती रमा चौधरी ने कहा। उनका मन खोल रहा था। वे इधर-उधर देखती रहीं—चुप, व्याकुल-सी। इतने में अब्राहम आ गए। वे उनके साथ क्लब चली गईं।

उनके पति भी क्लब में थे। श्रीमती रमा चौधरी को देखते ही वे भी उनके पास आकर बैठ गए। दोनों में ज्यादा बातचीत न हुई। कभी कुछ एक-दूसरे से पूछते और शान्त हो जाते। दोनों को कोई चीज़ जकड़े हुए थी—शायद शिष्टता।

: ११ :

चौधरी साहब का बंगला भरा हुआ था। वे कमरे, जिनमें महीनों से धूल जमा हो रही थी, साफ करवाकर खोल दिये गए थे। शान्त बंगले

में शोर होने लगा था। श्रीमती रमा चौधरी के पिता सपरिवार पहुँच गए थे। जेम्स भी उनके साथ आया था। उसका दीवानापन अब भी पहले की तरह था और न जाने क्यों, जीवन में तरक्की के साथ, श्रीमती रमा चौधरी के लिए उसका पागलपन बढ़ता जाता था।

उसने श्रीमती रमा चौधरी से किसी-न-किसी बहाने बातचीत करनी चाही, पर वे टालती गईं और वह बेचारा उनको देखकर ही निहाल हो रहा था। बैठक में जब वे बैठी हुई थीं, वह वहाँ पहुँच गया।

“कहो शरीन, क्या हाल-चाल है ?”

“तुम भी मौका ढूँढ़कर चले आए ?”

“तुम्हें देखे बग़ैर कैसे रहूँ ?”

“क्या बेहूदी बातें कर रहे हो ? चौधरी साहब के आने का वक्त हो गया है। जाओ, बाद में कभी मिलना।”

रमा चौधरी के जीवन में यह एक साधारण क्षण था, पर जेम्स की जिन्दगी में यह एक स्मरणीय घटना थी, जिसकी याद करते-करते वह वियोग की तीखी रातों मस्ती में काट देगा।

श्रीमती रमा चौधरी अपने पति के कमरे में गईं। शाम का समय था। चौधरी साहब कोई पुस्तक पढ़कर अपना ध्यान बटाने की कोशिश कर रहे थे। वे झुँझलाये हुए थे। उन्हें रमा चौधरी के पिता का आना पसन्द न था और बिना उनकी इजाज़त के आना तो कतई नापसन्द था।

चौधरी साहब की कुर्सी के पास एक तिपाई घसीटकर श्रीमती रमा चौधरी बैठ गईं। वे मुस्करा रही थीं। मन की भावनाओं को छिपाने में श्रीमती रमा चौधरी दक्ष थीं। जब गुस्सा आता वे हँसतीं, जब हँसने को जी चाहता वे मौका देखकर आँखों में आँसू लातीं। उनका जीवन एक अभिनय था, सभ्यता एक ओढ़नी-सी थी, जिसके पीछे वे असलियत को कामयाबी से छिपा लेती थीं।

मन की बात चौधरी साहब के मुँह पर भी अंकित न होती थी। उनमें एक प्रकार का संयम था, भलमनसाहत थी। वे न चाहते थे कि

किसीको उनकी हालत मालूम हो या उनकी किसी हरकत से किसीको चोट पहुँचे ।

“क्यों मुँह सुजाए बैठे हो ?” श्रीमती रमा चौधरी ने चिबूक पकड़कर पूछा ।

“तुम्हारे पिताजी यहाँ क्यों आये हैं ? फिर तुमने मुझे बताया क्यों नहीं कि वे आ रहे हैं ?”

“क्या मेरे पिताजी का मेरे घर में आना गुनाह है ?”

“शायद हाँ,.....बिना मुझे सूचना दिये ।”

“क्या आपके पिताजी मुझे सूचना देकर ही कुछ दिन पहले यहाँ आये थे ? फिर आपको मेरे पिताजी से चिढ़ क्या है ? आखिर आपका उन्होंने बिगाड़ा क्या है ?”

“तुम सब-कुछ जानकर भी यों पूछ रही हो ? मैं सोच रहा था कि तुमसे कुछ न कहूँ, तुम खुद ही आँख खोलकर देखोगी, पर तुम्हें कुछ न दीखा ।”

“आपका मतलब ?”

“यहाँ अपना गुज़ारा ही मुश्किल से हो रहा है और तुम इधर-उधर के रिश्तेदारों को पालने की सोच रही हो । पाटियाँ फिर शुरू कर दी हैं । लुढ़कते-लुढ़कते आखिर कहीं तो रुकना चाहिए ।”

“तभी आप लुढ़कते जा रहे हैं और अकेले भी नहीं । मुझे सब मालूम है । यह तुम्हें शायद नहीं मालूम कि औरतों की तीसरी आँख भी होती है । मुझे सब मालूम है ।”

“क्या मालूम है ?”

श्रीमती रमा चौधरी झट सँभल गई । वे मीठी-मीठी बातों से काम चला लेना चाहती थीं, पर श्री चौधरी को गरमाते देख वे भी उबल उठीं । स्वभाव ने ‘सभ्यता’ को धर दबोचा । वे काँप रही थीं । उनका अभिनय बिगड़ गया था ।

“तुम्हारा शायद ख़याल है कि मुझे कुछ मालूम नहीं है । मैं सब

जानती हूँ ।” श्रीमती रमा ने कहा । उनकी हमेशा से यह चाल रही है कि रक्षा का आक्रमण ही अच्छा साधन है । इससे पहले कि श्री चौधरी उनकी नुकताचीनी करते, वे ही चौधरी साहब पर अक्सर बरस उठती थीं ।

“क्या मालूम है ?”

“तुम अपने दिल से क्यों नहीं पूछते ?” श्रीमती रमा चौधरी ने अकड़ते हुए पूछा । और कोई दिन होता तो शायद चौधरी साहब दिल मसोसकर बैठ जाते, पर आज दो-चार दिन से वे पत्नी से निपटने के लिए उतारू हो रहे थे ।

“कहो भी ।”

“तुम उस दिन रात को कहाँ गायब रहे ? तुम चाहो तो लड़कियों के साथ महाबलिपुर में गुलछरें उड़ाते रहो और हम अपने माँ-बाप को भी अपने घर नहीं ला सकते !”

“तुमसे किसने कही यह वाहियात बात ?”

“और कौन कहता, आपके राव के किसी दोस्त ने बताया है । खुद राव ने ही, सुनते हैं, उन्हें बताया था । दोस्त समझे बैठे हो और वह दुनिया-भर में तुम्हारी बदनामी करता फिरता है ।”

“चुप रहो रमा ! यह सरासर झूठ है ।”

“झूठ है या सच, यह आपका दिल जानता है, पर दुनिया तो यही सच समझ रही है ।”

“चुप रहो । राव वैसा आदमी नहीं है ।”

“यह तुम जानो । महाबलिपुर से आये और चोर की तरह लुके-छिपे अपने कमरे में चले गए, मेरे कमरे में आते तो क्या मैं तुम्हें काटती ?”

“और कुछ न कहो, बस शान्त रहो । जाओ यहाँ से ।”

“जाती हूँ, यहीं से चली जाऊँगी, बंगलौर जाऊँगी । मैं भी तंग आ गई हूँ ।” श्रीमती रमा चौधरी ने जोर से किवाड़ बन्द किये और तिलमिलाती हुई अपने कमरे में चली गई । उनकी चाल चल गई थी ।

फ़िलहाल श्रीमती रमा चौधरी के विचार कुछ बदल रहे थे। शायद लुढ़कती स्त्री को सहारे की ज़रूरत होती है। उन्होंने जिस-जिस सहारे को पकड़ना चाहा, उसको फिसलनदार, चिकना पाया। अब्राहम उनके हाथ से कभी का निकल चुका था। चेट्टियार और मुदलियार को अब वे शायद अपने योग्य न समझती थीं।

वे यह निश्चय नहीं कर पाई थीं कि श्री डगन के साथ ब्राज़ील जाया जाय कि नहीं। क्या वे ले जायेंगे? क्या वे इस उम्र में सब-कुछ छोड़-छाड़कर उनके साथ जा सकेंगी? क्या एक बड़ा पेड़ एक जगह से उखाड़कर दूसरी जगह गाड़ने से सूख नहीं जाता? उनकी उम्र भी गुज़रती जाती थी। जवानी का चुलबुलापन, आकर्षण-शक्ति, सब धीमे-धीमे चले गए थे। सजावट का पर्दा भी उन पर नहीं फबता था। ये सब बातें श्रीमती रमा चौधरी के मन में चक्कर काट रही थीं।

वे अपने पति को निस्सहाय कर देना चाहती थीं, ताकि वे उनकी ओर झुकें। वे उनको माँ-बाप से दूर कर ही चुकी थीं। अब वे चाहती थीं कि वे अपने मित्र से भी दूर हो जायें। और कोई उनके हाथ में रहे या न रहे, पति को तो लाचारी से रहना ही पड़ता। इससे पहले कि वे कुछ और करतीं, वे पति को और अपने पास कर लेना चाहती थीं। वे स्वयं निस्सहाय न होना चाहती थीं। भले ही दोस्तों की छतरी पति पर से हट जाय, वे अपने लिए हमेशा कोई-न-कोई छतरी रख लेना चाहती थीं।

श्रीमती रमा चौधरी के लिए झूठ बोलना बायें हाथ का खेल था। और कमाल यह कि वे झूठ भी इस ढंग से बोलतीं मानों वे सच बोल रही हों। उन्होंने कोई बात न सुनी थी। दुनिया में शायद किसीको मालूम भी न था कि श्री चौधरी महाबलिपुरं गये थे। राव की यह आदत भी न थी कि किसीके पीछे बुराई करें। वे अच्छे मित्र थे और मित्रता निभांना जानते थे। फिर चौधरी उनके मित्र ही नहीं, सम्बन्धी भी थे।

चौधरी साहब राव से कैसे पूछते ? उनकी पत्नी ने साफ़ कह ही दिया था कि उनको राव से नहीं, परन्तु उनके किसी जान-पहचान वाले से सारी बात मालूम हुई थी । उनको बुरा-भला कहने के लिए न चौधरी साहब को ही, न राव को ही मौका मिलता । उन्होंने सिर्फ़ अफ़वाह की सूचना आरोप के रूप में दी थी और अफ़वाह का स्रोत ढूँढ़ निकाल लेना भगवान् के लिए भी मुश्किल है ।

श्रीमती रमा चौधरी ने जो कुछ कहना था कह दिया, पर इधर श्री चौधरी के मन में अंगारे उड़ने लगे । अन्दर के धुएँ और आग में वे सोच नहीं पा रहे थे कि क्या किया जाय ।

वे राव से पूछें भी कैसे ? राव तुरन्त कह देंगे, “क्या तुमने मुझे इतना कमीना समझ रखा है ?” वे जानते थे कि राव भले आदमी हैं, उनके हित-चिन्तक हैं । उनको ऊटपटांग अफ़वाह उड़ाने से मिलता भी क्या है ? फिर वे खुद भी मेरे साथ थे । अगर मेरी बदनामी होती है उनकी भी होती है । मैं, खैर, शादीशुदा हूँ, वे बाल-बच्चों वाले भी हैं । हो-न-हो, किसी ने बे-सिर-पैर की उड़ा दी है ।

क्या रमा झूठ बोल रही है ? क्या फ़ायदा ? उसको किसीने बताया होगा और उसने विश्वास कर लिया होगा । ये औरतें भी अजीब बला हैं !

वे माथे पर हाथ रखकर सोचते जाते थे । वही बातें रह-रहकर भिन्न-भिन्न रूप में उनके सामने आती जाता थीं । ‘मैं बंगलौर चली जाऊँगी’ टेक की तरह उनके मन में दुहरा रहा था । ये बंगलौर गईं तो एक और आफ़त । न जाने दुनिया क्या सोचेगी ? फिर लोग इधर-उधर की उड़ाने लगेंगे । यहाँ हुआ कुछ नहीं और मुसीबत इतनी बड़ी तैयार हो गई है । खामखाह आफ़त मोल ले ली ।

आदमी औरत से कभी लड़कर जीता है ? औरतें जानती हैं कि कब बेंत बनने में फ़ायदा है और कब लोहे की छड़ी होने में । आखिर पति-पत्नी का ही तो झगड़ा है । अगर रमा बंगलौर चली गईं तो क्लब

वाले समझेंगे कि जरूर अफ़वाह सच है और मुझे बुरा कहेंगे ।

नहीं, रमा को बंगलौर नहीं जाने दूँगा—श्री चौधरी ने निश्चय किया ।

वे नीचे बैठक में चले गए । राव को झट फोन किया । राव सौभाग्यवश घर में थे ।

“अरे यार, सुनते हो, क्या अफ़वाह उड़ रही है ?” श्री चौधरी ने पूछा ।

“क्या ?” राव ने कुतूहल प्रकट किया ।

“कि हम लड़कियों को लेकर महाबलिपुरं गये थे ।”

“मैंने कोई ऐसी अफ़वाह नहीं सुनी । अगर हम गये भी तो इन क्लब वालों का क्या जाता है ? क्या वाहियात अफ़वाह है ! इन लोगों को सिवाय अफ़वाहें उड़ाने के और कोई काम नज़र नहीं आता । ये लोग सबको अपने काले चश्मे से ही देखते हैं । अफ़वाह उड़ाते हैं तो तुम्हारा और हमारा क्या जाता है ? उड़ाने दो ।”

“अरे भाई, यहाँ जा रहा है । श्रीमती जी नाराज़ होकर अपने कमरे में पड़ी हुई हैं । बंगलौर जाने की धमकी दे रही हैं । मैंने बहुत समझाया, पर उनको यकीन ही नहीं होता । आखिर मैंने कहा कि वे तुमसे पूछ ले ।”

“अच्छी बला है !” राव ने कहा ।

“तुम ज़रा उनको फोन कर देना । उनके कमरे में भी कनेक्शन है । अभी कर दी ।” फोन रखकर श्री चौधरी मन-ही-मन मुस्कराने लगे । वे शायद सोच रहे थे कि कैसे ये बेकार लोग बात का बतंगड़ बना रहे थे । वे थोड़ी देर वहीं बैठे रहे । फिर पत्नी के कमरे में ऊपर चले गए ।

श्रीमती रमा चौधरी अपने बिस्तर पर बैठी हुई थीं । अब भी खिजी हुई थीं । “तुम भी अच्छे हो, अब मियाँ-बीबी के भगड़े भी दोस्तों तक पहुँचाने लगे हो ?” श्रीमती रमा चौधरी ने पूछा ।

“अब तुम्हें यकीन हो गया कि लोग भूठ कह रहे हैं। राव ने बता दिया न ?”

“क्या बिना आग के भी कहीं धुआँ उठा है ? तुम दोनों एक ही थैले के चट्टे-बट्टे हो। दोनों में समझौता रहा होगा।”

“यह अन्याय है, मैं कह रहा हूँ कि हम चाँदनी का मज़ा लेने महा-बलिपुरं गये थे। लड़कियाँ हमारे साथ न थीं। मैं सच कह रहा हूँ। तुम मान भी जाओ।” कहते-कहते श्री चौधरी श्रीमती रमा के बिस्तर पर मुस्कराते हुए बैठ गए और उनके कन्धे सहलाने लगे।

“अच्छा हटाओ, खैर।” श्रीमती रमा चौधरी के चेहरे पर मुस्करा-हट दौड़ गई। उनकी आँखों में विजय की एक चमक पैदा हुई।

“अब तो बंगलौर नहीं जाओगी ?”

“नहीं,” श्रीमती रमा ने कहा। उनका तो जाने का पहले भी इरादा न था। वे चौधरी साहब को डराना चाहती थीं। वे अपनी चाल में सफल हो गई थीं। वे अब जान गई थीं कि उनके पति अब भी उन्हीं के हाथ में थे और उनको यह भी मालूम हो गया था कि उनके कुकर्मों के बारे में उनके पति को कुछ भी नहीं मालूम था वरना वे इस भगड़े में ज़रूर कुछ कहते।

श्री चौधरी भी अब निश्चिन्त थे। उन्होंने पत्नी के बाल ठीक करते हुए मज़ाक में कहा, “जाओगी किनके पास ? तुम्हारे माँ-बाप तो यहीं हैं।”

“अगर जाना पड़ जाय तो क्या मैं अपने माँ-बाप को लेकर नहीं जा सकती ? तुम भी तो यही चाहते हो।”

“नहीं तो, जैसी तुम्हारी मर्जी, मुझे अब इनके रहने में कोई एत-राज नहीं है।”

श्रीमती रमा चौधरी पास आकर पति के कुरते के बटन इधर-उधर मरोड़ने लगीं। उन दोनों ने वहीं चाय पी। पिछले दिनों वे इतने समीप इतनी देर तक कभी न पाये गए थे।

मद्रास के हर मुहल्ले की अपनी-अपनी खासियत है। त्रिप्लिकेन यदि वैष्णवों के लिए धार्मिक स्थल है, तो मैलापर शिव-मन्दिर के लिए मशहूर है। साल-भर वहाँ कोई-न-कोई उत्सव होता ही रहता है।

पर आज जो त्योहार हो रहा था, वह कुछ विचित्र था। भीड़-भड़ाके को देखकर मालूम होता था कि कोई उत्सव मनाया जा रहा हो। आज निर्वाचन का दिन था। श्री चेट्टियार की भाग्य-परीक्षा हो रही थी।

जगह-जगह लोगों की टोलियाँ बँधी हुई थीं। पोलिंग स्टेशन के पास खास चहल-पहल थी। मतदाताओं की पंक्ति खड़ी थी। स्त्रियाँ अच्छे-अच्छे कपड़े पहने हुई थीं। सजे बालों पर रंग-बिरंगी साड़ियाँ, हँसते-कूदते बच्चे, ...स्वतन्त्र भारत के चित्र-से लगते थे।

साइकलों पर स्वयंसेवक मतदाताओं को एकत्रित करते हुए इधर-उधर फिर रहे थे। दसियों टैंक्सियाँ श्री चेट्टियार ने लोगों को लिवाने-भेजने के लिए लगा रखी थीं। वे स्वयं कार में बैठकर पोलिंग स्टेशनों का रह-रहकर चक्कर लगा रहे थे।

श्रीमती रमा चौधरी भी दो-तीन स्वयंसेविकाओं के साथ जगह-जगह घूम रही थीं। उनको कार से उतरकर लोगों के पास जाना शायद पसन्द न था। कार में बैठे-बैठे स्वयंसेविकाओं को बुलाकर बातचीत कर लेतीं और चली जातीं।

श्री चेट्टियार का विरोध साम्यवादी अन्नामले पिल्ले कर रहे थे। दीवारों पर उनके पोस्टर अक्सर नहीं देखे गए। उनकी सभाएँ कम हुईं, परन्तु उनके जुलूस रोज़ निकलते थे। वे स्वयं मजदूर थे, जाति के मछियारे थे। गरीबी की वजह से वे निर्वाचन में कुछ खर्च नहीं कर पाए थे, परन्तु पार्टी उनकी पूरी-पूरी मदद कर रही थी।

अम्बिकादेवी को आज बिलकुल फुसंत न थी। वे रात को मछुओं की बस्ती में ही रही थीं। उनकी तरह पार्टी के कई कार्यकर्ता अपने

कार्य-क्षेत्र में सो गए थे ।

सवेरा होते-होते वे अपने मतदाताओं को पोलिंग स्टेशन ले गए ।

इससे पहले कि चेट्टियार के समर्थक पोलिंग स्टेशन पर आते, श्री पिल्ले के मतदाता मत देकर जा रहे होते । वे सब अक्सर काम-काज वाले कुली, मजदूर थे ।

श्री पिल्ले और अम्बिकादेवी ने एक-एक मछियारे के घर जाकर उनका मत माँगा, सवेरे उनको स्वयं साथ ले गए । वे जानते थे कि उनके उम्मीदवार को कहाँ मत मिल सकते थे, वे वहीं अपनी शक्ति केन्द्रित कर रहे थे ।

जब श्रीमती रमा चौधरी मछुओं की बस्ती में गईं तो बस्ती सुनसान थी । मछुए समुद्र में अपनी-अपनी तमेड़ें लेकर निकल चुके थे । कुछ बच्चे और औरतें झोंपड़ियों में थे । श्रीमती रमा नाक पर रूमाल चढ़ाकर इधर-उधर थोड़ी देर घूमीं, फिर अपनी कार में बैठ गईं । ड्राइवर को भेजकर मछुओं के सरदार को बुलाया ।

ड्राइवर ने आकर बताया कि सरदार नहीं था । वह मछली पकड़ने जा चुका था ।

“तब एडमले को बुलाओ,” श्रीमती रमा चौधरी ने ड्राइवर को हुक्म दिया ।

एडमले बस्ती का बड़ा-बूढ़ा बुजुर्ग था । जवानी औरों की तरह उसने समुद्र के पानी में काटी थी । अब दमा ने उसे निःशक्त कर रखा था । हिल नहीं पाता था । बेटे काम पर जाते थे । जैसे-तैसे गुजारा चल रहा था । उम्र के कारण उसका बस्ती में काफी रोब था । उसकी और मछुओं के सरदार की आपस में न बनती थी । उन दोनों की अलग-अलग अपनी पार्टी थी । वह श्रीमती रमा का भी समर्थक न था । अम्बिकादेवी के काम से वह प्रभावित था ।

उसे जब श्रीमती रमा का हुक्म मिला तो सहसा आश्चर्य हुआ । श्रीमती रमा चौधरी उसको अक्सर नहीं बुलाती थीं । वह भी उनके

पास न जाता । अगर कोई और वक्त होता तो शायद वह बुलाने पर भी न जाता । मगर आज वह खुश था ।

एडमले कार के पास जाकर खाँसता-खाँसता खड़ा हो गया ।

“गाँव वालों ने वोट दिया है कि नहीं ?”

“सब-के-सब सवेरे ही दे आये थे ।”

“तुमने दिया कि नहीं ?”

“जी, दे दिया है ।”

“किस तरफ हवा चल रही है ?”

“पिल्ले हमारा ही आदमी है—हमारी जाति का है, उसको अपना वोट नहीं देंगे तो और किसको देंगे ?” एडमले ने कहा ।

“क्या कृतघ्न लोग हो तुम भी ? सूत दिलवाया, तूफान आया और तुम बे-घरबार हो गए, तब तुम्हारे लिए मकान पिल्ले ने बनवाये थे या चेट्टियार ने ? अच्छा, जब सरदार आये तो बंगले में भिजवा देना ।” श्रीमती रमा चौधरी निराश हो चली गई ।

वे दो-तीन बस्तियों में और गई । वहाँ भी यही सुनने को मिला । चेट्टियार पराजित होते-से मालूम होते थे । उन्होंने सोचा था कि पैसे की मदद से वे अपना सपना पूरा कर लेंगे, पर उनका सपना काँच के एक टुकड़े की तरह टूटता-सा लगता था ।

वे शहर के अन्दर गई । एक पोलिंग स्टेशन पर तो भीड़ ही न थी । कई घने इलाकों में काफ़ी भीड़ थी और श्री चेट्टियार के समर्थक भी अधिक लगते थे । श्रीमती रमा चौधरी की जान-में-जान आई । उन्हें ऐसा लगा कि जैसे पलड़ा समान हो रहा हो ।

भोजन के बाद श्री चेट्टियार और श्रीमती रमा चौधरी ने अपना रवैया ही सरासर बदल दिया । उन्होंने पैसे देकर गरीबों के वोट खरीदना शुरू किया । गुण्डे-बदमाशों को भेजकर वे कुली मजदूरों को वोट देने से रोक रहे थे । कई को धमकी दी जा रही थी । श्री चेट्टियार के दोस्त हर तरह के दबाव डाल रहे थे । रुपया पानी की

तरह बहाया जा रहा था ।

अब उनका निर्वाचन जाति-पांति का विषय बन गया था । सर्वण हिन्दू यह न चाहते थे कि कोई मछियारा उनकी तरफ से विधानसभा में बैठे । वे अपने वोट चेट्टियार को दे ही रहे थे, दूसरों के भी दिलवा रहे थे । साम, दाम, दण्ड, भेद, सभी उपाय बरते जा रहे थे ।

शाम होते-होते निर्वाचन में इतनी गरमी आई कि पुलिस की संख्या भी बढ़ती गई । चेट्टियार के समर्थकों की जबरदस्ती बढ़ती जाती थी ।

जब निर्वाचन सरकारी तौर पर खतम कर दिया गया, तो यह समझा गया कि जीत श्री चेट्टियार की होगी, मगर अधिक मतों से नहीं । अन्नमले पिल्ले ने अच्छी तरह मुकाबला किया था । उनको पूरा विश्वास था कि वे ही विजयी होंगे ।

शाम को श्रीमती रमा चौधरी के बंगले के पास बस्ती के टीले पर एक सभा की आयोजना की गई । श्री पिल्ले अपना भाषण दे रहे थे ।

“ये धना लोग समझते हैं कि डरा-धमकाकर या अपने पैसे के बल पर गरीबों के वोट ले सकते हैं । गरीबों के पास कुछ हो या न हो, संख्या तो है । जब वे संगठित रूप में चल पड़ते हैं, न उनको पैसे की दीवारें ही रोक सकती है, न रईसों की बन्दर-घुड़कियाँ ही । इतने दिनों जिस तरफ इन लोगों ने इशारा किया उस तरफ हम चलते गए । नतीजा यह हुआ—उनकी ताकत बढ़ती गई, उनकी दौलत बढ़ती गई, उनका दबाव-धौंस बढ़ता गया, उनका अत्याचार बढ़ता गया ।” सभा में तालियाँ पिटने लगीं ।

“हमारे पास उनका मुकाबला करने के लिए फिलहाल एक ही शस्त्र है—वह है वोट का शस्त्र । अगर यह निष्फल रहा तो हमें मालूम है कि हमें किस शस्त्र से मुकाबला करना चाहिए । युद्ध में हम कुछ न खोयेंगे, सिवाय गुलामी की जंजीरों के ।

“मैं आपको धन्यवाद देता हूँ कि आपने मुझे वोट दिया, दुनिया के मजदूर जिन्दाबाद, साम्यवाद, जिन्दाबाद !” नारों के साथ उन्होंने

अपना भाषण समाप्त किया ।

अम्बिकादेवी ने अपना भाषण यों दिया—

“हो सकता है हमने आपको सूत न दिया हो, यह भी हो सकता है कि हमने आपके मकानों के लिए बांस न दिलवाये हों, पर आप जानते हैं कि आपको ये चीजें क्यों दी गई थीं ?—ताकि आप अपने वोट एक ऐसे व्यक्ति को दें जो आपका मुँह भी न देखे । वह घूँस थी । हमें इस बात की खुशी है कि आपने आँखें खोल ली हैं । आपका सरदार भी अब जान गया है । यह देखकर हमें और भी खुशी होती है ।” मछुओं का सरदार सभा में बैठा हुआ था । यह तो नहीं मालूम, उसने किसको वोट दिया था, पर उसने चेट्टियार को मत देने के लिए किसीसे न कहा था ।

इधर श्री डगन के होटल में श्री चेट्टियार पार्टी दे रहे थे । श्रीमती रमा चौधरी उपस्थित थीं । चेट्टियार के अन्य समर्थक भी वहाँ थे ।

रात के बारह बजे तक पार्टी चलती रही । श्री चेट्टियार को पूरा भरोसा था कि वे विजयी होंगे । श्रीमती रमा चौधरी को उन्होंने खूब धन्यवाद दिया ।

: १३ :

परश्वक के तालाब के चारों ओर सवेरे-सवेरे लोग इकट्ठे हो गए थे । उचक-उचककर देख रहे थे । पास में मन्दिर के घण्टे लगातार बज रहे थे । आते-जाते भक्त लोग तालाब पर आते, मुँह पर हाथ रखते और बिना नहाये सीढ़ियों पर खड़े हो जाते ।

तालाब में एक स्त्री का शव तैर रहा था । गीली लाल रेशमी साड़ी ऊपर दिखाई दे रही थी । वह श्री मुदलियार की पत्नी थीं । उन्होंने आत्महत्या कर ली थी ।

इतने लोग वहाँ खड़े हुए थे । श्री मुदलियार के घर वाले भी एक पेड़ के नीचे खड़े रो-धो रहे थे, पर मुदलियार न थे । वे बंगलौर में

थे। पुलिस को इत्तिला दी जा चुकी थी। उनके आने का इन्तज़ार किया जा रहा था।

परश्वाकं मद्रास का एक बहुत पुराना मुहल्ला है। यह शहर के उत्तर-पश्चिम में है। यहाँ भी मद्रास के मुहल्लों की तरह कई मन्दिर हैं और मन्दिरों के पास बड़े-बड़े तालाब।

श्री मुदलियार का घर भी इसी मुहल्ले में था। बाप-दादाओं का पुराने ज़माने का घर था। कभी परश्वाकं का बहुत सा हिस्सा श्री मुदलियार के पुरखाओं के हाथ में था। अब सिवाय पाँच-दस मकानों के सब-कुछ बिक चुका है।

दो-तीन गलियों के नाम भी श्री मुदलियार के पूर्वजों के नाम पर हैं। उनके पिता शहर के माने हुए रईस थे। घोड़ों के ज़माने में उनके घर दो-दो, तीन-तीन फिटनें हुआ करती थीं। अब कारें हैं। पर मुहल्ले में श्री मुदलियार की पहली जैसी न हैसियत है, न धाक ही। वे उस विशाल वृक्ष की तरह थे जो कभी-कभी दूर-दूर तक साया दिया करता हो, मगर जिसकी अब शाखाएँ गिर गई हों और हेमन्त में झुलसा जा रहा हो।

पुरखाओं ने मन्दिर बनवाया था और साथ का तालाब भी, जिसमें श्री मुदलियार की पत्नी की लाश अब तैर रही थी।

तालाब के आसपास पुरोहितों के छोटे-छोटे तंग घर थे। उनमें से कई पेड़ के नीचे बने चबूतरे पर बैठे-बैठे बातें कर रहे थे। किसीने अपनी ज़िन्दगी समाप्त कर ली थी और उनको दिन-भर का काम मिल गया था। उनमें से एक कह रहा था, “रात का कोई डेढ़ बजा होगा। मेरी पत्नी बीमार थी, मैं बैठा उसकी शुश्रूषा कर रहा था। इतने में क्या सुनता हूँ कि तालाब की ओर से ‘शिव शिवा शिवा’ की जोर से आवाज़ आ रही है। मैं आवाज़ न पहचान सका, पर इतना ज़रूर समझ गया कि कोई स्त्री आफत में है।

“जाने को सोचा, पर हिम्मत न हुई। आजकल रात को घर से अंधेरे में निकलना भी आफत है। चोर-उचकके फिरते रहते हैं और यह भी हो

सकता ~~हम~~ हम बाहर निकलें और पुलिस वाले हमें ही चोर समझकर थाने में ले जायें। और बीमार पत्नी को छोड़कर जाता भी कहाँ ? अभी सोच ही रहा था कि फिर आवाज़ आई, 'शिव शिवा' और किसीके तालाब में कूदने की ध्वनि सुनाई दी।

“मैंने अपने साले को जगाया, उसने पड़ोस के पारथ सारथी को और पारथ सारथी ने बगल वाले मकान में श्रीनिवासन् को जगाया। जब हम पाँच-दस आदमी मिलकर तालाब पर गये तो देखते क्या हैं कि बड़ी-बड़ी लहरें किनारे की तरफ़ आ रही हैं, पर वहाँ कोई दिखाई न दिया। जो कुछ होना था, हो चुका था। हम घर वापस चले आए।

“सवेरे मालूम हुआ कि वे मुदलियार की पत्नी थीं। कोई पैसे की तंगी के मारे खुदकशी करता  कोई बेकारी से तंग आकर। पर इन जैसे लोगों को क्यों मरने की नौबत आती है, समझ में नहीं आता। अच्छा खाता-पीता परिवार है, भगवान् ने सब-कुछ दे रखा है। आखिर मरी क्यों वे ? आर फिर उसी तालाब में, जिसको उनके पुरखों ने बन-बाया था। अजीब बात है।”

“हर आदमी और औरत की अपनी-अपनी दिक्कतें होती हैं,” पारथ सारथी कहने लगा, “रुपया-पैसा कई दिक्कतों के लिए ढाल ज़रूर है, पर ऐसी भी कई बातें हैं जो ढाल को बींधकर निकल जाती हैं। औरत के दिल को पैसे का कवच भी नहीं बचा पाता। पैसे वाली औरत के दिल पर भी ठीक वैसे ही चोट लगती है जैसे गरीब स्त्री के दिल पर.....हाँ बहुत-कुछ सोचने पर भी है।”

“फिर भी उन्होंने क्यों आत्महत्या कर ली ?” पहले पुरोहित ने जानना चाहा।

“तुम जानते ही हो मुदलियार को। पहले ऐसे रहा करता जैसे दूध का धुला हो। घर में रोज़ पूजा-पाठ होता। पत्नी का राज था। वे धार्मिक प्रकृति की, पुराने खयालात की स्त्री थीं। बाल-बच्चे वाले हो गए। दुनिया चलती जाती थी। पर यकायक मुदलियार की जिन्दगी

ने पटरी बदली। वे बुरी सोहबत में पड़ गए। बस, लुढ़कने लगे..... और लुढ़कने वाले पर तो पहाड़ भी नाराज़ होकर पत्थर ढुलकाने लगता है। रंडियों के चक्कर में पैसा खराब करने लगे। बाप-दादाओं की प्रतिष्ठा मिट्टी में मिला दी।” पारथ सारथी पास वाले पुरोहित के कान में धीमे-धीमे फुसफुसाने लगा, “जानते हो..... इस रमा चौधरी को ? सुनते हैं यह इसीकी करतूत है..... ईसाई थी, शादी के लिए हिन्दू हो गई। पति को भी डुबो रखा है। मुदलियार उनके चंगुल में फँस गए। फिर क्या था..... मकड़ी के जाल में से कोई मक्खी सही-सलामत कभी निकली है ?”

“मुदलियार थे अच्छे आदमी,” पारथ सारथी जोर से कह रहा था, “उनकी स्त्री के बारे में कहना ही क्या ? बहुत ही धार्मिक, श्रद्धालु, दान-शील, किसीको भी घर से कभी खाली हाथ न भेजा। कौन कह सकता है भाग्य में क्या बदा है ! उनकी मौत उन्हीं के तालाब में और इस हालत में होनी थी।”

“पर मुदलियार को बिगड़े हुए अर्सा हो गया है। इनके अब मरने की क्या ज़रूरत थी ?” श्रीनिवासन् ने धीमे से पूछा।

“यह है तो सच, शायद उनकी स्त्री को भी मालूम था। पर हो सकता है कि उन्हें विश्वास न हो। सबूत भी इतने दिनों तक न मिले हों। आखिर हिन्दू स्त्री जो ठहरी।” पारथ सारथी ने कहा।

पुरोहितों में थोड़ी देर के लिए चुप्पी रही। पुलिस आ गई थी और लाश को बाहर निकाला जा रहा था। श्रीमती मुदलियार के रिश्तेदार, आँखों पर तौलिया रखकर सिसकने लगे। लोग भी सीढ़ियों पर खड़े-खड़े और गौर से देखने लगे।

श्रीमती मुदलियार के चेहरे पर शान्ति थी। सिन्दूर पानी से धुल-मिलकर अब भी माथे पर था। माँग में सिन्दूर की गहरी परत थी। मंगल-सूत्र कपड़ों के ऊपर लटक रहा था। कान की बालियाँ भी धुल-धुलाकर खूब चमक रही थीं। ऐसा लगता था जैसे सारा शरीर साड़ी

से लपेट दिया गया हो। साड़ी से लाँग भी बाँध रखी थी। हालाँकि जीवित अवस्था में वे उस तरह कभी साड़ी न पहनती थीं, मृत्यु के बाद भी उनका कोई अंग नग्न न दिखाई दे, शायद इसीलिए ही उन्होंने उस तरह साड़ी बाँधी थी। छाती भी पूरी तरह ढकी हुई थी और कमर पर साड़ी को पेट की तरह बाँध रखा था। वे माँग में सिंदूर लगाती हुई भी कभी न देखी गई थीं। वे सम्भवतः विवाहित स्त्री के रूप में ही मर जाना चाहती थीं।

“मुदलियार साहब को तार दिया गया है कि नहीं?” पुलिस अफसर ने पूछा।

“दे दिया गया है,” श्री मुदलियार के एक सम्बन्धी ने कहा, “वे बंगलौर में हैं, अगर टेलीग्राम वक्त पर मिल गया, तो हवाई जहाज पर आते ही होंगे। फोन भी किया है।”

“लाश की परीक्षा उनके आने पर हो या अभी हो?” पुलिस अफसर ने पूछा।

“थोड़ी देर और प्रतीक्षा करना अच्छा होगा,” सम्बन्धी ने कहा।

पुलिस अफसर वहाँ पाँच-दस सिपाहियों को पहरे पर छोड़कर चला गया। भीड़ भी तितर-बितर होने लगी। परन्तु अब मुदलियार के मित्र कारों में आने लगे थे। वे एक क्षण मुरदे को देखते और श्री मुदलियार को वहाँ न पा चले जाते। श्रीमती रमा भी आईं। उन्होंने कार से नज़ारा देखा और चली गईं।

सुब्रह्मण्यं मुदलियार भी, जो श्री मुदलियार के दूर के सम्बन्धी थे और अच्छे मित्र थे, तालाब के किनारे अपनी कार में बैठे रहे। उनकी बगल में श्री मुदलियार के कोई और सम्बन्धी थे, जो श्री मुदलियार के घर में ही रहा करते थे।

“आखिर बात क्या थी?” श्री सुब्रह्मण्यं ने दबी ज़बान में पूछा।

“आप जानते ही होंगे.....आजकल मुदलियार अक्सर घर में नहीं रहा करते हैं, जब आते भी हैं तो मुँह सुजाकर या तो अपने कमरे

में बैठे रहते हैं या शहर-भर में मटरगश्ती किया करते हैं। उनकी पत्नी को सन्देह हो गया, पर बहुत दिनों तक उन्होंने कुछ कहा नहीं। कल ऐसा हुआ कि बंगलौर से एक स्त्री आई। उसका पति पहले बंगलौर में मुदलियार के घर काम किया करता था। उसके साथ एक लड़का था और वह गर्भवती भी थी। इनके पास आकर वह रोने-धोने लगी... वह मुदलियार को ढूँढ़ती-ढूँढ़ती उनके घर पहुँची थी। उसके पति ने उसको घर से भगा दिया था। वह गुजारे के लिए पैसे माँग रही थी। यह भी कहती थी कि उसका लड़का मुदलियार से ही पैदा हुआ था।

“उसे अब मुदलियार ने चलता कर दिया था। पहले माहवार उसको कुछ देता था, पर अब वह भी देना बन्द कर दिया था। उस औरत के पास कुछ कागजाती सबूत थे, जिससे साफ़ मालूम होता था कि मुदलियार ने उसको रख रखा था।

“वह औरत बेचारी कहाँ जाती ? उसका घर मुदलियार ने तबाह कर दिया था और वह शायद मुदलियार का घर तबाह करना चाहती थी और कर भी दिया। नौजवान, खूबसूरत औरत। आजकल इन गरीबों के भी पंख लग गए हैं, मालिक ने गलती की नहीं कि शहर-भर में ढिंढोरा पीटते रहते हैं।

“सुनते हैं, उसी औरत ने यह भी बताया कि श्री मुदलियार किसी कमला के साथ रह रहे हैं। उसके भी एक लड़का है। बंगलौर में गुलछरें उड़ा रहे हैं। क्या अच्छी ज़िन्दगी थी, क्या हो गई ? पहले कभी वे औरतों को नज़र उठाकर भी न देखते थे और अब यह हालत है कि औरतों पर से नज़र नहीं हटती।”

“फिर क्या हुआ ?” सुब्रह्मण्य मुदलियार ने पूछा।

“होना क्या था जो हुआ आप सामने अपनी आँखों से देख ही रहे हैं। उन्होंने इस गरीब औरत को जो कुछ उनके पास था—पाँच-छः सौ रुपये दे दिए और भेज दिया। क्या स्त्री थी ? ऐसी स्त्रियाँ बिरली होती हैं। जितने दिन वहीं पति के पैरों पर पड़ी रहीं और जब पति ही

दूर हो गया तो वह भगवान् के चरणों पर जा पड़ी। कोई फौलाद की तो थी नहीं कि चोट लगे और चूँ तक न करें। औरत का दिल आप जानते ही हैं।” वह व्यक्ति रूमाल में नाक रखकर सिसकने लगा। श्री सुब्रह्मण्य की आँखों में भी तरी आ गई।

थोड़ी देर बाद उस व्यक्ति ने ऐसे हड़बड़ाते हुए पूछा, जैसे कुछ भूल गया हो, “यह रमा चौधरी कौन है ? क्या आप जानते हैं ?”

“हूँ-हूँ, हाँ-हाँ, कहो क्या बात है ?” श्री सुब्रह्मण्य ने पूछा। वे भी उसी क्लब के पुराने सदस्य थे, जिसमें श्रीमती रमा चौधरी थीं।

“सुनते हैं, मुदलियार की पत्नी को बाद में खोजने-खाजने पर मुदलियार की निजी आलमारी में उनकी चिट्ठियाँ भी मिलीं। उसने इन चिट्ठियों को रेशमी रूमाल में बाँध रखा था, जैसे अब भी अठारह-बीस का नौजवान हो... बच्चों वाला है, पर एकदम बेशर्म। जिस बात का उसकी पत्नी को अर्से से सन्देह होता आ रहा था, सच निकली। फिर जिन्दा रहती भी तो कैसे रहती ? खुद अपनी और अपने घरबार की बरबादी कैसे देखती ?” वह आदमी हिचकियाँ भरने लगा। परन्तु सुब्रह्मण्य की तरफ आँखों में गुस्सा चमकने लगा। वे न रमा चौधरी को ही अच्छा समझते थे, न उन जैसी स्त्रियों को ही। उनको ऐसी स्त्रियाँ घने चीड़ के जंगल में जलती दियासलाइयों की तरह लगती थीं। वे पहले ही बुरी तरह श्रीमती रमा चौधरी से चिढ़े हुए थे, अब वे और भी तिल-मिला उठे।

थोड़ी देर बाद मुदलियार आये—वे हवाई जहाज़ से आये थे। माथे पर हाथ रख वे सीढ़ियों पर बैठकर रोने लगे। वे रोते जाते थे। उन्होंने पत्नी की मृत्यु की कभी कल्पना भी न की थी। वे अपने को ही यकायक दोषी समझने लगे। दुर्घटना ने सहसा उनकी आँखें खोल दीं।

पुलिस ने अपना काम किया। अन्त्येष्टि-संस्कार के लिए शव को श्मशान ले जाया गया। वहाँ मुदलियार के मित्र व सम्बन्धी उपस्थित थे। सबने दिवंगत आत्मा के लिए शान्ति की प्रार्थना की और श्री

मुदलियार से सहानुभूति प्रकट की ।

जब शाम को श्री मुदलियार घर पहुँचे तो श्रीमती रमा चौधरी भी हमदर्दी जाहिर करने गईं । श्री मुदलियार एक कोने में बैठे सिस-कते जाते थे । पहले उन्होंने श्रीमती रमा चौधरी को अन्दर आने की अनुमति नहीं दी । जब स्वयं श्रीमती रमा चौधरी आ गईं तो उनकी तरफ उन्होंने देखा भी नहीं । वे विवश हो चली गईं ।

श्रीमती मुदलियार मरते समय पति के लिए एक पत्र छोड़ गई थीं—“मुझे दुःख है, मैं आपको सुखी न रख सकी । आप सुख से रहिए, यही मेरी भगवान् से प्रार्थना है ।” मुदलियार इस पत्र को देखते और फूट-फूटकर रोने लगते, छाती पीटते । पत्र में उनको अपनी पत्नी दिखाई देतीं और वे आँखें मींच लेते.....आँसुओं की झड़ी लग जाती । साँस अन्दर खिंचने लगती, स्मृतियाँ सताने लगतीं ।

पत्नी का वह पार्श्व उनके सामने था जिसे वे न जान पाए थे और मौत ने उस पार्श्व को अब हमेशा के लिए ढक दिया था । वह एक दिव्य स्त्री थी जो जीवन में संगिनी बनकर रही और मृत्यु में भटके हुए पति के लिए सन्देश बन गई ।

जब श्रीमती रमा चौधरी क्लब पहुँचीं—कोई मरे या जिये, क्लब जाना उनको भाता था—सब उनकी ओर घूर-घूरकर देखने लगे । उनकी नज़रों में नफ़रत थी—कोप और अवहेलना । किसीने न बात की, न शिष्टतावश कोई मुस्कराया ही ।

सुब्रह्मण्य मुदलियार क्लब के कोने में बैठे श्रीमती रमा चौधरी की पोल खोल रहे थे । क्लब के सदस्य सब जान गए थे—अगर मुदलियार की पत्नी इस दुनिया में नहीं है तो रमा चौधरी उसका कारण है । अगर मुदलियार श्रीमती रमा चौधरी की सोहबत में न आते तो शायद उनकी गृहस्थी अब भी आबाद रहती ।

श्रीमती रमा चौधरी क्लब की बरसों से सदस्या थीं, पर क्लब को उन्होंने इतना उदासीन कभी न पाया था । इतनी घुटन कभी न

हुई थी। जब सुब्रह्मण्य की बात उनके कानों पड़ी तो उनके लिए वहाँ बैठना मुश्किल हो गया। वे वरामदे में चली गईं। अब्राहम मुस्कराते-मुस्कराते उनके पास आये, हँस-हँसकर बातें करने लगे। और क्यों न करते, क्योंकि श्रीमती रमा चौधरी और अब्राहम का खयाल था—संसार में मनुष्य दीये की तरह जलते हैं, कई बुझ जाते हैं। पर कोई इसलिए नहीं बुझता क्योंकि दूसरा दीया बुझ गया है। सहानुभूति केवल 'शिष्टता' है।

: १४ :

आज सवेरे बम्बई मेल से श्रीमती डगन बम्बई जा रही थीं। स्टेशन पर उनको विदा करने के लिए कई स्त्रियाँ, मित्र आदि उपस्थित थे। श्रीमती रमा चौधरी भी ऐन समय पर पहुँच गई थीं। वे भी भीड़ में थीं। उन्होंने आगे बढ़कर श्रीमती डगन से बातचीत करनी चाही, पर वे किसी बहाने से ट्रेन के कम्पार्टमेंट में चली गईं। उनसे बात न की।

श्रीमती डगन औरों से बातें कर रही थीं। अपने पति की ओर भी यदा-कदा देख लेती थीं। पर उनकी दृष्टि में न स्नेह था, न रोष। एक प्रकार की उदासीनता थी।

श्रीमती रमा चौधरी को उनके जाने की सूचना पिछले दिन ही क्लब में मिली थी। स्वयं श्री डगन ने बताया था। पहले वे स्टेशन पर न आना चाहती थीं, फिर यह सोचकर कि लोगों की ऊटपटाँग शंकाएँ न हों वे चली आई थीं।

श्रीमती डगन और उनके पति में अच्छी-खासी झड़प हो गई थी। पत्नी आखिर कब तक सहती? जो कुछ उनके मन में दिनों से उबल रहा था, बाहर उगल ही दिया। वे न चाहती थीं कि उनके पति श्रीमती रमा चौधरी के साथ इधर-उधर फिरे। उनके पास कई शिकायतें आ रही थीं। श्रीमती डगन ने अपने पति से बहुत-कुछ पूछ-ताछ

की, पर श्री डगन चुप रहे, और अपने सिगार पर दम खींचते रहे। श्रीमती डगन ने भोजन न करने की ज़िद की, तब भी श्री डगन चुप रहे। आखिर उन्होंने बम्बई जाने की धमकी दी।

“सिर्फ बातचीत और मेल-जोल में क्या रखा है ? तुम खामखाह यों ही तिलमिला रही हो। कहती क्यों नहीं कि ईर्ष्या हो रही है ?” श्री डगन ने जवाब दिया।

“तुम ईर्ष्या समझो या कुछ और, मुझे तुम्हारा उस स्त्री से बातचीत करना एकदम नापसन्द है। होटल के नौकर-चाकरों का भी खयाल न रहा ?”

“तुम कितने ही आदमियों से मिलती हो। सामाजिक कार्य के बहाने न जाने कहाँ-कहाँ भटकती फिरती हो...कभी मैंने कुछ कहा ? कभी तुमने सोचा कि मुझे यह काम पसन्द है कि नहीं ?”

“सामाजिक कार्य करना कोई गुनाह नहीं है। इस उम्र में तुम ऐसी बातें कर रहे हो. तुम्हें शर्म नहीं आती ?” श्रीमती डगन गुस्से से काँपने लगीं।

“रमा भी तुम्हारी उम्र की है न ?”

“मैं और रमा तुम्हारी नज़र में एक हैं क्या ? उस बाज़ारू लोंडी से मेरी तुलना ? जानते हो वह कौन है ? वेश्याएँ खुले बाज़ार अपना पेशा करती हैं, वे भी उससे अच्छी हैं। यहाँ दिखावा कुछ और करना कुछ। कितनों के घर वरबाद कर रखे हैं इसने ? देखा न, मुदलियार देखते-देखते तबाह हो गया...और तुम्हें अक्ल आई। नागिन है नागिन।” श्रीमती डगन चिल्लाई।

“तुम्हें ईर्ष्या के कारण कुछ नहीं दिखाई दे रहा है। तुम्हारी नस-नस में ईर्ष्या है।”

“क्योंकि उन नसों में प्रेम है...प्रेम और ईर्ष्या में कोई खास फर्क नहीं होता...जब प्रेम अपनी जगह पर होता है उसे प्रेम कहते हैं और जब वह करवट लेता है तो ईर्ष्या।”

“क्या तुम यह कहना चाह रही हो कि तुम्हारा प्रेम मेरे प्रति पहले जैसा है ?”

“अपने दिल से क्यों नहीं पूछ लेते ?”

“तभी...हमें छोड़ घंटों ‘सामाजिक कार्य’ करती हो ?”

“अगर मेरा सामाजिक कार्य तुम्हें नापसन्द था, कह जो देते ? मैं न जाती। फिर यह तुम्हारी रमा भी कब तुमसे चौबीसों घंटों चिपटी फिरती है ?”

“पर वह मेरी पत्नी नहीं है, यही तो मैं तुमसे कह रहा हूँ।”

“उस चुड़ैल का नाम भी मेरे सामने न लो।”

“खैर, खाना खा लो, नहीं लूँगा।” श्री डगन ने पत्नी को मना-मनूकर खाना खिलवा दिया। श्री डगन उबलती ही रहीं, “पर मैं मद्रास में नहीं रह सकती, जहाँ हर कोई मुझे अंगुली दिखाकर बताता है। तुम्हारे कारनामों ने मुझे बदनाम कर दिया है, मैं अपने बच्चों के पास चली जाऊँगी। मुझे जाने दो। मैं नहीं रहूँगी यहाँ।”

श्रीमती डगन ने ज़िद पकड़ ली। उनका खयाल था कि श्री डगन भी साथ जायेंगे। पर.....

श्रीमती डगन धनी घराने की थीं। श्री डगन के परिवार की तरह उनके परिवार के भी कई कारोबार थे। लाखों की आमदनी थी। उनके बच्चे उनकी माँ के पास पला करते थे।

अगले दिन श्री डगन और श्रीमती डगन में बातचीत न हुई। श्री डगन अपनी कमजोरी को स्वीकार न करना चाहते थे, विशेषतः तब जबकि उनकी पत्नी सारी बात पहले ही जानती थीं। अगर स्वीकार कर लेते तो अपने ही हाथ अपने परिवार पर कुल्हाड़ा मार रहे होते। झूठ बोलते उन्हें शर्म भी न आती थी। सवेरे से शाम तक छोटी-बड़ी बात के लिए व्यापार में कितने झूठ बोला करते थे।

शाम को क्लब पहुँचे। मिजाज इस तरह बिगड़े हुए थे कि किसी से बातचीत भी न कर पाते थे। शराब के प्याले-पर प्याले पीते जाते

थे । जब श्रीमती रमा चौधरी वहाँ पहुँचीं तो उन पर नशा चढ़ा हुआ था । नशे में उन्होंने जो-कुछ घर में गुजरा था सो कह सुनाया । हिच-कियाँ भरते हुए उन्होंने अन्त में कहा, “बस, अब रमा तुम्हीं हो । नहीं-नहीं, औरतों का क्या एतबार ? ‘औरत’ कहते-कहते वे फर्श पर गिर गए । नौकरों ने उठाकर उनको कार में रखा ।

आज वे स्टेशन पर उदास खड़े थे । चेहरा कतई पीला । न धाक, न रौनक, दाढ़ी बढ़ी हुई । आँखें लाल । शराब का असर शायद तब भी था । वे अपनी पत्नी की ओर देखते जाते थे और पत्नी किसी और तरफ़ । वे अपनी बात की पक्की थीं ।

थोड़ी देर श्री डगन खड़े रहे, फिर कम्पार्टमेंट में जाकर पत्नी का सामान ठीक करने लगे । श्रीमती डगन के चेहरे पर हलकी-सी मुस्कराहट दौड़ गई । उन्होंने सोचा कि श्री डगन भी उनके साथ आ रहे थे ।

श्रीमती कृष्णस्वामी ने पूछा, “क्यों, हमें छोड़कर यों चली जा रही हो ?”

“बच्चों के प.स जा रही हूँ । दो-तीन महीने हो गए, गये हुए बम्बई ।”

“फिर वापस आओगी क्या ?” श्रीमती रमा ने पूछा, पर श्रीमती डगन ने कोई जवाब न दिया । उनके बदले श्रीमती कृष्णस्वामी ने कहा, “वाह-वाह, क्यों नहीं ?”

“जरूर आइयेगा,” श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराते हुए कहा । उनकी नज़र श्री डगन पर गड़ी हुई थी । दोनों ने एक-दूसरे को देखा ।

इतने में गाड़ी ने सीटी दी । श्री डगन कम्पार्टमेंट से उतर आए । और पत्नी का हाथ पकड़कर कहा, “मैं भी दो-चार दिन में चला आऊँगा । संभलकर । जाते ही लिखना ।” गाड़ी चलने लगी । प्लेट-फार्म पर लोग रूमाल हिलाने लगे । श्रीमती डगन रूमाल से आँसू पोंछती

हुई डिब्बे में चली गई ।

श्रीमती रमा चौधरी श्री डगन के साथ स्टेशन के बाहर आईं । जाते-जाते उन्होंने कहा, “इतनी जल्दी घर जाकर क्या करोगे ? आओ, एन्नोर हो आयेँ । अकेले बैठे-बैठे घर में कुछ सूझेगा नहीं ।”

“हाँ-हाँ, अच्छा सुभाव है ।” श्री डगन कहते-कहते अपनी कार में जा बैठे । उनकी बगल में श्रीमती चौधरी बैठी हुई थीं । श्रीमती रमा चौधरी ने अभी तक अपनी कार न खरीदी थी । जब कभी लोग उनको किसी और की कार में बैठी देखते तो उनको उनके बारे में कोई खास उत्सुकता न होती थी ।

एन्नोर मद्रास से करीब-करीब चौदह मील दूर है । वहाँ समुद्र-तट बहुत ही सुन्दर है । बेक वाटर में किशियाँ का पाल फैलाए जाना तो बहुत ही आकर्षक लगता है । एकान्त जगह है । स्टेशन के इस तरफ कुछ मकान हैं, पर समुद्र के पास सिवाय दो-तीन भोंपड़ियों के कुछ नहीं है । दूर तक रेती है और फिर नीला, लहरें खाता, मतवाला समुद्र है । यहाँ मद्रास के कई रईस अपनी मोटर बोटें भी रखते हैं, अवकाश मिलने पर वहाँ जल-विनोद करते हैं । श्री डगन की भी वहाँ बोट थी । राव साहब की भी । मुदलियार की भी वहाँ पहले बोट थी, अब वह किसीको बेच दी गई थी ।

तेज कार के लिए यह चौदह मील का रास्ता मुश्किल से आधा घण्टे का था । श्री डगन की ब्यूक को इतने समय की भी जरूरत न थी । वे देखते-देखते एन्नोर पहुँच गए । श्रीमती रमा चौधरी जल-विनोद के लिए तैयार होकर आई ही थीं । उन्होंने कपड़े उतारकर नहाने की पोषाक पहन ली । श्री डगन भी कपड़े उतारकर केवल अण्डरवीयर पहने अपनी मोटर बोट में जा बैठे । मोटर बोटों की रखवाली करने वाले ड्राइवर ने इंजन पहले से चला रखा था । दोनों समुद्र में निकल पड़े । पूर्व से सूरज क्षितिज पर थोड़ा ऊपर उठ गया था । सवा सात का समय था । सूर्य की मन्द-मन्द किरणें भी जल-विहार करती-सी लगती थीं ।

ऐसा प्रतीत होता था जैसे मोटर बोट के लिए सूर्य ने भी चांदी का रास्ता बना दिया हो ।

थोड़ी दूर चले जाने के बाद श्रीमती रमा चौधरी ने श्री डगन के कन्धों पर झुकते हुए कहा, “क्या तुम सचमुच ब्राजील जाओगे ?”

“जाने की इच्छा जरूर है, पर न मालूम भाग्य में क्या लिखा है ?” श्रीमती रमा चौधरी ने श्री डगन के कन्धों पर अपना चिबुक रखा । श्रीमती रमा चौधरी श्रीमती की प्रकृति भली भाँति समझती थीं । उनकी इच्छाएँ आधी में पत्तों की तरह होती हैं । वे न दृढ़ निश्चय ही कर पाते हैं, न निश्चित कार्यक्रम ही बना पाते हैं । श्रीमती रमा चौधरी स्वयं अब इसी श्रेणी की थीं । जब से श्री डगन ने ब्राजील के बारे में बात कही थी तब से श्रीमती रमा चौधरी के मन में प्रश्नों की झड़ी-सी लग गई थी—‘क्या मैं इस उम्र में श्री डगन के साथ एक नये देश में नये सिरे से जीवन बिता सकूँगी ? क्या वे मुझे सचमुच चाहते हैं ? क्या वे अपने बाल-बच्चों व पत्नी को छोड़ सकेंगे ? जब वे सब छोड़-छाड़कर जा रहे हैं तो यह कैसे कहा जाय कि मुझे भी छोड़कर नहीं जायेंगे ? जब पैसा है तो औरतें भी मिल जाती हैं ? फिर मैं इनके साथ इस तरह कितने दिन रहूँ ? कभी-न कभी पोल खुलेगी ही । तब क्या होगा ?

इन प्रश्नों का उत्तर भी श्रीमती रमा सोच सकती थीं, पर वे कुछ निश्चय कर नहीं पाती थीं । न वे ही सोलह-सत्रह की थीं, न डगन ही बीस-इक्कीस के । दोनों चालीस के पार लग गए थे । ‘जो कुछ होगा देखा जायगा,’ यह सोचकर श्रीमती रमा मनमानी करती जाती थीं ।

“तुमको भी बम्बई चले जाना चाहिए था,” श्रीमती रमा ने कहा । वे शायद जानना चाहती थीं कि डगन बम्बई क्यों नहीं गये थे—क्या उनके कारण ही या और कोई कारण है ।

“क्या तुम्हारा भी यही खयाल है ?” श्री डगन ने पूछा ।

“शायद तुम्हारी पत्नी तुम्हें साथ ले जाना चाहती थीं,” श्रीमती रमा ने पूछा ।

श्री डगन ने कोई जवाब न दिया । वे अपने ही विचारों में मशगूल थे । वे शायद यह सोच रहे थे—क्या मैंने ठीक किया कि मियाँ-बीवी के झगड़े के बारे में इन्हें बतलाया ? मेरे बम्बई जाने से क्या फायदा ? अगर मैं भी साथ चला जाता तो लोगों को कम-से-कम सन्देह करने का मौका न मिलता । अब वे सोचेंगे—लड़ाई हुई होगी, वे चली गई । ये नौकर भी बला हैं । इन्हें सब मालूम हो जाता है । और अगर साथ चला जाता तो पत्नी सोचती कि उसका कहना ठीक था । वह और सिर पर चढ़ जाती । मेरी बुरी हालत होती । ठीक ही तो कहती थी कि यह रमा भी तो ‘समाज-सेविका’ है । जो स्वयं पति के पास टिक न सकी मेरे पास क्या रहेगी ? जिसका यहाँ ही ठिकाना नहीं, ब्राज़ील में क्या भरोसा ? वेश्या है……पत्नी ठीक ही कहती थी कि यह वेश्या से भी शायद बदतर है । आखिर वेश्या का भी समाज में स्थान है । पर वेश्या को अपनी जगह पर रखना चाहिए । खेल-खिलवाड़ करना शायद बुरा नहीं है……पर उमसे आगे……भगवान् भला करे……रमा वेश्या है । खैर, श्री डगन चुप हो सोचते जाते थे और श्रीमती रमा उनका मन बहलाने के लिए बातें करती जाती थीं—कभी समुद्र के बारे में, कभी सूर्य के बारे में, कभी अब्राहम के बारे में, कभी श्रीमती कृष्णस्वामी के बारे में । श्री डगन के मुँह पर बनावटी मुस्कराहट बनी रही और बिना कुछ जवाब दिये वे मोटर बोट चलाते रहे ।

श्रीमती रमा जान गई कि श्री डगन बातचीत करना नहीं चाहते थे । वह भी थोड़ी देर बात कर चुप हो गई । उनको वापस चलने को कहा । समुद्र-तट पर आकर नहाईं-धोईं । कपड़े पहनकर वे फिर मद्रास चली आईं । श्री डगन ने उनको मद्रास सेण्ट्रल स्टेशन पर छोड़ दिया । समय तब कोई नौ का होगा । शहर में चहल-पहल शुरू हो गई

थी । उन्होंने स्टेशन से एक टैक्सी ली और घर चली गई ।

श्री चौधरी बरामदे में बैठे हुए थे । इससे पहले कि वे कुछ पूछते, स्वयं श्रीमती रमा ने कहा, “स्टेशन से श्रीमती कृष्णस्वामी के घर चली गई थी, वे खींच ले गई । ज़रा देर हो गई है । तुमने क्या प्रातराश कर लिया है ?”

“हाँ-हाँ, श्रीमती डगन क्या चली गई ?”

“हाँ-हाँ ।”

“अच्छा होता, मैं भी देखने चला आता । खैर, तुमने खा-पी लिया है न ?”

“श्रीमती कृष्णस्वामी के यहाँ खा लिया था,” जवाब देती-देती श्रीमती रमा अन्दर चली गई और अपने पिता से बातचीत करने लगीं ।

श्री चौधरी अकेले समय काटने के लिए अखबारों के पन्ने पलटते जाते थे ।

: १५ :

चेट्टियार के घर में छोटी-सी भीड़ जमा हो गई थी । उनसे सहा-नुभूति रखने वाले उनके शुभचिन्तक एकत्रित थे । वे मातम मनाते लगते थे । श्री चेट्टियार निर्वाचन में हार गए थे । उनके विरोधी को सिर्फ डेढ़ सौ मत ही अधिक मिले थे ।

श्री चेट्टियार मुँह लम्बा किये हुए अपनी बैठक में बैठे हुए थे । देखने से लगता था, मानो लकवा मार गया हो । वे निराश थे । फोन भी उठाकर अलग रखा हुआ था । उनके चारों ओर कुछ मित्र थे ।

“डेढ़ सौ मत का ही तो फर्क है, यह भी हो सकता है कि गिनने में कोई गड़बड़ी हो गई हो । कुछ भी हो, एक दरखास्त दाखिल कर देना अच्छा ही है ।” एक मित्र ने सलाह दी ।

श्री चेट्टियार चुप रहे ।

“लोगों में अक्ल नहीं है, चुना भी तो ऐसे को जिसके लिए काला-

अक्षर भैस बराबर । ये तकरीरे भाड़ने वाले नेता यह नहीं जानते कि प्रजातन्त्र एक राष्ट्र की राजनीतिक चेतना की प्रथम दशा नहीं है, बल्कि प्रौढावस्था है । बच्चे को खूब पौष्टिक खाना दे दिया जाय तो क्या होगा ? पेचिश होगी । प्रजातन्त्र वह पौष्टिक खाना है । कभी-न-कभी लोगों में अकल आएगी । सब रखिए ।” एक और मित्र ने आश्वासन दिया ।

श्री चेट्टियार चुप रहे ।

“राजनीति एक लम्बी बाधा दीड़ है । हार गए तो क्या हुआ ? साइकल वाले की तरह कपड़े भाड़-भूड़कर फिर चल पड़े । गिरते-पड़ते कभी-न-कभी तो पहुँचेंगे ही । जब राजनीति में उतरे हैं तो यह जानकर ही दम लीजिए कि यह कितनी गहरी है और कितनी उथली । हिम्मत न हारिए ।” एक और मित्र ने कहा ।

श्री चेट्टियार चुप रहे ।

“जरूर दाल में कुछ काला है, नहीं तो आप हार ही नहीं सकते थे । यह अन्नामले है किस खेत की मूली ? आप गिकायत कीजिए ।” एक दलाल दोस्त ने हौसला बढ़ाया ।

श्री चेट्टियार चुप रहे ।

मित्रों की सलाह सुनते-सुनते वे सवेरे से इतने तंग आ गए थे कि उन्होंने स्वयं फोन भी डिसकनेक्ट कर दिया था । वे किकर्तव्यविमूढ़ थे । मैदान में उतरते ही उन्हें चारों खाने चित्त गिरना पड़ा ।

मुनीम ने आकर कहा, “बैंड वाले पैसे का तक्राजा कर रहे हैं । इजाजत हो तो.....।”

“जितना मुनासिब समझो दे दो और जाने के लिए कहो । होटल वालों को भी पार्टी कैंसल करने के लिए कह देना । फल वगैरह की भी जरूरत नहीं है ।” वे झुंझलाते हुए उठे और घर के अन्दर चले गए ।

श्री चेट्टियार को अपनी सफलता के बारे में इतना विश्वास था

कि सफलता को जोर-शोर से मनाने के लिए पहले से ही सब प्रबन्ध कर दिया गया था और जब आखिर उनको हार का समाचार मिला तो उन्हें ऐसा लगा जैसे कुल्हाड़ी से उनके दो टुकड़े कर दिये गए हों। राजनीतिक दाँव-पेंच का पहला-पहला अनुभव था और वह भी बेहद कड़वा निकला।

अन्दर जाकर खंभे के सहारे अकेले बैठ गए—गमगीन, खिन्न। एक तरफ़ बच्चे मजे में खेल रहे थे। एक समय था जब वे बच्चों का खेल-कूद बहुत पसन्द करते थे, पर अब उनका खेल-कूद न जाने क्यों चिढ़ाता-सा लगता था।

“शोर मत करो, जाओ बाहर जाओ।” उन्होंने आँखें दिखाते हुए बच्चों को डाँटा-डपटा। उनकी दादी कमरे से बाहर निकल आई और अपने लड़के की ओर घूरने लगीं।

“क्यों बेटा, बच्चों पर खामखाह क्यों नाराज़ हो रहे हो?”

श्री चेष्टियार चुप रहे।

“मैं पहले ही कहती थी कि इस राजनीति के भ्रमेले में न पड़ो। फालतू पैसे की बरबादी है। राजनीति वह खतरनाक दीमक है जो घर को ढहाकर दम लेती है। क्या हुआ अपने वैकटस्वामी का? अच्छा-बड़ा खानदानी व्यापार मिट्टी में मिल गया। न इधर राजनीति में ही पनपे, न उधर व्यापार में ही। देखते-देखते सारा कारोबार चौपट हो गया। अब पत्नी के रूप्यों पर ज़िन्दगी बसर कर रहा है। खैर, वह अच्छा पढ़ा-लिखा भी था। जब पढ़े-लिखों की पूछ नहीं है तब……।”

“माँ, चुप भी रहो।”

“मेरी चुप्पी की वजह से बात इतनी दूर आई, वरना अगर मैं पहले ही ज़िद पकड़ती तो तुम यह पागलपन न करते। बेटा, अब भी संभल जाओ। राजनीति अभी तुम जैसे लोगों के लिए नहीं है। अब ज़माना उनका है जो कभी देश के लिए जेल गये थे। दस-पन्द्रह साल उन्हीं के रहेंगे। बाद में लोग उन्हें चुनेंगे जिनमें लियाक़त होगी, जो

उनके लिए काम करेंगे । तुम कभी जेल गये नहीं.....न लोगों में ही काम कर सकते हो । क्यों यों राजनीति में बेकार वक्त और पैसा जाया करते हो ? राजनीति बुरा चस्का है । बरबाद हो जाओगे । बूढ़ी हूँ तो इस खयाल में न रहना कि मैं कुछ जानती नहीं हूँ । सब जानती हूँ बेटा, सब जानती हूँ । अभी कुछ नहीं बिगड़ा है । संभल जाओ ।” श्री चेट्टियार की माँ ने कहा ।

उनकी माँ अच्छी पढ़ी-लिखी थीं । गीता, रामायण की तरह रोज़ समाचारपत्र भी देख लिया करती थीं । जब उनके पति जीवित थे तो सारा देश भी घूम आई थीं । जवानी में कई संस्थाओं के काम में सक्रिय भाग भी लिया था ।

सास को पति को डपटता देख श्री चेट्टियार की पत्नी भी वहाँ आकर खड़ी हो गई । “मैं कहती थी कि इस राजनीति की भँवर में न कूदो । व्यापार में मन्दी है ही, ये ऊटपटांग खर्च और सिर पर मोल ले रहे हो । सुनते हैं आपने इस चुनाव के लिए सत्तर हजार रुपया पानी कर दिया । सत्तर हजार रुपया कोई मामूली रकम है ?”

श्री चेट्टियार खिभे हुए इधर-उधर देखने लगे, जैसे उनको किसी ने बाण से बींध दिया हो और दर्द न सह पा रहे हों ।

“अगर यह जीत जाता तो क्या तुम ये बातें कहतीं ? बदकिस्मती है, हार गया । जब राजनीति में पैसे वाले उतरते हैं, पैसा बरबाद होता ही है । न उतरना अच्छा था, पर जो अब हो गया है उस पर रोने-धोने से क्या फ़ायदा ?” चेट्टियार की माँ ने लड़के के कंधे सहलाते हुए कहा ।

श्री चेट्टियार की आँखों से आँसुओं की झड़ी लग गई । उन्होंने लोगों के ताने-चश्मे सहने के लिए अपने को फोलाद कर लिया था, पर माँ की यह बात सुनकर वे ढीले हो गए, नर्म पड़ गए, हिचकियाँ भरने लगे । उनकी माँ उनको उनके कमरे में ले गई, थोड़ी देर वहाँ बैठी रहीं । बाद में श्री चेट्टियार ने कमरा अन्दर से बन्द कर लिया ।

इधर.....।

श्रीमती रमा चौधरी के बँगले के चारों ओर होहल्ला हो रहा था। श्रीमती अम्बिकादेवी और अन्नामले स्वयं मछियारों की टोली के साथ नारे लगा रहे थे। अम्बिकादेवी नारा शुरू करतीं, “पूँजीपतियों का....” और अन्नामले नारे को पूरा कर देते, “नाश हो”। उनके साथ मछियारे भी चिल्लाते। न जाने वे कितने नारे लगाते जाते थे। कई रमा चौधरी के बँगले की तरफ़ मुक्कों से इशारा भी कर रहे थे।

बाद में मछियारों की बस्ती में एक सभा हुई, जिसमें अम्बिकादेवी का भाषण हुआ। होहल्ला सुनकर श्रीमती रमा चौधरी हड़बड़ाती हुई बिस्तर से उठीं। पिछली रात उन्हें एक नाच में भाग लेना पड़ा था। काफी देर हो गई। अगर वहाँ होहल्ला न होता तो शायद वे एक-डेढ़ बजे तक बेखबर सोती रहतीं।

“क्या बात है चार्ल्स ? ये लोग क्यों हल्ला कर रहे हैं ?”

“चेट्टियार साहब चुनाव में हार गए हैं, इसलिए.....”

“हार गए हैं ?”

“जी हाँ.....मालकिन !”

“मई गुड हेवन्स ।”

श्रीमती रमा ने सिगरेट सुलगाई और हताश-सी इधर-उधर चक्कर काटने लगीं। उन्होंने श्री चेट्टियार के घर फोन किया, पर कोई जवाब न मिला। वे जब गुसलखाने में गईं तो श्रीमती अम्बिकादेवी की आवाज़ साफ़-साफ़ सुनाई देने लगी, “दुनिया बदल रही है, पर कई ऐसे भी शुतुर्ग हैं, जो इस बदलती दुनिया की आँधी को नहीं देखना चाहते हैं.....आँखें मूँद लेते हैं।” उनका इशारा श्रीमती रमा चौधरी की ओर था, और रमा चौधरी इशारा ताड़कर अन्दर-ही-अन्दर तिल-मिला रही थीं।

“राजनीति कोई चमत् नहीं है कि लोग तितली और भौंरों की तरह आएँ और उड़ने-उड़ाने का शौक पूरा करें। राजनीति एक साधन

है और इस साधन के वे ही अधिकारी होने चाहिए जो प्रजा की सेवा में अपनी कुरबानी के लिए तैयार हैं। यह न कोई दुकान है, न कारखाना कि पैसा लगाया और सूद खाते रहे। इन रमा चौधरी और चेट्टियार को आपने अच्छा सबक सिखाया है। आपको मुबारकबाद !” सभा में तालियाँ पिटने लगीं। श्रीमती रमा को लगा मानों कोई कोड़े मार रहा हो।

“आप लोगों का यह कर्तव्य है कि राजनीतिक क्षेत्रों से उन व्यक्तियों को हटा दें, जिन्होंने राजनीति को फ्रैशन समझ रखा है, जो ‘सामाजिक सेवा’ के नाम पर गुलछरें उड़ाते हैं, जो औहदों के लिए भूखे कुत्तों की तरह इधर-उधर तरसते फिरते हैं। आपका प्रतिनिधित्व करने का उसे ही अधिकार है जो आपके कष्ट-दुःखों को समझता हो, जो आपमें से एक हो। श्री अन्नामले आप लोगों के ही व्यक्ति हैं। मैं उनको बधाई देती हूँ।” सभा में तालियाँ बजने लगीं। श्रीमती रमा सह न सकीं। वे जल्दी-जल्दी नहाई-धोई और बाहर आकर टैक्सी में श्री चेट्टियार के घर चली गईं।

बैठक में वे काफी देर तक इन्तज़ार करती रहीं। अक्सर उनसे मिलने के लिए श्री चेट्टियार दरवाज़े पर उपस्थित रहा करते थे, पर आज दो-तीन बार खबर भिजवाने पर भी वे न आ रहे थे। एक बार उनको बताया गया कि श्री चेट्टियार खाना खा रहे हैं। दूसरी बार बताया गया कि आराम कर रहे हैं। तीसरी बार बताया गया कि उनका कमरा अन्दर से बन्द है।

श्रीमती रमा चिढ़ गईं। वे वापस जाने को ही थी कि श्री चेट्टियार की माँ उनको अन्दर एक कमरे में ले गईं।

“आपको शायद मालूम नहीं है कि हम यह नहीं चाहतीं कि वह राजनीति में रहे। बहुत समझाया, उसकी पत्नी ने ज़िद भी पकड़ी, पर उसने एक न सुनी। अब जो हुआ है सो आप जानती ही हैं। अब उसका अबल आ गई है... पर इस अबल के लिए, मालूम है उसको कितनी

कीमत देनी पड़ी ? पूरे सत्तर हजार । अब उसने कान पकड़ लिए हैं । आजकल की राजनीति उस जैसे के लिए नहीं है । आपने जो कुछ उसके लिए किया काफ़ी है, मेहरबानी होगी अगर आप उसे अपने रास्ते पर जाने दें । आप जब चाहें यहाँ आ सकती हैं, पर इस घर में न अब राजनीति पर ही कोई चर्चा होगी, न सामाजिक सेवा पर ही । आप अब जा सकती हैं ।” श्री चेट्टियार की माँ बड़े रौब से कमरे से चली गई । श्रीमती रमा कुछ न कह पाई । लहू का घूँट पीकर रह गई । लाल-पीली होती हुई बाहर चली गई ।

श्रीमती रमा सीधी श्री डगन के होटल में गई । वे अपने कमरे में थे । श्रीमती रमा के कमरे में घुसते ही उन्होंने कहा, “देखा, तुम्हारा घोड़ा हार गया है ?”

“हूँ-हूँ,” श्रीमती रमा तीखी नज़र से उनकी तरफ देखने लगीं ।

“चींटी के पर लग रहे थे । अबल बिगड़ गई थी इस चेट्टियार की । मन्त्री होने के ख्वाब देख रहा था । जो ज़िन्दगी में और कुछ नहीं बन पाता, वह मन्त्री बनने के सपने देखने लगता है, चार दिन की चाँदनी के लिए छटपटाने लगता है । पागल है । मैं कहे देता हूँ, इस देश को कोई नुकसान नहीं हुआ अगर चेट्टियार न चुने गए । आदमी को अपनी जगह मालूम होनी चाहिए । उछलते रहने से न ज़मीन के रहते हैं, न आसमान के ही बनते हैं ।”

“तुम उसकी हार पर खुश नज़र आते हो ?” श्रीमती रमा ने पूछा ।

“अफ़सोस, तुम्हारी सारी मेहनत बेकार गई । अगर किसीकी मदद ही करनी थी तो किसी अच्छे-भले की करनी थी, क्या इस भौदू को ही चुनना था ? तुमने चुना भी तो किसको चुना ?”

“क्या तुम्हें ईर्ष्या हो रही है ?”

“हूँ, ईर्ष्या ? उसकी हार पर ?” श्री डगन ने लम्बी साँस ली ।

“आज तुम्हारा मूड खराब नज़र आता है । मैं जा रही हूँ ।” कहती-

कहती श्रीमती रमा कमरे से बाहर चली गई । श्री डगन उनको न रोक पाए, न मना ही पाए ।

श्रीमती रमा श्रीमती कृष्णस्वामी के घर चली गई । श्री डगन ने दो-तीन बार फोन किया । दो बार तो श्रीमती रमा ने नाराजगी का बहाना किया, तीसरी बार हँस-हँसकर बातचीत की, शाम को मिलने का वायदा किया ।

चार बजे गवर्नर साहब लता के चित्रों की प्रदर्शनी देखने आ रहे थे । श्रीमती रमा ने खाना खाकर थोड़ी देर आराम किया । नौकर से अपने कपड़े मँगवाकर श्रीमती कृष्णस्वामी के यहाँ साज-शृङ्गार किया ।

प्रदर्शनी में वे श्री गवर्नर के साथ-ही-साथ चलती जाती थीं, उनके पीछे-पीछे अब्राहम और लता थे । श्री डगन भी उपस्थित थे ।

पाँच-छः बजे के करीब श्रीमती रमा चौधरी अब्राहम की कार में क्लब चली गईं । अब्राहम से बहुत देर तक बातचीत होती रही । फिर उनके साथ वे सिनेमा गईं ।

श्रीमती रमा घर जाने से घबरा रही थीं—कहीं ऐसा न हो कि श्रीमती अम्बिकादेवी की टोली अब भी शोर-शराबा कर रही हो ।

एक बजे श्री अब्राहम उनको घर छोड़ आए । श्री चौधरी सो चुके थे । आस-पास कहीं शोर-शराबा न था । श्रीमती रमा चौधरी का मन शान्त हुआ ।

: १६ :

जब से श्रीमती रमा चौधरी के पिता वगैरह उनके घर में रह रहे थे, तब से श्री चौधरी का मन उचाट-सा रहता । वे उद्विग्न रहते । उनके प्रति वे उदासीन तो थे ही, बातचीत तक उनसे न करते । परन्तु उनके हाव-भाव से, चेहरे से यह प्रतीत नहीं होता था कि उनका वहाँ रहना उन्हें कतई नापसन्द था । उनकी पत्नी भी अक्सर उनसे पहले की अपेक्षा अधिक हिल-मिलकर बातें करतीं । अगर वे उनके बारे

में कुछ कहना भी चाहते तो रमा चौधरी कहने का भी मौका न देती थी ।

इसलिए श्री चौधरी अक्सर अपना समय घर से बाहर ही व्यतीत करते । एक बार राव के साथ पाण्डीचेरी भी हो आए थे । दो-तीन बार सिनेमा भी देखा था । क्लब में घंटों बैठे रहते । राव के साथ शाम को समुद्र-तट पर मटरगस्ती करते । वे घर में आराम से रह नहीं पाते थे ।

आज रविवार का दिन था । श्रीमती रमा के पिता गिरजे से वापस आ चुके थे । घर में कुछ चहल-पहल थी । श्री चौधरी ऊपरली मंजिल पर कोई किताब पढ़ रहे थे । उनकी पत्नी उनके पास कॉफ़ी बना रही थीं । श्री चौधरी की जिन्दगी में कम ही ऐसे अवसर आते थे जब उनकी पत्नी स्वयं कॉफ़ी बनाकर देती थी । फिर भी वे कुछ खिन्ने हुए-से लगते थे । अनमने-से, पुस्तक पढ़ते जाते थे ।

“तुम्हारे पिताजी यहाँ कब तक रहेंगे ?” श्री चौधरी ने अपनी पत्नी से पूछा ।

“क्यों, तुम्हारे पिताजी के आने का इरादा है क्या ?”

“हूँ,” श्री चौधरी कुछ सोचते हुए-से चुप बैठ गए । वे अपनी छोटी-सी मूँछों को मरोड़ते जाते थे । सोचते वक्त मूँछें मरोड़ने की उनकी आदत थी । जब से वे मद्रास आये थे, उन्होंने पिताजी को एक बार चिट्ठी भी न लिखी थी । विवश थे, किस मुँह से लिखते ? पत्नी को ले जाने के लिए आये थे, मगर स्वयं उसके आकर्षण के दलदल में फँस गए थे ।

“रमा, तुम गाँव क्यों नहीं चलती हो ?”

“क्या आप गाँव मे रह सकेंगे ?”

“हूँ, जब रहना पड़ेगा तो रहेंगे ही । आखिर यहाँ काम-धाम भी क्या है ?”

“वहाँ भी क्या है ?”

“कम-से-कम फिजूल का खर्च तो नहीं है ।”

“पर मर्तबान में वन्द होकर जीना भी कोई जीना है । गाँव मर्त-

बान ही तो है। दो दिन की जिन्दगी है और आप गाँव में घूट-घुटकर काटने के लिए कहते हैं।”

“पर तुम तो लोगों का उपकार करने चली हो।”

“पर लोगों का उपकार करने के लिए यह जरूरी नहीं है कि कोई अपना अपकार करे।”

“हूँ, और अगर शहर में न रह सकी तो……तुम असलियत जानती हो। कब तक कर्ज मिलता रहेगा? जो कुछ पास था या तो बिक-बिका गया है, नहीं तो गिरवी पर है। न जाने यह मकान भी कब नीलाम हो जाय। मैं नहीं चाहता कि तुमसे ऐसी बातें करूँ……पर……।”

“आपको रविवार का सबेरा ही मिला ऐसी बातें करने के लिए?”

“हूँ,” श्री चौधरी ने बाहर की ओर देखते हुए कॉफी का एक घूँट निगला।

“मैं कहे देती हूँ, मैं गाँव हरगिज़ न जाऊँगी। ये आदमी भी कैसे खुदगर्ज होते हैं। कभी आपने सोचा कि आपके पिता, जो मुझसे बात-चीत करने में अपनी तौहीन समझते थे, मुझे अपने घर में आराम से रहने देंगे? आप अपनी बात सोच रहे हैं, मेरी बात भी सोची?”

“यानी तुमने मद्रास में रहने का ही निश्चय कर लिया है। मगर कैसे?”

“वैसे ही, जैसे इतने दिनों तक यहाँ रहती आई हूँ।”

“अच्छी तरह सोच लो।”

“अच्छा……अब आप धमकी भी देने लगे हैं। क्यों न देंगे? राव की सोहबत में जो हैं, किसी ओर पर नज़र लग गई होगी। मैं मुरझा गई हूँ शायद, फूल की कीमत तभी तक है जब तक वह महकता है।”

“क्या ऊटपटाँग बातें कर रही हो?”

“मेरी बातें अब आपको ऊटपटाँग ही लगेंगी।” श्रीमती रमा नाक-भौं चढ़ाती हुई अपने कमरे में चली गई। श्री चौधरी मूँछें मरोड़ते जाते थे। उन्होंने न पत्नी को बुलाया, न मनाने की ही कोशिश

की। पहले की तरह पुस्तक पढ़ने का उपक्रम करने लगे।

इतने में राव साहब की कार फाटक में से आती हुई दिखाई दी। दोनों ने आज एन्नोर जाने का कार्यक्रम बना रखा था। राव साहब भी रविवार के दिन कोई काम न करते थे। अक्सर सवेरे-सवेरे समुद्र-स्नान के लिए निकल जाते थे। समुद्र के किनारे ही खाना खा लिया करते थे। वे रसिक, सन्तुष्ट-जीवी थे। उनके लिए जीना न व्यापार था, न दण्ड ही।

जल्दी-जल्दी अपना अंगोछा उठाकर दो-चार मिनट में श्री चौधरी राव साहब की कार में बैठ गए। दोनों एक-दूसरे को देखकर मुस्कराये। श्री चौधरी ने चार्ल्स को बुलाकर कहा, “आज मैं भोजन के लिए नहीं आऊंगा, मालकिन से कह देना।”

जब कार मद्रास के भीड़-भड़के से बाहर गई तो श्री राव ने पूछा, “आज कहो, क्या किया जाय?”

“पहले एन्नोर तो पहुँचें।”

“नहीं, मेरा मतलब शाम को.....”

“तुम्हीं बताओ.....”

“पिक्चर चला जाय?”

“शाम को देखा जायगा।”

“तुम आज भूली-भूली बातें क्यों कर रहे हो? चिमटे बजे हैं क्या?”

“चिमटे बज जाते तो अच्छा होता। यहाँ तो हमेशा घुटन बनी रहती है, बादल घिरे रहते हैं, बिजली तड़कती है पर बरसता नहीं, बरस जाय तो मौसम माफ़ हो।”

“क्यों, आज सवेरे किसी कवि को पढ़ रहे थे?”

“नहीं तो, यार तुमसे भी क्या छिपाऊँ और कब तक छिपाऊँ? मैं अपनी पत्नी से कई दिन से कह रहा हूँ कि गाँव चले चलें। पिता-जी ज़िद पर हैं कि हम गाँव में ही रहें। वे नाराज़ हैं और ये जाने के लिए तैयार नहीं।”

“शहर की वाहियात हवा ही कुछ ऐसी है। मेरा बस चले तो मैं गाँव में ही रहूँ। मगर कैसे ? उसी गाँव में, जहाँ शेर बनकर रहे हो बकरा होकर कैसे रहा जाय ?”

“जमींदारी रद्द हो जाने के बाद भला हम लोगों को पूछता कौन है ?”

“पर हमें शहर में भी कौन पूछता है ? यहाँ भी हम कौनसे शेर बने हुए हैं ! फिर फ़िज़ूल का अन्धाधुन्ध खर्च ।”

“अरे, आज कही तुमने अक्ल की बात। मैं तुमसे एकदम सहमत हूँ। बिना काम के शहर में रहना फ़िज़ूल है।”

कार एन्नोर पहुँच गई थी। दोनों ने कपड़े बदल लिए। क्लब के चपरासी ने राव साहब की मोटर बोट तैयार कर दी थी। दोनों उसमें जा बैठे और खुले समुद्र में निकल पड़े।

“क्या तुम्हें मालूम है कि आकाश में और समुद्र पर आदमी में एक ही तरह की प्रतिक्रिया होती है ? ऊपर आकाश विशाल है और समुद्र भी विशाल है। विशालता के वक्षःस्थल पर आदमी अपनी क्षुद्रता को पहचानता है, उसमें एक प्रकार की शैशव-मुलभ निरभिमान की भावना आ जाती है। वह निर्बन्ध हो प्रफुल्ल हो उठता है। इसीलिए मैं उड़ना उतना पसन्द करता हूँ जितना कि मोटर बोट चलाना।” श्री राव कह रहे थे।

उनका बचपन उनके मामा के यहाँ कटा था, जिनको हवाई जहाज़ का बहुत शौक था। बचपन में ही काफी उड़ चुके थे। अब भी जब कभी मौका मिलता था वे हवाई जहाज़ में उड़ते थे, यद्यपि उनकी माँ को यह पसन्द नहीं था, क्योंकि उनके भाई की मृत्यु हवाई जहाज़ की दुर्घटना में हुई थी।

“ठीक कहते हो.....समुद्र पर ऐसा लगता है जैसे मुझे पृथ्वी पर किसीने जकड़ रखा हो और मैं छुड़ाकर भागा जा रहा हूँ।” श्री चौधरी ने कहा।

समुद्र में काफी दूर जाकर श्री राव ने मोटर बोट का इञ्जन थाम दिया और समुद्र के पानी में थप-थप करने लगे। दूरी पर कोई जहाज जा रहा था। श्री चौधरी उसे देखने में मस्त थे।

सूर्य चढ़ता जाता था। गरमी भी बढ़ती जाती थी। गप्पें लगाते-लगाते वे काफी देर तक समुद्र में ही रहे। जब भूख सताने लगी तो वहीं खाया-पिया। दो बजे के करीब फिर वे बोट क्लब वापस चले आये।

बोट क्लब में नहा-धोकर वे आराम से बैठ गए। “हाँ भाई, तुमने बताया नहीं कि शाम को क्या किया जाय ?”

“जैसी तुम्हारी मर्जी वैसा करो। मेरी इच्छा हो रही है कि चित्रों की प्रदर्शनी देख आऊँ।”

“किसके चित्रों की ?”

“कोई रमा की जान-पहचान की है...लता।”

“अरे वाह, वही लड़की जो अब्राहम के साथ फिरती रहती है ? वह चित्र बनाना भी जानती है ? किसी गरीब चित्रकार ने चित्र बना दिए होंगे और श्रेय इसको मिल रहा है। यह समाज भी खूब है, जहाँ पाँच-दस बड़े-बड़े वेवकूफों ने वाह-वाह की नहीं कि और सब भी देखा-देखी तालियाँ बजाने लगते हैं।”

“सुना है गवर्नर साहब ने प्रदर्शनी का उद्घाटन किया है ?”

“गवर्नर साहब क्या कोई कला के पारखी हैं ? यार तुम भी यों ही कह रहे हो। इन आलतू-फालतू प्रदर्शनियों में रखा ही क्या है ? सिर्फ इश्तहारबाजी है। देखो तो अच्छे चित्र देखो।”

“क्या तुमने इनके चित्र देखे हैं ?”

“एक-दो नमूने अखबार में छपे थे। किसी काम के नहीं थे, अखबार वाले भी खूब है, जहाँ गवर्नर ने दो-चार शब्द कहे कि वह समाचार हो जाता है। यह अब्राहम की चालबाजी रही होगी। बड़ा चलता-पुर्जा आदमी है। बुढ़ापे में भी जवानों को मात करता है।

तुम्हारी पत्नी ने कभी उसके बारे में नहीं बताया ? वे तो उन्हें खूब जानती हैं ।”

श्री चौधरी को संकेत शायद तुरन्त समझ में नहीं आया, और जब आया तो उन्होंने मुँह फेर लिया । फिर संभलकर कहा, “शायद गवर्नर का परिचय चाहता होगा । रमा उन्हें अच्छी तरह जानती हैं ।” चौधरी साहब ने कह तो दिया, पर उनके मन में पुराना सन्देह फिर बीधने लगा ।

“खैर, शाम को पक्कर चलेंगे ।”

“अच्छा ऐमे ही सही, अब चलें ।”

वे दोनों कार में बैठे ही थे कि क्लब के चपरामी ने आकर कहा, “मर, मर, दो-तीन दिन पहले डगन साहब आये थे । आप उन्हें जानते हैं न ?”

“हाँ-हाँ,” श्री राव ने कहा ।

“उनके साथ एक स्त्री भी आई थीं । लम्बे कद, कुछ सांवला रंग, कटे बाल । मैं नाम तो नहीं जानता हूँ । वे यहाँ ये तौलिया और जांघिया जल्दी में छोड़ गए थे । आप क्या मेहरबानी करके इन्हें उनके पाम पहुँचवा सकेंगे ?” उसने श्री चौधरी के हाथ में दोनों थमा दिए ।

तौलिया देखते ही श्री चौधरी का दिल थम-सा गया । तौलिया के एक कोने पर ‘आर’ लिखा हुआ था । धोबी का निशान भी वे पहचान गए । तौलिया उनकी पत्नी की थी । यकायक उन्होंने सारी-की-सारी घटना का अनुमान लगा लिया और पत्थर की तरह स्थिर हो बैठ गए । उनका मन ज्वालामुखी हो रहा था । वे मूँछें मरोड़ रहे थे ।

“अच्छा तो पहले डगन के यहाँ चलें । यह भी अब्राहम का बूँदरा भाई लगता है । क्या बिगड़ा हुआ शरूस है !”

चौधरी साहब कुछ न बोले । वे एक क्रुद्ध शेर की तरह अपने दाँव-पैतरे सोचते जा रहे थे ।

“तुम इसे जानते हो न ?”

“हूँ,” श्री चौधरी के मुँह से और कुछ न निकला । श्री राव ने दो-चार और प्रश्न पूछे, पर श्री चौधरी ने कोई जवाब न दिया । उनका मन कहीं और था ।

श्री राव को भी सन्देह हो गया । वे भी उनकी पत्नी के बारे में कई दिनों से उनको चेतावनी देने की सोच रहे थे, पर दे नहीं पाते थे । हर कोई श्रीमती रमा के कारनामों के बारे में उनसे कहता । यह सोचते कि वे श्री चौधरी को बता देंगे, पर ये बताते तो कैसे बताते ? यह श्री चौधरी की निजी बात थी । दखल देना वे उचित न समझते थे, पर अब उन्हें कहने का अच्छा मौका मिला ।

“अच्छा है यार, तुम गाँव ही चले जाओ ।” राव ने कहा । पर श्री चौधरी ने कुछ न कहा ।

“सोचता हूँ तुमसे कैसे कहूँ ? पर कहे बगैर भी कैसे रहूँ ? कहता हूँ तो एक गुनाह, नहीं कहता हूँ तो एक और गुनाह । शायद कहना मेरा कर्तव्य है ।” श्री राव ने कहा ।

“कहो, क्या बात है ?”

“तुम्हारी पत्नी आजकल बड़ी बदनाम हो रही हैं । क्लब में सब कोई उन्हीं के बारे में कानाफूसी करते हैं । और क्या बताऊँ ?”

“तुमने पहले क्यों नहीं बताया ?”

“कैसे बताता ?”

“क्या क्लब में सब जानते हैं ?”

“सिवाय तुम्हारे शायद सभी जानते हैं । मामला खतम हो । गाँव ले जाओ ।”

कार श्री डगन के होटल के सामने रुकी । राव जाँघिया लेकर अन्दर गये । साथ श्री चौधरी भी थे । नौकर ने उन दोनों को श्री डगन के कमरे में पहुँचा दिया । श्री डगन वहाँ न थे । नौकरों से मालूम हुआ कि वे किसी और कमरे में थे । वे दोनों होटल के बरामदे में घूमने लगे ।

थोड़ी देर में श्री चौधरी और श्री राव ने श्री डगन को अपने निजी कमरे में से निकलते देखा। उनके साथ श्रीमती रमा चौधरी भी मुस्कराती आ रही थीं।

श्री चौधरी उनको देखते ही यकायक हैरान हो खड़े हो गए। उनकी तरफ घूर-घूरकर देखने लगे। बहुत संयम के बावजूद भी अन्दर के तूफान का भास चेहरे पर हो रहा था। श्रीमती रमा उनको देखते ही यकायक लड़खड़ाई, उनको लकवा-सा मार गया।

अब श्री चौधरी को सबूत की जरूरत न थी। वे तुरन्त बाहर चले गए। राव भी उनके साथ थे।

“घर चलो” श्री चौधरी ने राव से कहा।

वे अब श्री चौधरी का साथ न छोड़ना चाहते थे। उन्हें किसी विस्फोट की आशंका होने लगी थी। वे उनको समझाते भी तो क्या समझाते ?

: १७ :

“तुम जाओ भाई.....बाद में मिलेगे।” राव को कहकर श्री चौधरी जल्दी-जल्दी घर के अन्दर चले गए।

श्री राव को डर था कि जल्दबाजी में शायद चौधरी कोई खतरनाक काम न कर बैठे। पर उस हालत में वे श्री चौधरी के चेहरे को ठीक देख भी न पाते थे, उन्हें समझाने-बुझाने की बात तो अलग।

श्री राव ने चार्ल्स को बुलाकर कहा, “मालिक की तबियत खराब है। ज़रा सँभलकर रहना। अगर जरूरत हो तो मुझे फोन कर देना। समझे।” वे चले गए।

श्री चौधरी सीधे अपने कमरे में गये। अपनी पिस्तौल निकाली और वहीं से टैंकसी के लिए फोन कर दिया। वे पिस्तौल की नली साफ करने लगे। अब भी उनकी हरकत से ऐसा लगता था जैसे वे कोई रोज-मर्रा का काम कर रहे हों।

टैक्सी आई और वे सीधे डगन के होटल में पहुँचे । वहाँ राव पहले ही उपस्थित थे । जिस खतरे का उन्होंने अनुमान लगाया था, वह ठीक ही निकला ।

श्री चौधरी नाप-तोलकर होटल में पैर रखते जाते थे । पेंट की जेब में उनका हाथ पिस्तौल पर था । श्री राव भी उनकी बगल में चलते जाते थे । एक बार श्री चौधरी ने राव से कहा भी, “जाम्रो भी, कुछ नहीं है । अभी आ जाऊँगा । क्लब में मिलूँगा ।”

“कोई बात नहीं, मुझे भी कोई खास काम नहीं है । दोनों साथ चलेंगे ।” श्री राव ने उनका पीछा न छोड़ा ।

श्री चौधरी सीधे उस कमरे की ओर गये जहाँ उनको उनकी पत्नी और डगन एक साथ दिखाई दिए थे । उनकी पत्नी वहाँ न थी, और श्री डगन सिर झुकाकर अपने कमरे में काम कर रहे थे ।

श्री चौधरी ने झटके के साथ दरवाजा खोला । श्री डगन को अकेला पा उन्होंने जेब से पिस्तौल निकाली । श्री राव ने उनका हाथ पकड़ लिया । श्री चौधरी ने अपना हाथ छुड़ाना चाहा । दोनों में मुठभेड़ हो गई । जैसे-तैसे श्री चौधरी ने डगन की तरफ पिस्तौल कर गोली दाग दी । श्री राव के उनका हाथ खींचने के कारण निशाना चूक गया । श्री डगन की कनपटी को छूती हुई गोली दीवार पर लगी । एक बार और श्री चौधरी ने गोली मारी, पर राव के कारण वह भी श्री डगन के पैरों के पास लगी ।

श्री राव ने डगन को वहाँ से भाग जाने का इशारा किया । वे वहाँ से तुरन्त भाग निकले । उनके नौकर-चाकर, जो गोली की आवाज़ सुनकर वहाँ एकत्रित हो गए थे, उनको घेरे हुए भाग रहे थे ।

श्री चौधरी ने उनका पीछा किया, पर श्री राव ने उनके हाथ से पिस्तौल छीन ली, उनको आगे बढ़ने से रोक दिया और पकड़कर कार में ले गए । इतना सब-कुछ हो गया था, पर श्री चौधरी के मुख से एक शब्द भी न निकला था ।

कार में ले जाकर श्री चौधरी को उन्होंने बिठा दिया। वे अब भी होटल की ओर देख रहे थे। “मुझे घर ले चलो,” श्री चौधरी ने कहा।

“क्या पागलपन सवार हुआ है तुम्हें ? चलो जहाँ ले चलूँ, वहाँ चलना।” श्री राव ने ज़रा गुस्से की आवाज़ में कहा। श्री चौधरी का खयाल था कि उनकी पत्नी घर पहुँच गई होगी और वहाँ उनसे निपट लेंगे। यह श्री राव जानते थे। वे सीधे उन्हें क्लब ले गए।

पाँच-छः दोस्तों के बीच श्री चौधरी को बिठा दिया। एक रिक्तेदार से कह भी दिया कि ज़रा उन पर नज़र रखें, कहीं इधर-उधर न जाने दें। श्री चौधरी कुर्सी पर बैठे मँछें मरोड़ रहे थे। उनके सामने सिगरेट का टिन और शिकंजवी रख दी गई थी।

श्री राव ने क्लब के फोन वाले कमरे में जाकर श्री डगन को फोन किया।

“आपकी खैरियत इसीमें है कि आप तुरन्त मद्रास छोड़कर कहीं चले जायें।” श्री राव ने डगन से फोन पर कहा।

“पर इसका मुझे क्या पता है कि यह आदमी जहाँ भी मैं जाऊँ वहाँ पीछा न करेगा ?” श्री डगन ने पूछा।

“मैं यकीन दिलाता हूँ कि ऐसा कुछ न होगा। पुलिस को इतिला देना आपके लिए भी फ़ायदे की बात नहीं है।”

“तब मैं क्या करूँ ?”

“गलती तो आपकी है, गनीमत है कि आप सही-सलामत हैं। भगवान् को धन्यवाद दीजिए।”

“अपनी औरत को ही काबू में जो रख लिया होता उसने ?”

“खैर, वह दूसरी बात है। अब जो हो गया सो हो गया। आप पुलिस को हरगिज़ न बताइए। अभी राव के हवाई जहाज़ में चले जाइए, मुझे घर फोन कर देना।”

“हूँ,” श्री डगन और श्री राव ने लगभग एक ही साथ फोन रख दिया।

श्री डगन ने जब ठण्डे दिमाग से सोचना शुरू किया तो वे भी बदनामी से बचने की कोशिश करने लगे । अगर पुलिस को इतिला देते तो तहकीकात होती, मुकद्देबाजी चलती, उनकी पोल खुलती और उनका परिवार भी एक दीमक खाये हुए लक्कड़ की तरह गिर जाता । पुलिस को सूचना न देना ही उन्होंने अच्छा समझा । तुरन्त घर जाकर जाने की तैयारी करने लगे । वे जहाँ भी जाते अपने पाँच-दस नौकरों को साथ ले जाते । वे डर के मारे पीले हो रहे थे । बुरी हालत थी । उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी कि घटनाएँ इस तरह करवट लेंगी ।

श्री राव ने श्री चौधरी के घर फोन किया । श्रीमती रमा वहाँ न थीं । उन्होंने फिर श्री चौधरी के पिता को ट्रंक कॉल किया । कनेक्शन मिलने में देरी हो गई, इसलिए वे चौधरी के पास आकर बैठ गए । श्री चौधरी ऐसी मुद्रा में बैठे हुए थे कि उनसे बात करना भी आसान न था । श्री राव पत्रिकाओं के पृष्ठ पलटने लगे ।

“अरे, शिकञ्जवी पिओ न ?” श्री राव ने कहा ।

“हूँ ।”

“पिओ भी,.....जो हो गया सो हो गया । हटाओ ।”

श्री चौधरी बिना शिकञ्जवी पिये सिगरेट-पर-सिगरेट पीते जाते थे । उनके हाथ अब भी पैट की जेब में थे और काँपते-से लगते थे । जब हाथ पैट की जेब से निकलते तो वे रह-रहकर मूँछ भी मरोड़ते जाते थे ।

श्री राव ने फिर उनका ध्यान बटाना चाहा । कई प्रश्न पूछे, पर श्री चौधरी चुप बैठे रहे—निरुत्तर ।

श्री राव ने फिर जाकर श्री चौधरी के घर फोन किया, पर श्रीमती रमा चौधरी तब भी वहाँ न थीं । श्री राव ने फोन रखा ही था कि क्लब का फोन बजा ।

“श्री चौधरी हैं क्या वहाँ ?” किसीकी गुराँती हुई आवाज पूछ रही थी ।

“कौन बोल रहे हैं ?” श्री राव ने पूछा ।

“मैं.....पुलिस कमिश्नर ।”

“क्यों भाई अनन्तशयनं (पुलिस कमिश्नर का नाम), क्या बात है ?”

श्री राव का अनन्तशयनं से अच्छा परिचय था । लेन-देन भी रहता था । जब वे श्री राव के ज़िले में डी० एस० पी० थे । उन्होंने वे दिन देखे थे जिनकी याद करके वे आज भी पुलकित हो उठते हैं । वे दोनों एक ही क्लब के सदस्य भी थे ।

“तुम्हीं बताओ, क्या चौधरी नहीं हैं वहाँ ?”

“हैं तो । क्यों ?”

“यहाँ उनकी पत्नी आई हुई हैं । बुरी तरह घबराई हुई है । पुलिस की मदद चाहती हैं । चौधरी का दिमाग तो खराब नहीं हो गया है ?”

“क्यों, कुछ नहीं । फिर भी क्या बात है ?”

“मैंने श्री डगन के होटल को फोन करके देखा । गनीमत कि वहाँ कुछ नहीं हुआ । श्री डगन शिकायत भी नहीं करना चाहते, नहीं तो अच्छी आफ़त आ गई होती ।”

“तुमने यह बात उनकी पत्नी से कही कि नहीं ?”

“कही है, पर वे बुरी तरह घबरा रही हैं । उन्हें कुछ सूझ नहीं रहा है । मैं सोच रहा हूँ कि दो-चार सिपाही उनकी मदद के लिए मफ़टी में भेज दूँ ।”

“मैं नहीं समझता कि इसकी कोई ज़रूरत है । सब ठीक हो जायगा । पर तुम ज़रा इतना करना कि अखबार वालों को इसकी बू न लगने देना । खामखाह शोर होगा ।”

“अच्छा मैं देख लूँगा । श्रीमती रमा चौधरी की रखवाली तुम्हारे जिम्मे रही ।”

“तुम ज़रा उन्हें फोन पर बुला दो ।”

“वे हिचकिचा रही हैं ।”

“कहो कि चौधरी नहीं, मैं बात कर रहा हूँ । वे सोच रही होंगी

कि तुम चौधरी से बात कर रहे थे।”

“मैं राव बोल रहा हूँ।” श्री राव ने फोन पर श्रीमती रमा से कहा।

“हैं.....क्या है ? अब क्या करना चाहते हैं आप ?”

“आपका इसीमें भला है कि आप तुरन्त अपने माँ-बाप के साथ बंगलौर चली जायें। आपको काफ़ी लोग जानते-पहचानते हैं, फालतू बदनामी होगी।”

“और वह वहाँ भी आ गए तो.....?”

“आप भी क्या सोच रही हैं ? जहाँ तक मैं जानता हूँ, चौधरी अब आपके साथ किसी हालत में भी न रहेगा। आप ज़िन्दा हैं यह काफ़ी है, वरना आप अब तक उसकी गोली की शिकार हो चुकी होतीं।”

उत्तर में श्री राव को श्रीमती रमा का सिसकना सुनाई दिया।

“अब आपका घरबार वरबाद हो ही गया है। ज़िन्दगी से भी क्यों हाथ धोती हैं ?”

“क्यों, श्री डगन को कहीं गोली तो नहीं लगी ?”

“नहीं, वे सही-सलामत हैं। आप भी चली जाइए। अभी गाड़ी में वक्त है। चौधरी मेरे पास है, और आज मेरे घर ही रहेगा। आप अपने घर जाकर अपना सामान वगैरह ले जा सकती हैं।” श्री राव ने फोन रख दिया।

जब श्रीमती रमा चौधरी ने अपने पति को होटल से जाते हुए देखा तो उन्होंने अनुमान लगा लिया था कि क्या होगा। टैक्सी में जाते-जाते उन्हें सूझा कि क्यों न पुलिस में इत्तिला दी जाय और अपनी और श्री डगन की जान बचाई जाय। पर रास्ते में टैक्सी बिगड़ गई। जब दूसरी टैक्सी लेकर वे पुलिस कमिश्नर के पास पहुँची तब तक सब-कुछ हो चुका था।

श्री राव ट्रंक कॉल का इन्तज़ार करते-करते बरामदे में इधर-उधर घूमने लगे। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि कुछ भी हो,

श्री चौधरी को इस आफत से बचाना ही होगा। वे यह भी जानते थे कि कोई भी स्वाभिमानी व्यक्ति वही करता जो श्री चौधरी ने किया था। उसको बहुत दिनों बाद पता लगा कि उसकी पत्नी कोई पतिव्रता नहीं है। अगर वह उससे शादी न करता तो सम्भव था कि बंगलौर के किसी चकले में वह अपनी जिन्दगी बसर कर रही होती। ऐसी औरत के लिए किसीका अपनी जिन्दगी तबाह कर लेना एकदम बेवकूफी है। चौधरी की जिन्दगी अब भी बहुत-कुछ बरबाद हो ही चुकी थी। वह कम-से-कम अब तो आराम से जी सकेगा। दूसरी शादी भी हो सकती है। श्री राव सोच रहे थे। उनको ट्रंकॉल का कनेक्शन मिल गया। श्री चौधरी के पिता से उन्होंने सारी बात कही और तुरन्त मद्रास आने की सलाह दी।

श्री राव ने तब श्री चौधरी को कार में बिठाया और समुद्र-तट की ओर ले गए। कार में वे दोनों ही थे। श्री चौधरी अब भा चुप थे।

“आखिर मारने से क्या फायदा ? पकड़े गए तो फालतू फाँसी या जेल।”

“जीने से भी क्या फायदा ?”

“क्या फालतू बकवास कर रहे हो ?”

“मैंने न जाने इस औरत के लिए क्या-क्या किया—माँ-बाप से किनारा किया, रुपया पानी की तरह बहाया, जो कुछ इसने कहा, किया और उसका नतीजा यह ?”

“यह तो तुम्हारी गलती थी कि तुमने उससे शादी की। वह शादी से पहले भी बदनाम थी।”

“शादी के बाद बिगड़ी लड़कियाँ भी सुधर जाती हैं।”

“कई सुधरती भी नहीं। कुछ मेरी भी गलती है। अगर मैं तुम्हें पहले ही इसके कारनामों के बारे में बता देता तो बात इतनी दूर तक न जाती। कुल्टा है तो छोड़ दो, मारने से क्या फायदा ? मैं जानता हूँ

कि आदमी को ऐसी हालत में मारने की ही सूझती है। पर वह अक्ल-मन्दी नहीं है।”

“बदनामी जो होगी।”

“बदनामी जो होनी थी सो पहले ही हो चुकी है, तुम्हें मालूम सिर्फ अब हुआ है। मारना-वारना सब बेवकूफी है, फिर ऐसी औरत को मारना तो गोली खराब करना है।”

कार बहुत दूर जा चुकी थी। आस-पास कोई न था। कार आगे चलती जाती थी। श्री चौधरा को ऐसे लगा जैसे उनका कोई दर्द दूर हो रहा हो।

“छोड़ दो इसे। इतने दिन इसके साथ रहे, यही आश्चर्य की बात है। मुसीबत टली, अब तो कम-से-कम चैन की जिन्दगी बसर करो।” श्री राव ने कहा।

“पर माँ-बाप के पास किस मुँह से जाऊँ?”

“कोई बात नहीं, सब ठीक हो जायगा। जो हो गया सो हो गया। हमारे घर में ही ठहरो। मैंने सब प्रबन्ध कर दिया है।”

श्री चौधरी यकायक राव के कंधे पर सिर रख हिचकियाँ भर-भर कर सिसकने लगे।

: १८ :

श्रीमती रमा घबराती हुई पुलिस कमिश्नर के यहाँ से श्री डगन के होटल गई। उनका हृदय धौंकनी हो रहा था। वे सोच नहीं पा रही थीं कि क्या किया जाय। उन्होंने कल्पना भी न की थी कि घटनाओं का क्रम ऐसा होगा।

वे श्री डगन के कमरे में गईं। श्री डगन वहाँ न थे। नौकरों ने बताया कि वे घर जा चुके थे। तब टैक्सी में वे श्री डगन के घर की ओर चलीं।

श्री चौधरी से तो उनका सम्बन्ध खतम हो गया था। वे श्री डगन

के साथ ही कहीं चली जाना चाहती थीं। जिन्दगी का सवाल था। बंगलौर की जिस गन्दगी से वे आई थीं उस गन्दगी में वापस न जाना चाहती थीं, भले ही ब्राज़ील जाना पड़ जाय।

जहाँ तक श्री चौधरी का सम्बन्ध था, श्रीमती रमा को अब आशा न थी। डगन से वे बहुत उम्मीदें बाँधे हुई थीं, जिसके लिए उन्होंने अपना घर तबाह किया। श्रीमती रमा सोच रही थीं—कम-से-कम आपत्ति के समय तो सहायता करेगा ही। यह उनके प्रेम की परीक्षा थी और श्रीमती रमा के जीवन में एक विकट घड़ी।

टैक्सी श्री डगन के घर पहुँची। बरामदे में पाँच-दस नौकर बैठे हुए थे। सामान बाँधकर बरामदे में रख दिया गया था। कार तैयार खड़ी थी। श्रीमती रमा कुछ चौंकी।

वे घर के अन्दर गईं। किसीने कुछ न पूछा। नौकरों से उन्होंने मालूम किया कि श्री डगन ऊपरी मंज़िल पर हैं। मकान परिचित न था। उनको यह भी सन्देह था कि श्री डगन के अतिरिक्त उनके परिवार का और भी कोई व्यक्ति उनके साथ हो।

उन्होंने एक परिचित नौकर को बुलाकर कहा, “श्री डगन को खबर दो कि मैं आई हुई हूँ।” नौकर के वापस आने तक वे इन्तज़ार नहीं कर सकीं। उसके पीछे-पीछे ही सीढ़ियाँ चढ़ने लगीं। वे जब ऊपर श्री डगन के कमरे के सामने वाले दरवाज़े पर पहुँचीं कि श्री डगन ने उनको देखकर नज़र फेर ली।

वे कमरे के अन्दर घुसीं। श्री डगन का हाथ पकड़कर कहा, “मुझे बहुत ख़ुशी है कि तुम्हें कोई चोट नहीं लगी है।” हाथ और छाती सहलाने लगीं।

श्री डगन चुप थे।

“कहाँ जा रहे हो ? बम्बई ?”

श्री डगन चुप रहे।

“बोलते क्यों नहीं हो ? यह सब मेरे ही कारण हुआ है। मुझे

पहले ही उन्हें छोड़ देना चाहिए था ।”

श्री डगन चुप रहे ।

“अब मेरा क्या होगा ? तुम्हीं बताओ डार्लिंग ! मुझे साथ नहीं ले चलोगे ?” श्रीमती रमा गिड़गिड़ाने लगीं ।

“मैं इस समय काम में लगा हुआ हूँ । आप जा सकती हैं ।” श्री डगन ने ऐसी आवाज़ में कहा जैसे कोई अवाञ्छित दर्शक मुलाकात के लिए आ गया हो ।

“मैंने तुम्हारे लिए अपना घरबार बरबाद किया ।” श्रीमती रमा फूट पड़ी थीं । वे रोती जाती थीं, “आदमियों की जाति ही ऐसी बेहया है । किस औरत ने अपना दिल देकर अच्छे दिन देखे हैं ? मेरे प्रेम का यही नतीजा था……बेवफ़ा ।”

“तुम जा सकती हो,” श्री डगन ने और रौब से कहा ।

“मैं जाती हूँ, पर देखना पीछा नहीं छोड़ूंगी ।” श्रीमती रमा फूट-फूटकर रोती जाती थीं ।

“जाओ यहाँ से ।”

श्रीमती रमा फिर अपनी टैक्सी में जा बैठीं—अपमानित, पीड़ित, निराश, क्रुद्ध । घर की तरफ़ चलीं । वे लगातार रोती जाती थीं, रूमाल से आँसू पोंछती जाती थीं ।

जब वे अपने बंगले के फाटक के पास पहुँचीं तो कार का हार्न बजवाकर चार्ल्स को बुलवाया और पूछा, “मालिक तो नहीं आये हैं ?”

“नहीं, मालकिन !”

तब श्रीमती रमा घर के अन्दर गईं । उनके पिता बैठक में ही उनका इन्तज़ार कर रहे थे । श्रीमती रमा को रोता देख उन्होंने कहा, “बेटी, क्यों रोती हो ?” वे समझ रहे थे कि शायद चौधरी के कारण वे रो रही थीं । उन्हें सारा मामला ठीक मालूम भी न था । “आखिर बात क्या है बेटी ?”

श्रीमती रमा चुप रहीं ।

“यह राव कौन है ? उसने हमें घर से जाने के लिए ऐसे कहा जैसे हम उसके ताबेदार हों । सुना है चौधरी भी यही चाहता है ।”

श्रीमती रमा चौधरी पिता के कन्धे पर सिर रख जोर-जोर से रोने लगीं ।

“आखिर बात क्या है बेटी ?”

“नहीं, ...पिताजी, ...नहीं ।” श्रीमती रमा चौधरी सिसकती जाती थीं । “आइए-आइए, हम चलें, हम यहाँ नहीं रह सकते ।”

“क्यों ?”

“चौधरी साहब और मेरा सम्बन्ध अब सदा के लिए टूट गया है ।” वे रोती जाती थीं । उनको रोती देख उनके पिता और प्रश्न पूछकर उनको रुलाना न चाहते थे ।

“अब चौधरी के पास धरा ही क्या है ? सिवाय कर्ज के दो पैसे की सम्पत्ति भी नहीं है । तुम्हारा भला क्या पाजन-पोषण करेगा ? सूखे शहद के छत्ते के पास चींटियाँ भी नहीं आती हैं । कोई बात नहीं है बेटी !” उनके पिता ने आश्वासन दिलाया ।

श्रीमती रमा चौधरी रोती-रोती अपने कमरे में गईं । अपना जरूरी सामान बँधवाने लगीं । जेवर-जवाहरात कभी के बिक चुके थे । दो-चार सौ रुपये जरूर पास थे, वे भी डगन के थे । कपड़े और इत्र की बोतलें सन्दूक में रख लीं ।

वे रोती-रोती कुत्तों के पास गईं, एक-एक को प्यार से थपथपाया । आँसू उनकी आँखों से बहते जाते थे । वे यकायक कुत्तों को छोड़कर कार की ओर बिना पीछे देखे चल दीं । कार में माँ-बाप पहले ही बैठे हुए थे ।

जब कार फाटक के पास पहुँची तो श्रीमती रमा चौधरी की आँखें फिर अपने बंगले की ओर गईं । आसुओं के कारण वह धुँधला दिखाई दे रहा था । वे और जोर से रोने लगीं ।

उनका जीवन उस आलीशान बंगले की तरह था जो सम्पन्नता में

उनके सुख और सम्पत्ति का प्रतीक था... अब वह कर्ज के नीचे दबा जा रहा था। जीवन में उन्होंने वे अठखेलियाँ खेली थीं जो कम औरतें ही खेल पाती हैं। अब वे वार्धक्य के भार के नीचे कराह रही थीं। श्री डगन की मूर्ति उनके सामने आई। वे माँ के आँचल से आँखों को रगड़ने लगीं। फिर नवयुवक चौधरी का चित्र उनकी स्मृति में आया। वे मचल उठीं। ज़िन्दगी की एक-एक घटना, चक्र की तरह घूमने लगी। जीवन के कई अध्याय खुले और समाप्त हो गए। हर अध्याय की अपनी विशेषता थी। श्रीमती रमा चौधरी के नैतिक मानदण्ड भिन्न थे। वे जीवन को नदी का प्रवाह समझती थीं, जो उल्टा नहीं बह सकता था। फिर भी आज उन्हें स्मृतियाँ सता रही थीं। वे एक जीवन से विदा ले रही थीं, और न जाने किस जीवन में प्रवेश कर रही थीं। वे ज्ञात से अज्ञात की ओर जा रही थीं। वे रोती जाती थीं।

कार जब मद्रास सेण्ट्रल स्टेशन के पास पहुँची तो उन्होंने आँसू पोंछे, अपने को सँभाला, वे तनकर बैठ गईं और सिगरेट सुलगाकर पीने लगीं। नारी-सुलभ दुर्बलता को वे प्रदर्शित न करना चाहती थीं।

गाड़ी के छूटने में समय था। परन्तु सेकण्ड क्लास में जगह न थी। बचपन में कभी थर्ड क्लास में सफ़र किया था, पर असें से थर्ड क्लास नौकरों का दर्जा हो चुका था। इसलिए वे फ़र्स्ट क्लास में जा बैठीं। माँ साथ थीं, पिता और कहीं बैठ गए।

ज्योंही डिब्बे में घुसीं कि उनको श्रीमती कालिन्दी अपने परिवार के साथ बैठी हुई दिखाई दीं। वे बच्चों को खिला-पिला रही थीं। बच्चे हँसमुख और सन्तुष्ट नज़र आते थे। कभी-कभी वे मुस्कराकर पति की ओर भी देखती जाती थीं। उनकी हर हरकत में पारिवारिक सुख प्रतिबिम्बित होता था।

श्रीमती रमा चौधरी को देखते ही उन्होंने पूछा, “क्यों रमा, बंगलौर आ रही हो?”

श्रीमती रमा चौधरी ने मुस्कराने का प्रयत्न किया, पर मुस्करा

न पाईं ।

“आज दोपहर से तुम्हारे घर फोन करती रही, पर हमेशा हमें यह बताया गया कि तुम बाहर हो.....बहुत व्यस्त मालूम होती हो ।”

“हूँ,” श्रीमती रमा चौधरी और कुछ न कह पाईं ।

“इनका तबादला मद्रास होने वाला है । हम मकान देखने आ गए थे । बच्चों ने भी आने की जिद्द की, वे भी चले आए ।”

“हूँ,” श्रीमती रमा चौधरी की हालत उस बेलून की तरह थी, जिसमें हवा बहुत भर दी गई हो और वह फूटने को तैयार हो ।

“हम तो अब मद्रास आ ही रहे हैं । तुमसे मिलने का मौका मिलेगा ही । बच्चों का मामला है, वक्त नहीं मिलता है । अगर मैं अक्सर न भी आई तो तुम तो आ जाया करना ।” श्रीमती कालिन्दी मुस्कराईं ।

“हूँ,” श्रीमती रमा चौधरी का चेहरा बिल्कुल पीला पड़ गया था । श्रीमती कालिन्दी ने गौर से देखकर पूछा, “तबियत खराब है क्या ?”

“हाँ-हाँ, बेटी, सो जाओ, बिस्तर बिछा दिया है ।” श्रीमती रमा की माँ ने कहा ।

वे बिस्तर पर लेट गईं । मुँह पर उन्होंने चादर ओढ़ ली । श्रीमती कालिन्दी को देखकर एक बार सोचा—क्या ही अच्छा होता, अगर मैं भी बाल-बच्चों वाली होती ? उनके मन में दुःख के साथ ईर्ष्या दहक उठी । वे सिसकने लगीं ।

गाड़ी हिली । मद्रास शहर दूर छूटता जाता था । श्रीमती रमा भी साँप की तरह अपनी एक केंचुली छोड़ती जा रही थीं । गाड़ी चलती जाती थी और श्रीमती रमा होंठ पींचकर सिसकती-सिसकती आँखें मूँदे पड़ा थीं ।

जब श्री राव और श्री चौधरी घूम-घामकर घर पहुँचे तो रात के

दस बज रहे थे। श्री चौधरी की हालत कुछ सुधर गई थी। वे उस ज्वालामुखी की तरह थे जो एक क्षण के लिए फूट पड़ा हो और फिर सहसा शान्त हो गया हो।

श्री राव के घर में अभी तक किसीको कुछ न मालूम था, पर श्री चौधरी का यकायक आना उन्हें सन्देहास्पद लगा। यद्यपि श्री राव श्री चौधरी के अच्छे मित्र थे और निकट सम्बन्धी थे, पर वे उनके घर आते-जाते न थे।

श्री चौधरी ने श्री राव से कई बार अपने घर छोड़ आने के लिए कहा, पर राव न माने। उन्होंने दूध के साथ उनको सोने की दवा भी दे दी। खा-पीकर श्री चौधरी श्री राव के अतिथि-शयनकक्ष में लेटे हुए थे। पास ही में राव रेडियो सुनते हुए बैठे थे। रह-रहकर वे घड़ी देख लेते थे।

एक बार उन्होंने श्री डगन को जाकर फोन भी किया, पर वे घर में न थे। उन्हें कुछ हौसला हुआ।

पौने ग्यारह के करीब श्री राव के कमरे में फोन की घण्टी बजी। श्री डगन का फोन था। वे हवाई जहाज से बम्बई रवाना हो रहे थे। श्री राव ने गहरी साँस ली। फिर उन्होंने चौधरी के घर फोन किया। श्रीमती रमा शाम को बंगलौर जा चुकी थीं, यह नौकरों ने बताया।

फोन रखकर श्री राव कोई पुराना गीत गुनगुनाने लगे और श्री चौधरी नींद में नाक बजा रहे थे।

: १६ :

सवेरे-सवेरे श्री चौधरी के पिता श्री राव के घर आ पहुँचे। उनके साथ उनकी पत्नी भी थीं। दोनों विह्वल थे।

तब श्री चौधरी सो रहे थे। दवा की नींद थी। श्री राव से वे बातचीत करने लगे।

“बेटा, तुमने बहुत अच्छा काम किया कि उसे रात में यहीं सुला

दिया, वरना न जाने वह क्या कर देता ?” श्री चौधरी के पिताजी ने कहा ।

“और किया भी क्या जा सकता था?” श्री राव ने पूछा ।

“पर हमें तो अफसोस इस बात का है कि यह इतनी देर बाद जगा । बजारू औरत थी, भटकना तो उसका काम था । हम शुरू से कहते रहे, पर इसने एक न सुनी । अब खुद जान गया है । सभ्यता-सभ्यता कहता फिरता है । क्या सभ्यता का मतलब यही है कि पत्नी को बिकते देखो और माँ-बाप का दिल दुखाते रहो ? खैर, अब अक्ल आ गई है, यही काफी है ।”

“वह बेचारा भी क्या करता ? जवानी की खुमारी में न जाने लोग क्या-क्या करते हैं । आपको भी उसकी हालत समझनी चाहिए ।”

“हूँ, अब वह कहाँ है ?”

“वह अब भी सो रहा है । उसके घर से रमा के माँ-बाप वगैरह सब चले गये हैं । खाली पड़ा है ।”

“भगवान् को सौ-सौ धन्यवाद ! बला तो टली ।”

“जब से घर में आई है घर का सत्यानाश हो रहा है ।” श्री चौधरी की माँ ने कहा ।

“पर मारने-वारने से क्या फायदा ? फिज़ूल की मुकद्दमेबाज़ी, सिर-दर्द । कुल्टा का भटकना भी कोई ग़ैर-मामूली बात है ?”

“पर यह जानता कब था कि वह कुल्टा थी ?” श्री राव ने कहा ।

“अगर कान और आँख मूँद लें तो हर कोई पतिव्रता ही नज़र आती है ।”

“फिर भी आदमी का स्वभाव कुछ ऐसा है कि हर स्वाभिमानी व्यक्ति वही करेगा जो चौधरी ने किया ।”

“हूँ, शायद तुम ठीक कहते हो । अगर मुझ पर बीतती तो मैं शायद उसकी बोटी-बोटी नुचवा देता, पर आजकल तो दुनिया बदल रही है । खैर, तुमने अच्छा ही किया कि उसे रोक दिया । पर मेरे दिल

में तो अब भी आता है कि उसको गोली से उड़ा दूँ ।”

“आप तो पुराने ज़माने के ठहरे ।”

“खैर ।” श्री चौधरी के पिता ने अपनी पत्नी को चौधरी को जगाने के लिए भेज दिया । फिर कहने लगे, “हमने भाई, जवानी में कई औरतों को देखा है । पर उनको उतनी ही दूर रखा जितना रखना चाहिए था पत्नी बनाने का पागलपन हमें कभी सवार नहीं हुआ । हमारे ज़माने में भी मुहब्बत और वफ़ादारी थी । पर इसका मतलब यह तो नहीं कि हर पालतू कुतिया के साथ वफ़ादारी बरती जाय ।”

श्री चौधरी के पिता अब निश्चिन्त लगते थे—निवृत्त-से, इसलिए खुलकर बातचीत करते जाते थे । राव उनका नज़दीकी रिश्तेदार था । श्री चौधरी के पिता गम्भीर प्रकृति के ज़रूर थे, पर रसिक प्रवृत्ति के भी थे । जब अपने वर्ग का कोई उन्हें मिल जाता तो मजे में बातचीत करते थे । राव को वे छुटपन से जानते थे ।

“मैंने उसको घर बुलाया । उस कम्बख्त स्त्री ने आने से इनकार कर दिया । मैंने इसको भेजा, पर न कोई चिट्ठी, न खबर । मैं हैरान । ज़ाहिर था कि इसको भी उसने मना कर दिया था । मैं तभी जान गया कि इसके इरादे कुछ खराब हैं । खैर, सवेरे-सवेरे ही उसका नाम क्यों लिया जाय ?” श्री चौधरी के पिता ने कहा ।

“आप ठीक कहते हैं चाचा !”

“क्या अब यह घर जाने के लिए तैयार है ?”

“हाँ-हाँ, यहाँ इसको क्या काम है ? आप जहाँ चाहें ले जाइए ।”

“सुना है यहाँ बहुत कर्ज कर रखा है । उस औरत की बदौलत कर्ज नहीं तो और क्या होगा ?”

“कोई लाख-डेढ़ लाख का है ।”

“लाख-डेढ़ लाख ?”

“हाँ ।”

“खैर, देखा जायगा ।”

“अब इसे आप गाँव ले ही जा रहे हैं। मद्रास में मकान की क्या ज़रूरत है ?”

“हूँ-हूँ, ज़रूरत तो नहीं लगती।”

“उसे बिकवाइयेगा ?”

“पर वह तो गिरवी पर है।”

“तो क्या हुआ ? आपको ऐसे खरीदार भी मिल जायेंगे जो गिरवी के पैसे देकर बाकी रकम आपको दे देंगे।”

“उस मनहूस घर को रखकर भी हम क्या करेंगे ?”

“घर तो अच्छा है।”

“बेटा, घर की कीमत घरवाली पर होती है। जब घरवाली ही बेवफ़ा निकली तो घर मनहूस नहीं तो क्या होगा ?”

“पर आप देखेंगे कि उस मनहूस घर को खरीदने के लिए कितने ही जुगत लगाए बैठे हैं। आलीशान बंगला है। किसी चीज़ की कमी नहीं।”

“लाख-डेढ़ लाख का भी तो है।”

“हाँ, यह बात तो ठीक है।”

“तो बेटा, तुम ऐसा करो कि मकान को बिकवा दो। जो कुछ पैसा मिले, इसका कर्ज़ चुका देना। बाकी जो होगा सो हम देख लेंगे। उस औरत की इस आखिरी निशानी को भी खतम करो।”

“अच्छा, जैसी आपकी मर्जी।”

श्री चौधरी के पिता बाहर जाने की कोशिश करने लगे।

“आप जा कहाँ रहे हैं ? आइए, नहाइए-धोइए। अभी आये और अभी जाने की भी सोच रहे हैं।”

“मैं सोचता हूँ, जितनी जल्दी इसे घर ले जाऊँ उतना ही अच्छा है। न जाने यह क्या खतरनाक काम कर बैठे। मद्रास है, पाँच-दस को मालूम होगा, पूछने-ताछने आयेंगे। फिजूल इसका मन दुखेगा।”

“पर कम-से-कम कुछ खा-पी तो लीजिए।”

“अब भी क्या वह सो रहा है ?”

“हाँ ।”

“अच्छा, तो सोने दो । मैं भी ज़रा गुसलखाने में हो आऊँ ।”

बहुत देर तक श्री चौधरी पिता के सामने आये ही नहीं । वे शर-माते रहे । किसी-न-किसी बहाने वे उनकी नज़र बचाते रहे । माँ ने बहुत समझाया । आखिर जब हिम्मत बाँधकर पिताजी के पास गये, तो उनकी बगल में चुप मूर्तिवत् बैठ गए । वही चेहरा, जिसने कभी कुछ न बताया था, आज भी मूक था—निष्प्राण-सा ।

“कोई बात नहीं, बेटा ! यह तो हुआ ही करता है । जो होना था सो हो गया ।”

“जो कुछ होता है भले के लिए होता है ।” माँ ने कहा ।

श्री चौधरी मुँह फेरकर उठने का उपक्रम करने लगे ।

“कोई बात नहीं । कर्ज बाद में देखा जायगा । बेफिक्र रहो ।” श्री चौधरी यकायक वहाँ से उठकर चल दिए ।

“मैं घर जा रहा हूँ । आप भी वहीं आ जाना ।”

“हम भी चल रहे हैं ।” श्री चौधरी के माँ-बाप ने एक साथ ही कहा ।

बाहर कार खड़ी थी । राव से विदा होकर वे चल दिए ।

श्री चौधरी सीधे अपने कमरे में गये । न नौकरों को देखा, न किसी को । उनके लिए किसीका अस्तित्व ही न था । संसार शून्य-सा लगता था । ऐसा मालूम होता था कि उनके हृदय से कोई भाग निकल गया हो और रिक्तता पैदा हो गई हो । पर कहीं सन्तोष भी था—ठीक वैसा ही जैसे कि सांप के काटे हुए अंग को काट देने में किसीको होता है । अंग कट जाता है, पर ज़िन्दगी बच जाती है ।

उनके माँ-बाप बैठक में प्रतीक्षा करते रहे । पर जब काफी देर

तक श्री चौधरी न आये तो उनको सन्देह होने लगा । वे कुछ-का-कुछ सोचने लगे । वे जल्दी-जल्दी ऊपर श्री चौधरी के कमरे में गये । कमरा अन्दर से बन्द था । उनका भय और बढ़ा । वे किवाड़ खटखटाने लगे । कुछ देर तक किवाड़ न खुले । उनके भय की हद न रही । वे और जोर से किवाड़ खटखटाने लगे ।

आखिर श्री चौधरी ने किवाड़ खोले । वे कोई चिट्ठी लिख रहे थे । मेज पर पिस्तौल रखी हुई थी । उनकी हरकत से ऐसा मालूम होता था मानों इस द्विविधा में पड़े हों कि आत्महत्या करें...या । चिट्ठी में लिखा हुआ था—“मुझे इस संसार से विरक्ति हो गई है ।...में...” इतना ही वे लिख पाए थे । वे आत्महत्या न कर पाए थे । हो सकता है कि हिंसा की तुच्छता भी उनको स्पष्ट हो गई हो ।

श्री चौधरी के पिता ने चिट्ठी ली और अपनी जेब में रख ली । उनकी आँखों में आँसू आ गए । माँ भी सिसकने लगीं । उन दोनों को रोते देख श्री चौधरी भी फूट-फूटकर रोने लगे ।

श्री चौधरी सम्भ्रान्त व्यक्ति थे, सुसंस्कृत । वे खुद दर्द सह लेते थे, पर किसीको दर्द होता देख वे पिघल जाते थे । वे जिस परिवार में पले थे, वहाँ औपचारिकता थी, ठाठ-बाट थे, आडम्बर था, पर सहानुभूति और स्नेह कम था । इसलिए जब कभी सहानुभूति उन्हें मिलती वे सहसा एक दूसरे व्यक्ति बन जाते । शिशु की तरह वे आल्लादित हो जाते । खानदानी अमीरी ऐसी पथरीली क्यारी है जिसमें स्नेह और सहानुभूति अच्छी तरह अंकुरित नहीं हो पाते ।

परिवार के सब सदस्य अपनी-अपनी जगह बैठे काफी देर तक सिसकते रहे । कोई एक-दूसरे से बातचीत न कर पाया । मुँह पर कई बातें आती, पर होंठ बन्द रहते और आँसू अपने निरन्तर मूक प्रवाह में वाचाल जिह्वा का काम करते जाते । आखिर पिता ने हिम्मत बाँधकर कहा, “खैर, चलो अब चलें ।” वे इससे अधिक कह न पाए । वे कमरे से बाहर चले गए और चौधरी का सामान कार में रखवाने लगे ।

माँ अन्दर श्री चौधरी के पास बैठी रहीं ।

जब सब तैयार हो गया, श्री चौधरी को उनके पिता हाथ पकड़कर ले गए और कार में बैठा दिया । चारों ओर घर के नौकर हाथ जोड़कर खड़े थे ।

“मैं फिर सात-आठ दिन में आऊँगा । घर में ताला लगाकर राव को भिजवा देना ।” श्री चौधरी के पिता ने अंजया से कहा । अंजया श्री चौधरी का निजी नौकर था । पीढ़ी-दर-पीढ़ी उसके घरवाले श्री चौधरी के घर में काम करते आए थे । वह भी आँसू बहा रहा था ।

कार चली । श्री चौधरी आगे देखते जाते थे । जब कार फाटक से निकली वे अपने बंगले को देखने का आकर्षण संवरण न कर सके, तिरछी नज़र से उन्होंने बंगले की तरफ़ देखा और यकायक आँखों पर रुमाल डालकर हिचकियाँ भरने लगे ।

वह आलीशान बंगला, जिसमें उनका यौवन पल्लवित हुआ था, आज शुष्क वृक्ष की तरह प्रतीत हो रहा था—एक कड़वी स्मृति की तरह, मधुर स्वप्न के भयंकर अवशेष की तरह ।

श्री चौधरी उस नदी के समान थे जो कूदती-फाँदती आई और एक सुन्दर गन्दे पानी की भील में अपना अस्तित्व खो बैठी, और फिर भील से किसी दूसरे रूप में न जाने कहाँ बह चली हो ।

आगे !

: १ :

श्रीमती रमा के बंगले के पास एक उपनगरी बन गई थी। छोटे-छोटे आधुनिक मकान। उनमें निम्न-मध्यम वर्ग के लोग रहा करते थे। मछुओं की बस्ती समुद्र के किनारे और दूर बस गई थी।

अब्राहम ने श्रीमती रमा का आलीशान बंगला खरीद लिया था। वहाँ वह लता के साथ रहा करता था। परन्तु बंगले में श्रीमती रमा के जमाने की रीनक न थी। आने-जाने वाले भी कम थे। श्री अब्राहम किसीको निमन्त्रित करने में हिचकते थे। लता उनकी पत्नी न थी, रखैल थी। यही कारण था।

श्री डगन ब्राजील न गये। कुछ दिनों के लिए वे यूरोप का भ्रमण करने सपरिवार गये, फिर यथापूर्व बम्बई में आ बसे। उन्होंने मद्रास में अपना कारोबार बन्द कर दिया था।

श्रीमती रमा बंगलौर में माँ-बाप के साथ रहा करतीं। यह भी कुछ दिनों सुनने में आया कि वे किसी नवयुवक सैनिक अधिकारी से मिल-जुलकर रहा करती थीं। साथ-साथ नाच-गाने में अक्सर शामिल होते थे। उनके बारे में कितनी ही अफवाहें उड़ी हुई थीं।

जॉर्ज अब भी पहले की तरह श्रीमती रमा के आस-पास परवाने की तरह मँडराता रहता था। घर में प्रायः आता-जाता रहता। श्रीमती रमा भी उससे खूब खुलकर बातें करती थीं। उनमें न बचपन का निरीहपन था, न यौवन की शायद लोलुपता.....एक 'शिष्टता' थी,

जिसकी सीमाओं को आवश्यकता ने विस्तृत कर दिया था ।

बहुत दिन तक श्री चौधरी के बारे में किसीको कुछ पता न लगा, पर सुना जाता है कि वे एकदम बदल गए थे । उन्होंने सम्भवतः रमा को माफ भी कर दिया था, पर रमा से उनकी कोई चिट्ठी-पत्री हुई हो ऐसी बात नहीं । वे अपनी जिम्मेवारी अब भी निभा रहे थे । उनकी तरफ से हर माह श्रीमती रमा को तीन सौ रुपया भेज दिया जाता था । यह श्री चौधरी की उदारता ही थी । वे किसी अदालत के फैसले से बाधित न थे ।

श्री चौधरी स्वयं पंगु-से हो गए थे । वे न जीना चाहते थे, न जीवन से उनका कोई आकर्षण ही था । पूजा-पाठ व अध्ययन में अपना समय बिताते । वे उस मशाल की तरह थे जो बुझ गई हो, पर धुआँ अब भी छोड़ रही हो ।

